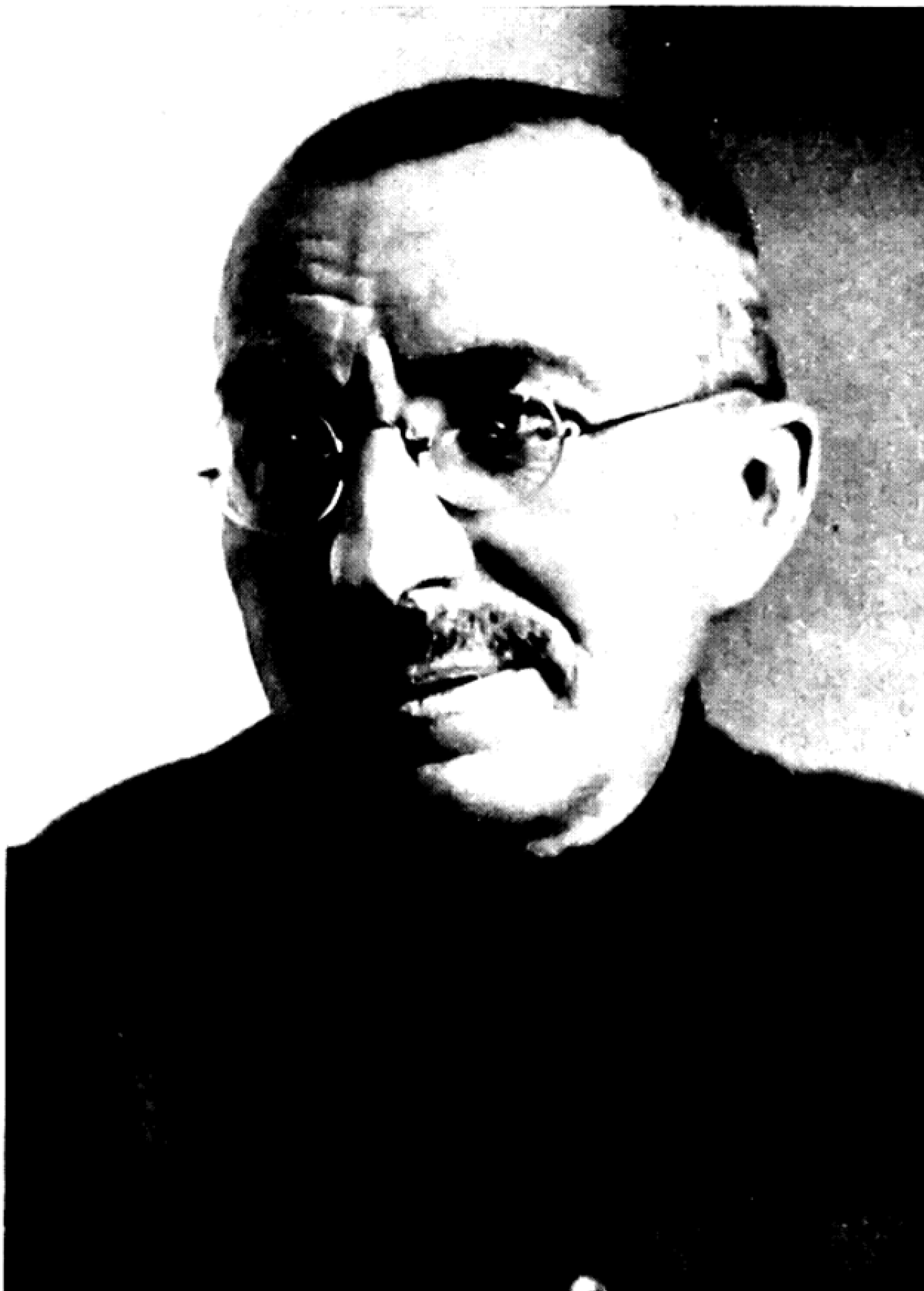


अ॰ से॰ माकारेंको

सोवियत स्कूली शिक्षा की समस्याएं

प्रगति प्रकाशन
मास्को

संकलनकर्त्ता, टिप्पणीकार और भूमिका के लेखक – व० अरान्स्की तथा अ० पिस्कुनोव, शिक्षाशास्त्र के कैंडीडेट

अनुवादक : राजवल्लभ ओझा

А. С. Макаренко

ПРОБЛЕМЫ ШКОЛЬНОГО
СОВЕТСКОГО ВОСПИТАНИЯ

На языке хинди

अनुक्रम

अ० से० माकारेंको – एक प्रमुख सोवियत शिक्षाशास्त्री

प्रत्येक ऐतिहासिक युग में ऐसे शिक्षक रहे हैं, जिनकी व्यावहारिक क्रियाशीलता और सैद्धांतिक विचारों ने शिक्षाशास्त्र और शिक्षण-प्रणाली को बहुत प्रभावित किया।

चेक यान कोमेन्स्की और अंग्रेज़ जॉन लाक (१७ वीं सदी), फ़ांसीसी जान जाक रूसो (१८ वीं सदी), स्विस जोहान पेस्तालोज्ज़ी (१८ वीं सदी का अन्त और १६ वीं सदी की शुरुआत), जर्मन योहान्न हरबर्ट तथा फ़ेडरिक डाइस्टेरवेग और रूसी क० उशीन्स्की (१६ वीं सदी) द्वारा प्रतिपादित शिक्षाशास्त्र-सम्बन्धी अनेक सिद्धान्त विश्व शिक्षाशास्त्रीय चिन्तन-निधि में बहुमूल्य योगदान है। दशाब्दियों और यहां तक कि सदियों के दौरान इन प्रमुख शिक्षकों और चिन्तकों के विचारों ने शिक्षा के सिद्धान्त और व्यवहार के विकास को बहुत हद तक निर्धारित किया है।

बीसवीं सदी के मध्य में क्रियाशील सोवियत शिक्षक, सिद्धान्तकार और लेखक अन्तोन माकारेंको की शिक्षाशास्त्रीय देन वही भूमिका अदा कर रही है।

इस अनूठे व्यक्ति की ख्याति, जिन्होंने सोवियत शिक्षाशास्त्र और कम्युनिस्ट शिक्षा-प्रणाली को बहुत ही विकसित किया है, केवल सोवियत संघ में ही नहीं, बल्कि इसकी सीमाओं से बाहर दूर-दूर तक फैली हुई है। विश्व के विभिन्न भागों में माकारेंको के शिक्षा-सम्बन्धी उपन्यास "जीवन की ओर" और "कैसे जीएं" बहुत ही दिलचस्पी के साथ पढ़े जाते हैं।

माकारेंको की कृति "सोवियत स्कूली शिक्षा की समस्याएं" बहुत अर्से से सोवियत शिक्षकों की बाइबिल रही है, जो उनके विशद शिक्षाशास्त्रीय

ग्रनुभव का सामान्यीकरण है ग्रौर जिसमें गहन सैद्धान्तिक निष्कर्षों का उल्लेख है। १६३८ की जनवरी में रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतंत्र की शिक्षा की जन-कमिसारियत के स्टाफ़ के लाभार्थ माकारेंको द्वारा दिये गये व्याख्यानों का यह संग्रह है।

"वच्चों की शिक्षा पर व्याख्यान" ग्रौर "मां-वाप ग्रौर वच्चे" उनकी पुस्तकें सोवियत घरेलू शिक्षा के सम्वन्ध में ग्रपने ढंग के एकमात्र ग्रंथ हैं।

माकारेंको के शिक्षाशास्त्रीय विचार शिक्षा के वारे में मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षण पर ग्राधारित हैं। उन्होंने इस शिक्षण में निहित विचारों को गोर्की श्रम कोलोनी ग्रौर द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून दोनों में व्यावहारिक रूप प्रदान किया।

इस समय केवल सोवियत संघ में नहीं, वल्कि पोलैण्ड, जर्मन जनवादी जनतंत्र, चेकोस्लोवाकिया, वुलगारिया, रूमानिया, हंगरी, मंगोलिया ग्रौर ग्रन्य देशों में उनका ग्रनुभव रचनात्मक दृष्टि से लागू किया जा रहा है। विश्व भर में प्रगतिशील शिक्षक शिक्षा के वारे में उनकी पुस्तकें ग्रभिरुचि के साथ पढ़ते हैं।

*

१३ मार्च, १८८८ को ख़ार्कोव गुबेर्निया के बेलोपोल्ये नामक नगर में एक मज़दूर परिवार में ग्रन्तोन सेम्योनोविच माकारेंको का जन्म हुग्रा। उनके पिता रेलवे वर्कशाप में रंगसाज़ थे ग्रौर यद्यपि उनकी ग्रार्थिक स्थिति कठिन थी, परन्तु फिर भी उन्होंने नगर के छः वर्ष की पढ़ाई वाले स्कूल में बेटे की शिक्षा ग्रौर उसके वाद उसी स्कूल में एक साल के लिये शिक्षक प्रशिक्षण कोर्स के ग्रध्ययन पर होनेवाला ख़र्च वर्दाश्त किया।

प्रथम रूसी क्रान्ति के ही साल १६०५ में उन्होंने क्रेमेन्चूग (उक्रइना) के एक उपनगर क्रूकोव के स्कूल में पढ़ाना शुरू किया। वह रूसी ग्रौर ड्राइंग पढ़ाते थे। इस युवा शिक्षक ने ग्रपने ग्रध्यापन-कार्य के पहले ही वर्ष स्कूल ग्रौर परिवार के बीच घनिष्ठ सम्वन्ध स्थापित करने तथा स्कूल के काम को शिक्षा देने की बंधी-बंधाई परम्परागत सीमाग्रों से वाहर ले जाने की कोशिशें कीं।

१६०५–१६०७ के तूफ़ानी क्रान्तिकारी वर्षों में माकारेंको ने स्कूल की इमारत में रेल मज़दूरों को ग्रपनी राजनीतिक सभाएं करने में सहायता

पहुंचाई, रेलवे के स्कूलों में पढ़ानेवाले शिक्षकों की कांग्रेस की तैयारी और संचालन में सक्रिय भाग लिया और बोल्शेविकों द्वारा प्रकाशित अधिकांश राजनीतिक साहित्य का अध्ययन किया।

१९११ में माकारेंको को उक्रइना में क्रिवोय रोग से क़रीब १०० किलोमीटर दूर दोलीन्स्काया स्टेशन के प्राइमरी स्कूल में पढ़ाने का काम मिला। उन्होंने यहां संगठन-सम्बन्धी अपनी प्रतिभा और भी अच्छी तरह प्रकट की: उन्होंने पढ़ाई के अतिरिक्त यहां विद्यार्थियों के लिए विविध प्रकार के कार्यकलाप शुरू किए, वह उन्हें पर्यटन के लिए मास्को, सेन्ट पीटर्सबर्ग, सेवास्तोपोल और दूसरे नगर ले जाते, यह समझाया करते कि अवकाश के समय उन्हें क्या पढ़ना चाहिए और उन्हें इसके लिए प्रोत्साहन प्रदान किया करते थे, नाटक, मनोविनोद आदि सम्बन्धी विविध कार्यक्रमों का आयोजन किया करते थे, अपने ख़ाली समय, विशेष रूप से गर्मी की छुट्टियों का उपयोग आत्मविकास, पठन-पाठन, चित्रांकन और संगीत के अध्ययन के लिए करते थे।

१९१४ के पतझड़ में ६ वर्षों का शिक्षण-अनुभव प्राप्त कर माकारेंको पोल्तावा के शिक्षाशास्त्रीय संस्थान में प्रविष्ट हुए। उन्होंने शिक्षाशास्त्र का गहन स्वाध्याय किया और कविताएं तथा कहानियां लिखने का भी अभ्यास किया। १९१७ में उन्होंने ससम्मान स्नातक की उपाधि प्राप्त की और क्रूकोव के उसी स्कूल में पढ़ाने चले गए, जहां उन्होंने बारह वर्ष पहले शिक्षक का काम शुरू किया था।

महान अक्तूबर समाजवादी क्रान्ति के बाद माकारेंको की शिक्षक-सम्बन्धी असाधारण प्रतिभा पूरे रूप में विकसित हुई। सार्वजनिक शिक्षा विभाग ने उन्हें एक ऐसे स्कूल का इनचार्ज बनाया, जिसमें क़रीब एक हज़ार विद्यार्थी पढ़ते थे। नये शिक्षाशास्त्र को सर्वप्रथम अपनानेवालों में माकारेंको भी एक थे, उन्होंने पुराने स्कूल को मेहनतकश लोगों के सोवियत स्कूल में परिवर्तित करने के आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया और व्यावहारिक दृष्टि से कई नये तरीक़े लागू किये। विद्यार्थियों को पूर्ण रूप से संहत समूह में एकजुट करने के उद्देश्य से उनको टोलियों में विभक्त कर उन्होंने सर्वप्रथम उनके काम को संगठित करने का प्रयास किया। माकारेंको ने बड़ी सफलता के साथ विविध प्रकार के पाठ्य, विषयेतर कार्यकलाप शुरू किए। शौक़िया नाटक-सम्बन्धी कार्यक्रम इन में से एक था: उन्होंने स्वयं नाट्याभिनय किए

ग्रौर इस कार्य की ग्रोर शिक्षकों तथा विद्यार्थियों को ग्राकृष्ट किया। उन्होंने मज़दूरों की निरक्षरता दूर करने के लिए संध्याकालीन कक्षा भी शुरू की।

किन्तु, माकारेंको क्रूकोव के स्कूल में ग्रधिक समय तक ग्रपना वहुमुखी कार्यकलाप चालू नहीं रख पाये। एक साल वाद गृहयुद्ध फैल जाने के कारण वह पोल्तावा जाने को विवश हो गए, जहां १९१९ के सितम्वर से १९२० के जून तक वह एक नये सोवियत स्कूल को क़ायम करने में संलग्न रहे।

१९२० में मास्को में हुई कोम्सोमोल की तीसरी ग्रखिल-रूसी कांग्रेस में लेनिन ने युवक संघों के कार्यभार के सम्वन्ध में भाषण किया। माकारेंको, उनके सहयोगियों ग्रौर सामान्यतया सभी सोवियत शिक्षकों ने सोवियत शिक्षा ग्रौर कम्युनिस्ट निर्माण के बीच ग्रटूट सम्वन्ध, समाजवादी निर्माण में मानवजाति द्वारा संचित उत्कृष्ट ग्रनुभव के उपयोग की ग्रावश्यकता ग्रौर कम्युनिस्ट नैतिकता को समझाने के उपायों ग्रौर तरीक़ों के वारे में लेनिन द्वारा निर्धारित प्रस्थापनाग्रों को सोवियत राज्य में कम्युनिस्ट शिक्षा के एक कार्यक्रम के रूप में ग्रपनाया।

१९२० के पतझड़ में सार्वजनिक शिक्षा विभाग ने माकारेंको को पोल्तावा के निकट ग्रनाथ वच्चों ग्रौर किशोर ग्रपराधियों के लिये एक श्रम कोलोनी क़ायम करने का काम सौंपा।

१९२१ से गोर्की श्रम कोलोनी के नाम से पुकारी जानेवाली यह कोलोनी कुछ ही वर्षों में एक ग्रसाधारण शैक्षिक संस्था के रूप में विकसित हो गई, जिसके ग्रनुभव ने ग्रागे वर्षों तक शिक्षकों ग्रौर पढ़ानेवालों का ध्यान ग्राकृष्ट किया।

माकारेंको ने ग्रपने व्यावहारिक कार्यकलाप के दौरान यहीं नये लोगों, समाजवादी समाज के नागरिकों को शिक्षित करने की ग्रपनी प्रणाली विकसित की। गोर्की श्रम कोलोनी में ग्रर्जित ग्रपने ग्रनुभव से उन्हें दृढ़ विश्वास हो गया कि सर्वाधिक प्रभावकारी शिक्षाप्रद शक्ति सामाजिक दृष्टि से उपयोगी उत्पादनकारी श्रम है।

उस समय खेती ग्रौर शिल्प तक सीमित इस कोलोनी के रहनेवालों का उत्पादनकारी श्रम नियमित सामान्य विकास, राजनीतिक, शारीरिक ग्रौर सौन्दर्य-बोध शिक्षा से संश्लिष्ट था। मूलतः उपयोगी उद्देश्य से शुरू किया गया श्रम शीघ्र ही सम्पूर्ण शैक्षणिक प्रणाली ग्रौर कोलोनी के मुख्य कार्यकलाप का ग्राधार वन गया।

१६२७ में खार्कोव के छोर पर बच्चों के महान शुभचिन्तक फ़ेलिक्स दज़ेर्जीन्स्की * की स्मृति में अनाथ बच्चों और किशोरों के लिए एक कम्यून स्थापित किया गया। अन्तोन माकारेंको से इस कम्यून की देखरेख के लिए अनुरोध किया गया।

उन्होंने वहां आठ साल काम किया, और इस अवधि के दौरान उनकी प्रणाली को व्यावहारिक रूप से लागू करने के फलस्वरूप, जिसे वह स्वयं शालीनतावश साधारण सोवियत शिक्षा प्रणाली कहते थे, दज़ेर्जीन्स्की कम्यून एक संहत समूह के साथ एक आदर्श शैक्षिक संस्था में विकसित हो गया।

गोर्की श्रम कोलोनी की भांति यहां भी उत्पादनकारी श्रम पर ज़ोर दिया गया, जिसका पहले के अपराधियों पर बहुत ही अनुकूल प्रभाव पड़ा। सर्वप्रथम उन्होंने स्कूल की कर्मशालाओं में काम किया, जो नियमित रूप से निर्धारित योजना के अनुसार व्यवस्थित औद्योगिक कारखानों की भांति संचालित होती थीं।

उत्पादनकारी श्रम के प्रति इस गंभीर दृष्टिकोण को अपना लेने के फलस्वरूप कम्यून आर्थिक रूप में पूर्णतया स्वावलम्बी बन गया और धन को बचाने से अन्ततः वह अपनी दो फ़ैक्टरियां – एक विद्युत ड्रिल तथा दूसरी फ़ोटो कैमरा तैयार करनेवाली – निर्मित करने में समर्थ हो गया। इस समय 'फ़ेद' (फ़ेलिक्स एद्मुन्दोविच दज़ेर्जीन्स्की) ट्रेडमार्क से युक्त इन कैमरों की ख्याति सारी दुनिया में है।

किन्तु यह सोचना बड़ी भूल होगी कि माकारेंको ने इस कार्य को संगठित करने में केवल आर्थिक उद्देश्यों को अपनी दृष्टि में रखा था। उनकी शिक्षा-प्रणाली का सैद्धान्तिक और विचारधारात्मक आधार शारीरिक, मानसिक, नैतिक और सौन्दर्य-बोध शिक्षा के तालमेल के बारे में तथा सुसंगत रूप से विकसित लोगों की शिक्षा के एक मात्र साधन के रूप में आधुनिक उद्योग में उत्पादनकारी श्रम के साथ स्कूल की शिक्षा के समन्वय के बारे में मार्क्सवादी सिद्धान्त था। इससे स्पष्ट हो जाता है कि माकारेंको

---

* अखिल-रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के अन्तर्गत बच्चों के जीवन को सुधारने के लिये नियुक्त कमीशन के अध्यक्ष की हैसियत से फ़ेलिक्स दज़ेर्जीन्स्की ने परित्यक्त बच्चों तथा किशोर-अपराधियों की दशा को सुधारने के लिये प्रभावकारी क़दम उठाये और सामान्यतया बच्चों के कल्याण में अपना काफ़ी समय लगाया।

ने क्यों अपने विद्यार्थियों के लिए विद्युत ड्रिल तथा फ़ोटो कैमरा के उत्पादनों जैसे जटिल काम को चुना।

विद्यार्थियों को कई औद्योगिक कौशल की उत्कृष्ट शिक्षा प्रदान करने के साथ ही सामान्य शिक्षा देना वस्तुत: पॉलीटेकनिक शिक्षा के मार्क्सवादी सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप प्रदान करना था। इसलिए माकारेंको को अपने लेख 'शिक्षकों का ऊहापोह' (१९३२) में यह कहने का पूरा अधिकार था कि द्जेर्जीन्स्की कम्यून में उन्हें इस बात का ज्ञान नहीं था कि शारीरिक और मानसिक काम में कोई अन्तर है। १९३० में द्जेर्जीन्स्की कम्यून में स्थापित खार्कोव मशीन-निर्माण संस्थान के प्रारम्भिक संकाय में लड़कों और लड़कियों को उच्च शैक्षिक संस्थाओं में दाखिले के लिए प्रशिक्षित किया जाता था। सामान्य विषयों की अच्छी शिक्षा प्राप्त करने के अलावा ये भावी छात्रगण बहुत ही कुशल मज़दूरों की योग्यता भी प्राप्त करते थे।

आधुनिक जटिल उद्यम की उत्पादन प्रक्रियाओं, कार्य-व्यवस्था और प्रबन्ध में प्रत्यक्ष भाग लेना बहुत ही अच्छे चरित्र-निर्माण का प्रभावशाली कारक था और इससे युवाजनों में ऐसे गुणों, जैसे अनुशासन, संकल्पशक्ति, धैर्य, सामूहिकतावाद एवं दायित्व की भावना, मार्ग-निर्देशन तथा आज्ञा-पालन की योग्यता का विकास होता था और हाथ से परिश्रम करने के प्रति उन में सम्मान की भावना पैदा होती थी।

लड़के-लड़कियां दोनों प्रति दिन पांच घंटे उत्पादन-सम्बन्धी काम करते थे और चार घंटे स्कूल में पढ़ते थे। काम और स्कूल में पढ़ाई आदि के कुशल नियोजन के फलस्वरूप अन्य कार्यों के लिए उन्हें काफ़ी समय मिलता, जिससे उनके शारीरिक विकास तथा सांस्कृतिक शिक्षा की प्रगति में सहायता प्राप्त होती थी। कम्यून में कला और विशिष्ट रुचि-सम्बन्धी क़रीब बीस स्थायी मण्डलियां थीं: नाटक, चित्रकला, नृत्यकला, कसरत, साहित्यिक, ग्लाइडर मॉडेल निर्माण और अन्य मण्डलियां।

ग़ैर-स्कूली विभिन्न प्रकार के शैक्षिक कार्यों में वार्षिक पर्यटन का कार्यक्रम भी शामिल था और इन यात्राओं में विद्यार्थी अपने देश के भूगोल और अर्थव्यवस्था का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करते थे। इस ज्ञान से अपनी मातृभूमि के प्रति उन में देशभक्ति और गौरव की भावना बढ़ती थी। उन्हें ले जाकर प्रमुख उद्यमों को दिखाया जाता था, वे सर्वोत्कृष्ट मज़दूरों से मिलते थे और स्वयं काम में भाग लेते थे। यह कहने की कोई आवश्यकता

नहीं है कि इन ग्रीष्मकालीन लम्बी यात्राओं से ये किशोर अधिक दृढ़, कुशल और स्वस्थ हो जाते थे।

द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून के अनुभव ने उस समय सोवियत संघ आनेवाले अनेक विदेशी प्रतिनिधि-मण्डलों का ध्यान आकृष्ट किया।

इस कम्यून के क़ायम होने के शुरू के पांच वर्षों में क़रीब तीस देशों के १२७ प्रतिनिधि-मण्डलों ने इसे आकर देखा, जिन में जर्मनी के ३७, फ़्रांस के १६, ग्रेट ब्रिटेन के १७, दक्षिण अमरीका के ११ और अमरीका के ८ प्रतिनिधि-मण्डल शामिल थे। इन सभी प्रतिनिधि-मण्डलों ने आगंतुक-पंजी में अपनी सराहना व्यक्त की।

एक विख्यात फ़्रांसीसी राजनीतिज्ञ ए० हेरिओत ने १९३२ के अन्त में द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून को देखने के बाद लिखा: "मैं भावाभिभूत हो गया हूं... आज मैंने वास्तविक चमत्कार देखा और यदि मैंने इसे अपनी आंखों से न देखा होता, तो कभी भी इस में यक़ीन नहीं करता।"

१९३५ की गर्मी में माकारेंको उक्रइनी सोवियत समाजवादी जनतन्त्र के आन्तरिक मामलों की जन-कमिसारियत के श्रम कोलोनी विभाग के सहायक निदेशक नियुक्त हुए। यद्यपि वह १९३७ तक सरकारी तौर पर द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून के प्रधान बने रहे, परन्तु वह अब इस ओर अपना पूरा ध्यान देने में असमर्थ थे।

१९३७ की जनवरी के अन्त में माकारेंको मास्को चले गए, जहां वह स्थायी रूप से रहने लगे और उन्होंने अपना सारा समय लेखन-कार्य में लगाया।

उनकी प्रथम महान साहित्यिक कृति "१९३० का अभियान" (१९३२) नामक शब्दचित्रों का संग्रह है, जिस में उन्होंने कम्यून का वर्णन प्रस्तुत किया है। मक्सिम गोर्की द्वारा प्रोत्साहित और उनसे सहायता पाकर उन्होंने "जीवन की ओर" (१९३३–१९३५) नामक अपना विख्यात उपन्यास प्रकाशित किया, जिससे वह तत्काल उस समय के सर्वोत्कृष्ट लेखकों की कोटि में आ गए। उपन्यास के रूप में लिखित इस पुस्तक में गोर्की श्रम कोलोनी में उस समय किए गये बृहत शैक्षिक कार्य से बहुत ही आकर्षक रूप में आम नतीजे निकाले गये हैं।

१९३७ में माकारेंको ने "मां-बाप और बच्चे" नामक कृति प्रकाशित की। इस ग्रन्थ की लोकप्रियता का अनुमान इसी बात से लगाया

जा सकता है कि इसके दस संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं और आज भी सोवियत संघ तथा दूसरे देशों में यह पुस्तक व्यापक रूप से पढ़ी जाती है।

माकारेंको ने शिक्षा की समस्याओं पर अनेक लेख, पुस्तकों की समालोचनाएं, सिनेमा के लिए नाटक और कहानियां लिखीं।

उनकी अन्तिम महान कृति "कैसे जीएं" नामक उपन्यास है, जिसमें द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून का वर्णन प्रस्तुत किया गया है। यह उनकी प्रथम पुस्तक "जीवन की ओर" से घनिष्ठ रूप में सम्बद्ध है, क्योंकि कम्यून का केन्द्र-बिंदु गोर्की श्रम कोलोनी के भूतपूर्व विद्यार्थियों का वह समूह था, जो माकारेंको के साथ चला आया था।

उन्होंने अपने निजी अनुभव, कम्युनिस्ट शिक्षा और सामान्यतया सोवियत शिक्षाशास्त्र पर शिक्षकों तथा विद्यार्थियों के मां-बाप के सामने दिये गये भाषणों और अपने साहित्यिक काम में मेल बैठा दिया है।

परन्तु मास्को में उनका उपयोगी तथा बहुत ही बहुमुखी कार्यकलाप शीघ्र ही समाप्त हो गया। वैज्ञानिक दृष्टि से प्रमाणित "कम्युनिस्ट शिक्षा-प्रणाली" नामक अपनी जिस पुस्तक को प्रकाशित करने का वह जीवन भर सपना देखा करते थे, उसे पूरा करने के पहले ही १ अप्रैल, १९३९ को माकारेंको का असामयिक देहावसान हो गया।

•

माकारेंको ने कम्युनिस्ट शिक्षा के अपने सिद्धान्त को व्यावहारिक रूप प्रदान किया। उनकी प्रणाली में सोवियत शिक्षण के विकास के अनुभव को सामान्य नियमों में परिणत किया गया है और सोवियत संघ में कम्युनिस्ट निर्माण की अवधि में इसके आगे और विकास की संभावनाओं के लिए व्यवस्था की गई है।

केवल स्कूल के काम तक सीमित न रहकर बच्चों तथा किशोरों के जीवन एवं कार्यकलाप के सभी पहलुओं को समाविष्ट कर शिक्षा की सक्रिय और उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया उनकी प्रणाली की मुख्य विशिष्टता है।

जैसा कि माकारेंको ने सर्वथा उचित ही अपना दृढ़ विचार प्रकट किया है कि विद्यार्थियों पर ठोस प्रभाव डालनेवाले विविध प्रकार के सभी साधनों पर शिक्षा-व्यवस्था का नियंत्रण क़ायम होना चाहिए, उसे उन पर पड़नेवाले किसी भी संभावित अनिष्टकारी प्रभाव को दूर करने में पर्याप्त रूप से सक्षम

होना चाहिए। दूसरे शब्दों में कक्षा तक शिक्षा सीमित नहीं रहनी चाहिए, उसे पारिवारिक वातावरण और मित्र-मण्डली दोनों में विद्यार्थी के व्यवहार को नियंत्रित करते हुए उसके सम्पूर्ण जीवन को प्रभावित करना चाहिए।

माकारेंको के सारे व्यावहारिक कार्य की भांति उनकी सैद्धान्तिक प्रस्थापनाएं समाजवादी मानवतावाद, मनुष्य में अगाध विश्वास और बच्चों तथा युवकों के प्रति स्नेह की भावना से परिपूरित हैं। उनके शिक्षाशास्त्र का बुनियादी सिद्धान्त सदा से इस नियम का पालन करना रहा है कि व्यक्ति से अधिक-से-अधिक कठोर अपेक्षा की जाये और उसके साथ बहुत ही सम्मानपूर्ण व्यवहार किया जाये।

इस सिद्धान्त का अनुसरण करते हुए माकारेंको ने किशोर अपराधियों, परित्यक्तों और उन बच्चों को सुधारने के अपने काम में अपूर्व नतीजे हासिल किए, जिनकी शिक्षा की उपेक्षा की गई थी। उन्होंने इस पर भी ज़ोर दिया कि "न सुधरनेवाले बच्चे नहीं होते।"

अपने शैक्षिक लक्ष्यों को निर्धारित करने में वह कम्युनिस्ट शिक्षा के सम्बन्ध में मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्त के आधार पर आगे बढ़े, जिसमें व्यक्ति के सर्वतोमुखी विकास की व्यवस्था है। माकारेंको ने कहा, "मेरी दृष्टि से शिक्षा का अभिप्राय है मानवीय व्यक्तित्व का कार्यक्रम, मानवीय चरित्र का कार्यक्रम और मैं 'चरित्र' की धारणा में उन सभी गुणों को शामिल करता हूं, जो व्यक्तित्व की विशिष्टता है।"

इस सामान्य फ़ार्मूला की व्याख्या करते हुए उन्होंने लिखा: "हम सुसंस्कृत सोवियत मज़दूर को शिक्षित करना चाहते हैं। अतः इसका तात्पर्य यह है कि हमें उसे शिक्षा देनी चाहिए, यदि संभव हो, तो माध्यमिक शिक्षा प्रदान करनी चाहिए, हमें उसे शिल्पिक शिक्षा देनी चाहिए, हमें उसे अनुशासन सिखाना चाहिए और उसे राजनीतिक दृष्टि से विकसित तथा मज़दूर वर्ग, कोम्सोमोल और बोल्शेविक पार्टी का निष्ठावान सदस्य बनाना चाहिए। उसे एक साथी की आज्ञा पाने और एक साथी को आदेश देने का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। उसे परिस्थितियों के अनुकूल शिष्ट, कठोर, दयालु और निर्मम होना चाहिए। उसे सक्रिय संगठक होना चाहिए। उसमें सहनशीलता, आत्मनियंत्रण और दूसरों को प्रभावित करने की योग्यता होनी चाहिए; यदि समूह से उसे दण्ड मिले, तो उसे समूह का सम्मान करना चाहिए, उसके निर्णय को स्वीकार करना चाहिए और सज़ा भोगनी चाहिए।

उसे हंसमुख, सजीव देखने में चुस्त, संघर्ष और निर्माण करने में सक्षम, जीने तथा जीवन से प्यार करने में समर्थ होना चाहिए और ख़ुश रहना चाहिए। और केवल भविष्य में नहीं, बल्कि अभी ही, अपने जीवन में सदैव उसे इसी प्रकार का व्यक्ति होना चाहिए।"

माकारेंको ने ऐसे गुणों जैसे दृढ़ता, उद्देश्यपूर्णता, परिस्थिति के बारे में तत्काल अनुमान लगाने की योग्यता, कार्य-क्षमता और ईमानदारी को विकसित करने के महत्त्व पर ज़ोर दिया। विशेष रूप से उन्होंने धैर्य और लम्बे वक़्त की कठिनाइयों पर विजय पाने की योग्यता विकसित करने की आवश्यकता की ओर संकेत किया। उन्होंने लिखा, "क्या करना है, इस सम्बन्ध में आप चाहे जितने भी सही विचार बना लें, परन्तु यदि आप बच्चों में लम्बी अवधि की कठिनाइयों पर क़ाबू पाने की प्रवृति नहीं पैदा करते, तो इसका अर्थ है कि आपने उसे कुछ भी शिक्षा नहीं दी होगी।"

माकारेंको ने अपनी शिक्षण-प्रणाली में उत्पादनकारी श्रम, सामूहिकता और व्यक्तित्व को सर्वाधिक महत्त्व प्रदान किया। सोवियत शिक्षा का अभिप्राय यथार्थतः समष्टिवादी शिक्षा समझते हुए, उन्होंने यह विचार प्रतिपादित किया कि इसे संगठित करने का तरीक़ा सुदृढ़, प्रभावकारी समूहों को क़ायम करना है। स्कूल इसी प्रकार का समूह है—प्रधानाध्यापक के नेतृत्व और निर्देशन में विद्यार्थियों और शिक्षकों का समुदाय।

माकारेंको ने उस शिक्षण-प्रणाली को अस्वीकार किया, जिससे विद्यार्थी पर शिक्षक के प्रत्यक्ष प्रभाव तक शिक्षा सीमित हो जाती है। फिर भी समुदाय के आदर्शानुरूप गठन, सुदृढ़ीकरण और सतत विकास के लिए अपनी अनवरत चिन्ता में उन्होंने एक पृथक् बच्चे के विकास की ओर से अपनी आंख ओझल नहीं की और सदा व्यक्ति को शिक्षित बनाने के महत्त्व पर ज़ोर दिया।

उन्होंने बुनियादी तौर पर व्यष्टि और समष्टि के बीच सम्बन्धों के नये दृष्टिकोण पर आधारित व्यक्तिगत शिक्षा की नई और मौलिक प्रणाली निर्धारित की। गोर्की श्रम कोलोनी और द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून के अपने अनुभवों का विश्लेषण करते हुए माकारेंको इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि समुदाय और व्यक्ति के बीच संबंध प्रत्यक्ष सम्पर्क द्वारा नहीं, बल्कि शैक्षिक उद्देश्यों के लिए विशेष रूप से गठित (टोलियां, टीम, कक्षा) तथाकथित प्रारम्भिक समूह के ज़रिए स्थापित सम्पर्क द्वारा क़ायम होना चाहिए।

प्रारम्भिक समूह की यह शिक्षा शिक्षाशास्त्र के विकास में एक प्रभावकारी अगला क़दम है। शिक्षक इसके उचित प्रयोग की प्रभावी शैक्षिक शक्ति अनुभव कर सकता है।

प्रारम्भिक समूह क्या है? माकारेंको की परिभाषा के अनुसार "यह लगातार एक-दूसरे के साथ मिलने-जुलनेवाले और काम, दोस्ती, सामुदायिक हितों और वैचारिकी में संयुक्त लोगों का समूह है।"

उनके अनुभव के अनुसार प्रारम्भिक समूह – इस अवस्था में एक टोली – ने व्यक्ति को प्रभावित करने में बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की। गोर्की श्रम कोलोनी और द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में आत्मनियमन-सम्बन्धी निकायों (उदाहरणार्थ, आम सभा, कमांडरों की परिषद् और कोम्सोमोल संगठन) का मुख्यतः प्रारम्भिक समूह के साथ ही सम्बन्ध था। प्रारम्भिक समूह से ही विशिष्ट अपेक्षाएं की जाती थीं और अपने प्रत्येक सदस्य के लिए वही ज़िम्मेदार था।

आचरण-सम्बन्धी आदर्शों का किसी भी रूप में उल्लंघन करनेवाले अपने सदस्यों के प्रति प्रारम्भिक समूह काफ़ी सख़्ती बरतता था। इस सामूहिक प्रभाव का ठोस शैक्षिक नतीजा हासिल हुआ। और माकारेंको ने "समानान्तर शिक्षाशास्त्रीय क्रिया" के इसी सिद्धान्त पर अपने शैक्षिक काम को आधारित किया।

उन्होंने जिस दूसरी महत्त्वपूर्ण बात पर ज़ोर दिया, वह यह थी कि प्रारम्भिक समूह को अपने संकीर्ण स्वार्थों के दायरे में बन्द नहीं होने देना चाहिए। इस प्रकार के अलगाव का ख़तरा असम्भव नहीं है। एक ही टीम में काम करनेवाले, एक ही कक्षा में पढ़नेवाले अथवा विशेष रुचि-सम्बन्धी एक ही मण्डली में शामिल होनेवाले लड़के-लड़कियों के स्पष्टतः अपने ख़ास हित होते हैं, जो अन्य प्रारम्भिक समूहों के हितों से भिन्न हो सकते हैं। इन निजी हितों के साथ ग्रस्तता के कारण स्कूल समुदाय का विघटन हो सकता है, सामान्य लक्ष्य विफल हो सकता है और सामुदायिक उत्साह क्षीण हो सकता है।

प्रारम्भिक समुदाय को बहुत महत्त्व प्रदान करते हुए माकारेंको ने संकेत किया कि एक सच्चा समष्टिवादी अन्य बड़े समुदायों से सम्बद्ध एक बड़े समुदाय में ही विकसित हो सकता है। जब बच्चों, किशोरों और तरुणों का पूरा समुदाय अपने को सोवियत समाज का अंग समझने लगे, तभी वास्तविक सोवियत शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त हो सकता है।

माकारेंको द्वारा प्रस्तुत यह प्रस्थापना सोवियत शिक्षा प्रणाली का सूत्र है। प्रत्येक शिक्षक, प्रत्येक ज्ञानप्रदाता का अपने व्यावहारिक कार्यकलाप में इससे मार्ग-निर्देशन होता है।

बच्चों का समुदाय किस प्रकार क़ायम होना चाहिए, इस प्रश्न पर विस्तार के साथ अपने विचार प्रकट करते हुए माकारेंको ने संकेत किया कि सही ढंग से समुदाय को संगठित करने और क्रियाशीलता के लिए इसे अभिप्रेरित करने के लिए "सामूहिक आन्दोलन के नियम" का पालन करना एक बुनियादी सिद्धान्त है: एक समुदाय का अपना निर्धारित लक्ष्य होना चाहिए, जिसे प्राप्त करने के लिए प्रयास अपेक्षित हैं। विशेष रूप से संगठित सामूहिक प्रयासों द्वारा प्राप्त होनेवाले अधिकाधिक जटिल लक्ष्यों की प्रणाली में सभी विद्यार्थियों को शामिल करना समुदाय के विकास के लिए, इसे एकजुट करने और शैक्षिक कारक बनाने के लिए अनिवार्य शर्त है।

समष्टि की मार्क्सवादी धारणा के आधार पर अपना कार्य करते हुए माकारेंको ने अपने विद्यार्थियों को समूह के हितों और उद्देश्यों से अपने निजी हितों और आकांक्षाओं का सामंजस्य स्थापित करने की शिक्षा दी।

उनके दृष्टिकोण से सोवियत समाज की अवस्थाओं में उनके बीच कोई अन्तर नहीं हो सकता: सामुदायिक उद्देश्यों से ही निजी उद्देश्य प्रादुर्भूत होने चाहिए। वह सदैव कहा करते थे कि यदि सामूहिक उद्देश्यों द्वारा एक बाल समुदाय के निजी उद्देश्य निर्धारित नहीं होते, तो विशेष समुदाय ग़लत ढंग पर संगठित है और उस में दी गई शिक्षा "वास्तविक सोवियत शिक्षा" नहीं कही जा सकती।

माकारेंको ने ऐसे प्रश्नों जैसे बाल समुदाय की जीवन-शैली और वातावरण पर बहुत अधिक ध्यान दिया।

जीवन-शैली और वातावरण ऐसे बाहरी लक्षण हैं, जिनसे समुदाय की क्रियाशीलता अभिव्यक्त होती है और उसके अधिकांश सदस्यों द्वारा कम्युनिस्ट नैतिकता के आदर्शों का पालन करना प्रकट होता है।

एक विद्यार्थी को सौंपे गए किसी काम के लिए उसकी वास्तविक तथा गंभीर ज़िम्मेदारी की अभिव्यक्ति और आत्मनियंत्रण, आत्मसम्मान की रक्षा करने और परिस्थितियां चाहे जैसी भी हों, इसे क़ायम रखने की उसकी योग्यता यह है जीवन-शैली।

माकारेंको कहा करते थे कि सोवियत बाल समुदाय की जीवन-शैली की विशिष्टता आनन्दपूर्ण वातावरण, चुस्ती और क्षण भर की सूचना पर कारंवाई के लिए तत्परता से अभिव्यक्त होनी चाहिए। आलंकारिक ढंग से माकारेंको ने इन सभी विशिष्टताओं के निचोड़ को "उल्लासपूर्ण भावना" कहा, उन्होंने अपने भविष्य में समुदाय के अटल विश्वास के संकेत के रूप में इस अवस्था को माना।

इस मनोवृत्ति को प्रोत्साहन प्रदान करने की हिमायत करते हुए माकारेंको ने इसके साथ ही इसे आवश्यक बताया कि बच्चों को मनोवेग को नियंत्रित करने, आत्मनियंत्रण को व्यवहार में लाने की शिक्षा देनी चाहिए और उन्हें सुसंस्कृत आचरण के आदर्शों का उल्लंघन न करने अथवा निश्चित नियमों को न तोड़ने का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। उन्होंने यह विचार प्रकट करते हुए कि बच्चों को अपने मनोवेग तथा आवाज़ को नियंत्रित करने की शिक्षा प्रदान करनी चाहिए, असंतुलित व्यवहार की कड़े शब्दों में निन्दा की।

उन्होंने समुदाय के विकास को सुसाध्य बनानेवाले शैक्षिक साधनों में बच्चों की क्रियाशीलता में भावप्रवण साधनों और विशेष रूप से खेल की भूमिका को बहुत महत्त्व प्रदान किया। वह कहा करते थे कि "बच्चों के समुदाय में सुनिश्चित रूप से खेलों की व्यवस्था होनी चाहिए। बच्चों का जो समुदाय नहीं खेलता, मनोरंजन नहीं करता, वह कभी भी वास्तविक बाल समुदाय नहीं होगा। इससे समुदाय को उल्लसित, उत्साहपूर्ण मुद्रा में रखने में सहायता मिलती है और बच्चे सदैव कुछ उपयोगी, कुछ दिलचस्प तथा विवेकपूर्ण काम करने को तत्पर रहते हैं।"

सर्वप्रथम समुदाय में एकता की सुदृढ़ भावना पैदा करने के साधन के रूप में माकारेंको ने अच्छी परम्पराओं को माना। उनका मत था कि जब तक समान लक्ष्यों का अनुसरण करनेवाला घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध समुदाय न होगा, ऐसा समुदाय जिसकी परख समय की कसौटी पर हो चुकी हो और जिसने कुछ सराहनीय परम्पराएं क़ायम की हों, तब तक वास्तविक सोवियत शिक्षा अमल में नहीं लायी जा सकती। उन्होंने अच्छी स्कूली परम्पराओं के विकास और उनके प्रतिपालन को सर्वोच्च शैक्षिक महत्त्व का काम समझा।

वह स्थिति के अनुकूल एक साथी का आदेश मानने और उसे आदेश देने में एक विद्यार्थी की योग्यता को सामूहिक रूप से शिक्षित एक व्यक्ति की बहुमूल्य विशेषता मानते थे। इस सम्बन्ध में एक प्रवर्तक के रूप में उनका अनुभव हमारे लिए बहुत ही बहुमूल्य प्रतीत होता है : गोर्की श्रम कोलोनी और द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून दोनों में पारस्परिक उपाश्रितता और पारस्परिक निर्भरता पर आधारित सम्बन्धों की मिली-जुली प्रणाली को अस्तित्व में लाने में उन्हें सफलता मिली, जो ऐसे दृढ़ संकल्प के, अनुशासित व्यक्तियों को विकसित करने में उपयोगी सिद्ध हुई, जो आदेश देने का और स्वीकार करने का, दोनों ही काम कर सकते थे।

पारस्परिक निर्भरता के मिश्रित सम्बन्धों को विकसित करने की विधियों की विस्तृत व्याख्या की चर्चा करते समय हमें बच्चों के आत्मनियमन-सम्बन्धी सिद्धान्त और व्यवहार में माकारेंको के महान योगदान का उल्लेख अवश्य करना चाहिए। सोवियत सत्ता की स्थापना के प्रारम्भिक काल में, जब पुराना स्कूल टूट रहा था और नये स्कूल की स्थापना हो रही थी, उस समय शिक्षक समूह को विद्यार्थियों के संगठन के ख़िलाफ़ खड़ा करके विद्यार्थियों के आत्मनियमन के प्रश्न को अक्सर ग़लत ढंग से हल किया गया। माकारेंको के अनुभव से शिक्षकों को सही हल प्राप्त करने में सहायता मिली। उन्होंने अपने सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक, दोनों कार्यों से यह सिद्ध किया कि प्रधानाध्यापक के नेतृत्व में शिक्षक समूह का एक मुख्य कर्त्तव्य बाल समुदाय और इसके आत्मशासन को संगठित करना है, जो समाज के सक्रिय और गठीले सदस्यों को प्रशिक्षित करने का एक अधिक प्रभावकारी साधन है। आत्मनियमन से विद्यार्थियों को संगठित होने की आदत विकसित करने, समुदाय में संकल्पशक्ति, चेतना और अनुशासन की भावना प्रकट करने में सहायता मिलती है। शिक्षक समूह, स्कूल के कोम्सोमोल और युवा पायनियर संगठनों द्वारा समर्थित स्वतंत्रता की भावना एवं उद्देश्य की स्पष्टता इसके लिए पूर्वापेक्षाएं हैं।

शैक्षिक कार्य को ठीक ढंग से संगठित करने के लिए शिक्षकों के संहत समुदाय का होना नितान्त आवश्यक है। माकारेंको ने बार-बार इस बात पर जोर दिया कि आदर्श के अनुरूप बाल समुदाय का गठन करने और विशेष रूप से इसके अलग-अलग सदस्यों को शिक्षित बनाने में केवल तभी सफलता प्राप्त हो सकती है, जब शिक्षकगण अलग-अलग नहीं, बल्कि समूह

के रूप में, समान विचारों तथा धारणाओं द्वारा संयुक्त सबल समुदाय के रूप में काम करें, जहां एक व्यक्ति दूसरे की सहायता करता है।

यदि हम समुदाय में शिक्षादान को माकारेंको की शिक्षा प्रणाली का मुख्य विशिष्ट लक्षण मान लें, तो महत्त्व की दृष्टि से दूसरी ख़ास बात श्रम के ज़रिए शिक्षा का उनका सिद्धान्त है। केवल संयुक्त, सामाजिक दृष्टि से उपयोगी उत्पादनकारी श्रम के ज़रिए वास्तविक सोवियत नागरिकों की शिक्षा का लक्ष्य पूरा हो सकता है। और किसी प्रकार नहीं, बल्कि संयुक्त प्रयास, समुदाय में कार्य, पारस्परिक सहायता और काम में पारस्परिक निर्भरता के ज़रिए ही लोगों के बीच उपयुक्त ढंग के सम्बन्ध क़ायम हो सकते हैं, प्रत्येक श्रमजीवी पुरुष और स्त्री से भाईचारे का सम्बन्ध और स्नेहपूर्ण मैत्री क़ायम हो सकती है और काम से जी चुरानेवाले तथा दूसरों के सहारे जीवन-यापन करनेवाले किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध ग़ुस्से और निन्दा की भावना पैदा की जा सकती है। श्रम से किशोरों को उत्पादनकारी कार्यकलाप का प्रशिक्षण प्राप्त होता है और दूसरे लोगों के प्रति सही दृष्टिकोण अपनाने का ज्ञान प्राप्त होता है। काम करने से एक व्यक्ति को अपनी निजी योग्यता में विश्वास प्राप्त होता है और श्रम से उसे बहुत परितोष तथा आनन्द प्राप्त होता है।

अपने सामाजिक महत्त्व के अलावा व्यक्तिगत अभिव्यक्ति का मुख्य रूप होने के नाते श्रम बच्चे के निजी जीवन में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

कम्युनिस्ट समाज के एक व्यक्ति के चतुर्मुखी विकास के साधन के रूप में श्रम को रचनात्मक एवं उत्पादनकारी होना चाहिए, इसे उच्च तकनीकी साज़-सामान से लैस उद्यमों में संगठित करना चाहिए और स्कूली शिक्षा के साथ समन्वित करना चाहिए। लेनिन ने इस सम्बन्ध में यही कहा था: "युवा पीढ़ी के उत्पादनकारी श्रम के साथ शिक्षा को समन्वित किये बिना आदर्श भावी समाज की परिकल्पना नहीं की जा सकती; उत्पादनकारी श्रम के बिना न तो प्रशिक्षण और शिक्षा को और न समानांतर प्रशिक्षण एवं शिक्षा के बिना उत्पादनकारी श्रम को प्रविधि और वैज्ञानिक ज्ञान के वर्तमान स्तर द्वारा अपेक्षित कोटि तक ऊंचा उठाया जा सकता।"

आधुनिक उद्योग में श्रम माकारेंको का शिक्षा-सम्बन्धी मुख्य साधन था और यही धुरी भी थी, जिसके इर्द-गिर्द उनके विद्यार्थियों का सम्पूर्ण जीवन

परिक्रमण करता था। द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में उत्पादनकारी श्रम की व्यवस्था इस प्रकार की गई थी कि इसमे लड़के-लड़कियों में इसके सामाजिक महत्त्व की चेतना पैदा हुई, यह चेतना कि उनका प्रयास सोवियत लोगों के सामान्य श्रम का ही अंग था, कि उनके प्रयासों से उनके देश की आर्थिक शक्ति को विकसित करने और समाजवाद के भौतिक एवं तकनीकी आधार के निर्माण में सहायता प्राप्त हो रही थी।

गोर्की श्रम कोलोनी और द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून के अपने अनुभव का विश्लेषण करते हुए, माकारेंको ने संकेत किया कि शिक्षा के साधन के रूप में श्रम पर सदा शैक्षिक प्रणाली के अन्य साधनों के साथ ही विचार करना चाहिए, क्योंकि "जो श्रम राजनीतिक और सामाजिक शिक्षा से संश्लिष्ट नहीं होता, वह बिना किसी शैक्षिक उपयोगिता का एक निष्क्रिय प्रक्रम मात्र बना रहता है।"

माकारेंको ने "उद्देश्यपूर्ण सिद्धान्त" को सोवियत शिक्षा का एक मुख्य सिद्धान्त माना। इसके अनुसार उन्होंने सर्वप्रथम इसकी विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की और उसके बाद बड़ी दक्षता एवं प्रभावकारिता के साथ अपनी उद्देश्यपूर्ण प्रणाली को व्यावहारिक रूप प्रदान किया। उन्होंने इस प्रणाली के सारतत्त्व की व्याख्या निम्नांकित शब्दों में की: "मनुष्य को जीने के लिए अपने आगे आनन्ददायक कोई चीज़ होनी चाहिए। मानवीय जीवन में वास्तविक स्फूर्तिप्रद कल की ख़ुशी है... मनुष्य को शिक्षित करने का अर्थ है भावी ख़ुशी प्राप्त करने की संभावना प्रस्तुत करना।" शिक्षण-सम्बन्धी तकनीक में यह एक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है, जिसे प्राप्त करने के लिए प्रयास करना है। बच्चों के समुदाय को सदैव नये लक्ष्यों को प्राप्त करने का काम सौंपना चाहिए, जिसकी उपलब्धि में यद्यपि दृढ़ प्रयास अपेक्षित है, परन्तु इससे उन्हें ख़ुशी प्राप्त होगी।

उनकी उद्देश्यपूर्ण प्रणाली का सर्वोच्च लक्ष्य बच्चों में केवल व्यक्तिगत आकांक्षाएं नहीं, बल्कि सामूहिक आकांक्षाएं पैदा करना था। उन्हें पूर्ण सजीवता के साथ अपनी मातृभूमि के भावी विकास, उसके कठिन परिश्रम और उसकी सफलताओं को अनुभव करने का ज्ञान प्रदान करना था और तब वे अपने जीवन को पूरे समाज के जीवन का अंग महसूस करेंगे और सबके सुखद भविष्य के लिए संघर्ष करेंगे। इस प्रकार सामूहिक उद्देश्य प्रत्येक विद्यार्थी के निजी उद्देश्य भी बन जायेंगे।

माकारेंको ने छात्रों को नियत कार्य सौंपने को बहुत महत्त्व प्रदान किया ग्रौर इसे मानसिक प्रशिक्षण तथा इस प्रकार का कार्यकलाप बताया, जो सामूहिक ढांचे के ग्रन्तर्गत व्यक्ति की प्रतिभा के चतुर्मुखी विकास में सहायक होता है। ये सौंपे हुए काम व्यावहारिक कार्यभार होने चाहिए ग्रौर समुदाय द्वारा जिस व्यक्ति के सुपुर्द ये काम किये जायें, उसे समुदाय के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए ग्रौर तब वह ग्रपने कार्य का मूल्यांकन भी करेगा।

माकारेंको की दृष्टि में व्यक्तिगत उपगम सामूहिक शिक्षा का ग्रभिन्न ग्रंग है। उन्होंने बार-बार इस पर जोर दिया कि समुदाय में प्रत्येक व्यक्ति को ग्रपनी प्रतिभा तथा योग्यता को पूर्ण विकसित करने के लिए उन्हें युक्तिपूर्वक एवं होशियारी से प्रोत्साहित करने का प्रयास करना है। माकारेंको ने कहा, "केवल ऐसी प्रणाली का निर्माण – एक सामान्य, एकत्र प्रणाली, जो साथ ही प्रत्येक व्यक्ति को ग्रपनी निजी गुणों को विकसित करने ग्रौर ग्रपने व्यक्तित्व को क़ायम रखने का ग्रवसर प्रदान करेगी – हमारे युग ग्रौर हमारी क्रान्ति के उपयुक्त संगठनात्मक कार्यभार होगा।" प्रत्येक बच्चा ग्रनेक प्रकार की भावनाग्रों की जटिल दुनिया को प्रस्तुत करता है। ग्रौर शिक्षक का महान ध्येय इस दुनिया को जानना, इसके विकास को विवेकपूर्ण ढंग से लक्षित करना ग्रौर महान ग्रादर्शों के लिए बहुत उत्कृष्ट बनाना है।

बच्चों ग्रौर किशोरों का चरित्र-निर्माण कैसे किया जाये, उनके विश्व-दृष्टिकोण को कैसे विकसित किया जाये ग्रौर कैसे उन्हें सर्वोत्कृष्ट नैतिक गुणों से युक्त किया जाये, इस प्रसंग में माकारेंको के ग्रनुभव से हमें ग्रपूर्व ग्रादर्श प्राप्त होता है। एक समय के जो परित्यक्त ग्रौर किशोर ग्रपराधी उनकी देखरेख में थे, उनमें से उन्होंने क़रीब तीन हज़ार नये लोगों को शिक्षित बनाया। ये लोग पूर्ण ग्रर्थ में नये थे – ईमानदार, ग्रपने समाजवादी कर्त्तव्य की उच्च भावना से युक्त निष्ठावान सोवियत देशभक्त, इच्छाशक्ति तथा पहलक़दमी के गुणों से युक्त, पर्याप्त ग्रनुशासित ग्रौर परिश्रमी।

उन्होंने ऐसे प्रश्नों जैसे ग्रनुशासन, क़ायदा, पुरस्कार ग्रौर दण्ड के प्रश्नों को स्कूली शिक्षा की ग्रन्य ग्रधिक महत्त्वपूर्ण समस्याग्रों के समकक्ष माना, जिन्हें सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली के ग्रंग के रूप में समझना चाहिए।

सबसे पहले इसका उल्लेख होना चाहिए कि माकारेंको ने एक सोवियत शिक्षाविद् के दृष्टिकोण से ग्रनुशासन की धारणा की नई व्याख्या प्रस्तुत की।

जबकि परम्परागत पूंजीवादी शिक्षण प्रणाली अनुशासन को केवल नम्रता और आज्ञापालन का साधन समझती है, वह इसे शिक्षा का नतीजा मानते हैं। उन्होंने लिखा है, "समस्त शैक्षिक प्रभावों का परिणाम अनुशासन है, जिसमें स्कूली तथा राजनीतिक शिक्षा की प्रक्रिया, चरित्र निर्माण-सम्बन्धी प्रक्रिया, समुदाय के भीतर खटपट और झगड़ों का सामना करने तथा सुलझाने की प्रक्रिया, दोस्ती क़ायम करने तथा आपसी विश्वासपूर्ण सम्बन्धों को स्थापित करने की प्रक्रिया—संक्षेप में शारीरिक शिक्षा, शारीरिक विकास आदि सहित वे सभी बातें, जो शैक्षिक प्रक्रिया के अन्तर्गत आती हैं, समाविष्ट हैं।"

माकारेंको की दृष्टि में सोवियत अनुशासन बाधाओं पर विजय पाने का अनुशासन है, संघर्ष और प्रगति का अनुशासन है, किसी बात के लिए प्रयास करने, किसी आदर्श के लिए संघर्ष करने का अनुशासन है। उन्होंने कहा, "हमारा अनुशासन कर्त्तव्य के प्रति पूर्ण चेतना और सुस्पष्ट एवं व्यवस्थाप्रिय बाह्य ढांचे को क़ायम रखते हुए, जिसमें किसी विवाद, असहमति, आपत्ति, टाल-मटोल अथवा ख़ाली बातों की कोई गुंजाइश नहीं है, कैसे काम किया जाये, इस सम्बन्ध में सबकी पूर्ण रूप से स्पष्ट, सम्मिलित समझदारी का समन्वय है।"

इस पर ज़ोर देते हुए कि समुदाय के सारे जीवन और कार्यकलाप के कुशल संगठन के द्वारा अनुशासन क़ायम होता है, उन्होंने विश्वासप्रद एवं हृदयंगमनीय तरीक़े से विद्यार्थियों को सोवियत आचरण के नियमों और नैतिक आदर्शों को समझाने की आवश्यकता की ओर संकेत किया, ताकि उनसे इन नियमों के पालन की अपेक्षा की जा सके।

उन्होंने अपने विद्यार्थियों से अपेक्षाएं रखने के बारे में शिक्षक की योग्यता को शैक्षिक कुशलता की महत्त्वपूर्ण अपेक्षा समझी। अपनी अपेक्षाएं रखने में शिक्षक को उचित ही सख़्त और दृढ़ होना चाहिये। वांछित शैक्षिक प्रभाव पैदा करने के लिये उसे अपनी दृढ़ संकल्प शक्ति, संस्कृति और व्यक्तित्व से विद्यार्थियों को प्रभावित करते हुए निश्चित, व्यावहारिक लहजे में अपनी अपेक्षाओं का उल्लेख करना चाहिये।

अपेक्षा करने के तरीक़े भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। उन अवस्थाओं में, जहां चरित्र की विशेषताएं, संयम की कमी और नैतिक आदर्शों की अनभिज्ञता हो, नरम तरीक़ा अपनाया जा सकता है, क्योंकि इन अवस्थाओं

में अनुभव का ठोस प्रभाव पड़ने और क्रमशः अच्छी आदतें अपनाने की आशा करना काफ़ी युक्तिसंगत है। परन्तु, उन अवस्थाओं में, जहां कोई व्यक्ति जानबूझकर समुदाय का विरोध करता है, इसकी अपेक्षाओं और अधिकारों का उल्लंघन करता है, ऐसी दशा में जब तक वह व्यक्ति यह स्वीकार न कर ले कि उसे समुदाय की आज्ञा माननी ही चाहिये, तब तक शिक्षक को दृढ़ अपेक्षाएं रखनी चाहिये और अन्त तक इनकी पूर्ति के लिये सचेष्ट रहना चाहिये।

अपने शैक्षिक कार्य में माकारेंको द्वारा प्रयुक्त विविध साधनों में पुरस्कार और सज़ा की व्यवस्था ने उल्लेखनीय भूमिका अदा की। उन्होंने इस विचार का प्रतिपादन किया कि व्यक्ति के अच्छे गुणों में भरोसा और विश्वास की अवस्थाओं में ही ऐसे साधन, जैसे पुरस्कार और दण्ड, वांछित शैक्षिक प्रभाव पैदा कर सकते हैं। दोनों पर अच्छी तरह विचार और केवल कभी-कभी इनका इस्तेमाल करना चाहिये। प्रत्येक स्थिति में सम्पूर्ण समुदाय और इसके प्रत्येक सदस्य की दृष्टि में इनके महत्त्व को स्पष्ट कर देना चाहिये।

उनके मतानुसार क़ायदा दैनिक जीवन की सदाचार-संहिता है, सामुदायिक कार्यकलाप में व्यवस्था क़ायम करने और तालमेल स्थापित करने का साधन है। उपयुक्त अनुशासन-सम्बन्धी अनुभव संचित करना और आचरण का सामान्य आदर्श क़ायम करना मुख्य लक्ष्य हैं, जिन्हें प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिये। सर्वोत्कृष्ट शैक्षिक प्रभाव पैदा करने के लिये सम्पूर्ण समुदाय के अनुभव पर आधारित क़ायदा उपयुक्त, सुनिश्चित और सभी सदस्यों के लिये अनिवार्य होना चाहिये।

माकारेंको ने बार-बार संकेत किया कि शैक्षिक कार्य में स्थिर, अपरिवर्तनीय ढांचा अमान्य है। उन्होंने सर्वाधिक द्वन्द्वात्मक, गतिशील, जटिल और बहुमुखी विज्ञान के रूप में शिक्षणशास्त्र की विशेषता बताई। शैक्षिक साधन परिस्थितियों के अनुरूप होने चाहिये, क्योंकि वे ही साधन एक स्थिति में अच्छे और दूसरी स्थिति में बुरे सिद्ध हो सकते हैं। शैक्षिक कार्य में किसी भी साधन को अन्य साधनों, सम्पूर्ण प्रणाली, कुल शैक्षिक प्रभावों से पृथक् सोचने पर अच्छा या बुरा नहीं समझा जा सकता।

शिक्षक का कार्य कठिन और जटिल दोनों है, क्योंकि उसे केवल सामूहिक रूप से बच्चों से ही नहीं, बल्कि अपनी-अपनी प्रवृत्तियों, विकास-

स्तर, योग्यता और व्यक्तित्व सहित अनेक विभिन्न व्यक्तियों से व्यवहार करना पड़ता है। इसलिये प्रत्येक पाठ, विद्यार्थियों से प्रत्येक मुलाक़ात, एक छात्र से एकाकी बातचीत शिक्षक के रचनात्मक काम का एक महत्त्वपूर्ण क्षण है। यहां सभी चीज़ों – बातचीत के उद्देश्य, उनकी परिस्थितियों, सामुदायिक विकास के स्तर और विद्यार्थी की निजी विशेषताओं को ध्यान में रखा जाता है।

शिक्षकों के शिक्षण-कौशल पर माकारेंको के विचार कल्याणप्रद और बहुमूल्य हैं। उन्होंने कहा कि शिक्षण-सम्बन्धी प्रवीणता किसी भी रूप में नैसर्गिक देन नहीं है, कोई भी व्यक्ति इस गुण के साथ पैदा नहीं होता, वह अध्ययन, प्रशिक्षण, अनुभव और सतत आत्मसुधार के द्वारा इसे उपलब्ध करता है। उनके मतानुसार श्रेष्ठता के अनिवार्य लक्षण इस प्रकार हैं: शीघ्र स्थितिज्ञान प्राप्त करने की क्षमता, आत्मनियंत्रण, दृढ़ विश्वास और केवल सम्पूर्ण समूह को ही नहीं, बल्कि इसके अलग-अलग सदस्य को पुरअसर तरीक़े से प्रभावित करने की योग्यता। माकारेंको ने कहा कि ट्रेनिंग कालेज में प्रशिक्षण प्राप्त करते समय ही शिक्षक को अपनी वाणी को सधा हुआ बनाने की ट्रेनिंग प्राप्त करनी चाहिये, क्योंकि शिक्षण कार्य में वाणी ही मुख्य साधन है, और ऐसे तरीक़ों, जैसे चेहरे की अभिव्यक्ति पर नियंत्रण, बालकक्षा में पढ़ाते समय इंगित एवं मुद्रा, विभिन्न स्थितियों में सम्बोधित करने के ढंग आदि को उत्कृष्ट बनाना चाहिये।

शिक्षकों के सम्मुख अपने व्याख्यान एवं भाषण देते समय माकारेंको सदा बड़ी सहृदयता और होशियारी से शिक्षक के कठोर परिश्रम और युवा पीढ़ी को जीवन-पथ पर अग्रसर करने के प्रसंग में उसकी कठिन तथा सम्मानपूर्ण भूमिका की चर्चा किया करते थे। शिक्षकों को सम्बोधित करने का उनका ढंग बहुत सहज था, उन्होंने कभी भी न तो अपने को उनसे ऊपर रखा और न उन्हें उपदेश देने के अधिकार का दावा किया। बल्कि इसके प्रतिकूल वह अपने सहयोगियों से सीखने के लिये उत्सुक रहते थे, क्योंकि उन्हें इसका पक्का विश्वास था कि उनके अनुभव में बहुत सी दिलचस्प एवं शिक्षाप्रद बातें शामिल हैं।

•

'सोवियत स्कूली शिक्षा की समस्याएं' नामक इस पुस्तक में सम्मिलित अ० से० माकारेंको के व्याख्यान शिक्षाशास्त्र के उन प्रश्नों पर इस प्रवर्तक के विचार प्रस्तुत करते हैं, जो इस समय शिक्षकों के हलक़ों को आन्दोलित किये हुए हैं। इनमें से कुछ विचार आज भी बिल्कुल सामयिक हैं, गोकि वे तीस साल पहले प्रकट किये गये थे।

शिक्षाशास्त्र के कैन्डीडेट
व० अरान्स्की और अ० पिस्कुनोव

पहला व्याख्यान

शैक्षिक विधियां

आज के हमारे व्याख्यान का विषय शिक्षा है। साथियो, केवल इसे स्मरण रखिये कि मैं एक व्यावहारिक शिक्षक हूं और इसलिये अनिवार्यतः मेरी बातें किंचित् व्यावहारिक होंगी। परन्तु वर्त्तमान युग में व्यावहारिक कार्यकर्त्ता विभिन्न विज्ञानों की प्रस्थापनाओं में कुछ अपूर्व सुधार कर रहे हैं। सोवियत संघ में ऐसे कार्यकर्त्ता को स्ताख़ानोवपंथी (तूफ़ानी मजदूर) कहते हैं। हम जानते हैं कि स्ताख़ानोवपंथियों – व्यावहारिक कार्यकर्त्ताओं ने विज्ञानों की अनेक प्रस्थापनाओं में जो हमारे विज्ञान की अपेक्षा अधिक यथार्थ हैं, कितने सुधार किये हैं और सामान्यतया श्रम उत्पादन-क्षमता, श्रम कुशलता तथा विशेष रूप से अपने काम के विशेष क्षेत्र में कितने रिकार्ड स्थापित किये हैं। केवल अधिकाधिक श्रम-शक्ति लगाने से नहीं, बल्कि काम करने के सम्बन्ध में नया दृष्टिकोण अपनाने, नई युक्ति इस्तेमाल करने और श्रम-तत्त्वों का नये ढंग से वितरण करने से उत्पादन क्षमता बढ़ रही है। इसलिये, इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि आविष्कारों, खोजों और अनुसन्धानों की सहायता से श्रम उत्पादन-क्षमता बढ़ रही हैं।

सृजन का हमारा कार्यक्षेत्र – शिक्षा का क्षेत्र – इस आम सोवियत आन्दोलन से किसी भी प्रकार अलग नहीं किया जा सकता। और हमारे क्षेत्र में भी – यह मेरा प्रगाढ़ एवं जीवन भर का विश्वास है – उसी तरह से आविष्कार आवश्यक हैं, यहां तक कि विस्तृत बातों के सम्बन्ध में, साधारण बातों के बारे में भी अनुसन्धान और अधिकांशतः शिक्षा-विधि की तफ़सीलवार बातों तथा इस प्रणाली के अंगों के सम्बन्ध में आविष्कार ज़रूरी हैं। निस्सन्देह, केवल सिद्धान्तकार ही नहीं, बल्कि मेरे समान साधारण कार्यकर्त्ता भी ऐसे अनुसन्धान कर सकते हैं। इसी कारण मैं इस बारे में संकोच किये बिना आपको अपने अनुभव और इस अनुभव से मैं

जिन निष्कर्षों पर पहुंचा हूं, उन्हें यह विश्वास करते हुए बताना चाहता हूं कि महत्त्व की दृष्टि से उन्हें व्यावहारिक कार्यकर्त्ताओं द्वारा कुछ सैद्धान्तिक उपलब्धियों में किये गए समान सुधारों के स्तर पर रखना चाहिए।

परन्तु मेरा अनुभव है ही कितना कि मैं आप लोगों को सम्बोधित करने का साहस कर रहा हूं?

बहुतों को यक़ीन है कि बाल-अपचारियों और अनाथ बच्चों को ठीक रास्ते पर लाने का मैं विशेषज्ञ हूं। यह सच नहीं है। मैंने ३२ वर्षों के अपने कार्य-काल में सोलह साल स्कूल में पढ़ाते हुए तथा सोलह वर्ष अनाथ बच्चों और किशोरों को शिक्षा देते हुए व्यतीत किए। यह सच है कि मेरे अध्यापन-काल में कुछ विशेष परिस्थितियां थीं – जिस स्कूल में मैं पढ़ाता था, उसका संचालन एक फ़ैक्टरी द्वारा होता था और वह मजदूर समुदाय, बोल्शेविकों के एक समुदाय के सतत प्रभाव में था।

और न तो अनाथों के लिए जो काम मैंने किया था, वह किसी भी रूप में परित्यक्त बालक-बालिकाओं के लिए किया गया कोई विशेष काम था। प्रथमतः, शुरू से ही मैंने इसे अपना कार्यकर प्रकल्प बनाया कि उनके मामले में विशेष तरीक़े लागू करने की कोई आवश्यकता नहीं है और दूसरे, बहुत कम समय में परित्यक्त बालक-बालिकाओं को आदर्श स्तर पर लाने में मैं सफल हो गया और उसके बाद मैं सामान्य बच्चों की भांति उनके साथ काम करने लायक़ हो गया।

ख़ार्कोव के निकट द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में अपने काम की अन्तिम अवधि में मेरे पास एक सामान्य समुदाय हो गया था, जो दससाला स्कूल में पढ़ रहा था और हमारे परम्परागत स्कूल जिन लक्ष्यों को प्राप्त करने की कोशिश करते हैं, उसी प्रकार यह समुदाय भी सामान्य उद्देश्यों को प्राप्त करने की दिशा में प्रयत्नशील था। एक समय के परित्यक्त इस समुदाय के सदस्य वस्तुतः किसी भी अर्थ में सामान्य बच्चों से भिन्न नहीं थे। मेरा ख़्याल है कि यदि वे भिन्न थे, तो वह भिन्नता उनके बेहतर विकास की द्योतक थी, क्योंकि एक बच्चे को पारिवारिक वातावरण जितना शैक्षिक प्रोत्साहन प्रदान कर सकता था, उससे अधिक प्रेरणा इस कर्मशील समुदाय के अभिनव जीवन से प्राप्त होती थी। इसलिए मेरे व्यावहारिक नतीजे

न केवल अनाथों, बिगड़े हुए बच्चों, बल्कि किसी बाल समुदाय और फलतः शिक्षा के क्षेत्र में काम करनेवाले किसी पर भी लागू किये जा सकते हैं।

भूमिका के रूप में मैं केवल इतना ही कहना चाहता हूं और मैं आपसे अनुरोध करूंगा कि आप इस पर ध्यान दें।

और अब मैं चन्द शब्द अपने व्यावहारिक, शिक्षण-सम्बन्धी तर्क के बारे में कहना चाहूंगा। मैं न तो कष्टशून्य ढंग से और न शीघ्रता से, बल्कि इसके प्रतिकूल वस्तुतः सन्तापकारी सन्देहों एवं भूलों की कई अवस्थाओं से गुजरते हुए कुछ निष्कर्षों पर पहुंचा। आप में से कुछ लोगों को ये नतीजे आश्चर्यजनक प्रतीत हो सकते हैं, परन्तु बिना किसी अनावश्यक संकोच के आपको इनके बारे में बताने के लिए मेरे पास पर्याप्त आधारी प्रमाण हैं। इनमें से कुछ निष्कर्षों का सैद्धान्तिक स्वरूप है। मैं स्वयं अपने अनुभव की चर्चा करने के पहले संक्षेप में उनका उल्लेख करूंगा।

शिक्षाशास्त्र का यथार्थ स्वरूप अपने आप में एक बहुत ही दिलचस्प प्रश्न है। वर्तमान समय के शिक्षाशास्त्रीय चिन्तकों और हमारे शिक्षण-कार्य के कुछ प्रबंधकों में भी यह धारणा बनी हुई है कि किसी भी विशेष शैक्षिक विधि की कोई आवश्यकता नहीं है; कि शिक्षण-विधि में, स्कूल के एक विषय का शिक्षण देने की प्रणाली में सम्पूर्ण शैक्षिक चिन्तन भी शामिल होना चाहिए। मैं इससे सहमत नहीं हूं। मेरा विचार है कि शिक्षाशास्त्र, मेरा अभिप्राय विशुद्ध शिक्षा से है, शिक्षण-प्रणाली से सर्वथा भिन्न एक पृथक् क्षेत्र है।

निम्नांकित बातों से मुझे दृढ़ विश्वास हो गया है कि तथ्य यही है। सोवियत संघ में न केवल नन्हे-मुन्ने एवं स्कूली बच्चे, बल्कि सभी प्रौढ़ नागरिक भी हर क़दम पर शिक्षाप्रद प्रभावों से प्रभावित हैं। वे उनसे या तो विशेष रूप से संगठित रूपों अथवा व्यापक सार्वजनिक चेतनावर्धक रूप में प्रभावित होते हैं। हमारे देश में प्रत्येक कार्य, प्रत्येक आन्दोलन, प्रत्येक प्रक्रिया, विशेष लक्ष्यों का अनुसरण करने के अलावा अनिवार्यतः शैक्षिक उद्देश्यों से भी सम्बद्ध है। इस प्रसंग में हाल में हुए सर्वोच्च सोवियत के चुनावों* को याद करना ही पर्याप्त है। यह सबसे बड़ा शैक्षिक कार्य

---

*यहां सोवियत संघ में राज्यसत्ता के सर्वोच्च अंग सर्वोच्च सोवियत के १९३७ के चुनावों की ओर संकेत किया गया है।

था, जिसमें करोड़ों-करोड़ लोग शामिल हुए, यहां तक कि वे लोग भी, जिनके बारे में यह प्रतीत होगा कि शैक्षिक कार्य से उनका कोई सम्बन्ध नहीं है, और सर्वाधिक उदासीन लोग भी आगे आ गए तथा सक्रिय काम में खिंच आये। मैं लाल सेना द्वारा अपने शैक्षिक कार्य में उपलब्ध सफलताओं पर ज़ोर देना चाहता हूं: आप अच्छी तरह जानते हैं कि लाल सेना में काम करनेवाला प्रत्येक व्यक्ति एक नये मनुष्य के रूप में घर आता है, वह न केवल नये फ़ौजी एवं राजनीतिक ज्ञान से युक्त होकर, बल्कि नये विशेष गुण, नये ढंग और नये प्रकार के आचरण से युक्त होकर घर आता है, जो लहजा, पद्धति और अन्तर्य की दृष्टि से निस्सन्देह सुनिश्चित शैक्षिक विधि द्वारा प्रस्तुत अपने आप में पूर्ण सोवियत समाजवादी शिक्षा के बृहत् प्रयासों द्वारा उपलब्ध होता है। हम इस प्रणाली का पहले से ही निष्कर्ष निकाल सकते हैं, जो सोवियत शासन के अन्तर्गत बीस वर्षों से व्यवहार में है। और यदि हम इस में अपने स्कूलों, अपने संस्थानों और दूसरे प्रकार के अपने संगठनों – किंडरगार्टनों तथा बाल सदनों – की शैक्षिक उपलब्धियों को शामिल कर लें, तो हम महसूस करेंगे कि हमने शैक्षिक कार्य में बहुत अनुभव संचित कर लिये हैं।

सच बात तो यह है कि यदि हम प्रयुक्त एवं परखे हुए, प्रमाणित तथा स्पष्टतः निर्धारित शैक्षिक साधनों के साथ ही अपनी पार्टी और कोम्सोमोल के दावों एवं प्रस्थापनाओं तथा कामरेड लेनिन द्वारा व्यक्त विचारों को ग्रहण कर लिये होते, तो अब तक हम सोवियत संघ में शैक्षिक व्यवस्था के सभी प्रमेयों और सूत्रों को एक व्यावहारिक, व्यापक आचार संहिता के रूप में संकलित करने में सक्षम हो गये होते।

मैं अपने अनुभव में शिक्षा को अपना मुख्य ध्येय बनाने के लिए विवश था। चूंकि तथाकथित बाल-अपचारियों के सुधार का काम मुझे सौंपा गया था, इसलिए मेरा मुख्य कार्य उन्हें नैतिक शिक्षा प्रदान करना था। किसी ने उन्हें किताबी ज्ञान के अर्थ में शिक्षा देने का कार्यभार मेरे सामने रखा भी नहीं। मुझे ऐसे लड़के-लड़कियों – बाल-अपचारियों अथवा भटके हुओं – को सौंपा गया, जो बहुत ही अप्रचलित एवं ख़तरनाक चारित्रिक लक्षणों से युक्त थे और सर्वोपरि मुझ से उस चरित्र को नये सांचे में ढालने की आशा की गई।

सर्वप्रथम ऐसा प्रतीत हुग्रा कि मुझे एक पृथक् विषय के रूप में उनकी नैतिक शिक्षा ग्रौर विशेष रूप से उनकी श्रम-शिक्षा पर पूरा ध्यान केन्द्रित करना होगा। मैं स्वयं ग्रधिक समय तक इस ग्रतिवादी विचार का समर्थक नहीं रहा, परन्तु द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में मेरे सहयोगियों ने बहुत समय तक इसका समर्थन किया। कुछ कम्यूनों में, यहां तक कि ग्रान्तरिक मामलों की जन-कमिसारियत के पास के कम्यूनों में भी (पुराने प्रशासन के ग्रन्तर्गत) यह प्रचलित नीति बनी रही।

इस नीति के ग्रनुसरण में ऊपर-ऊपर से स्वीकरणीय इस निश्चयात्मक कथन से सहायता प्राप्त होती थी कि स्कूल में पढ़ने के लिए जाना ग्रपने-ग्रपने पसन्द की बात होनी चाहिए: जो पढ़ना चाहते हैं, उन्हें स्कूल में जाकर शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए, ग्रौर जो नहीं चाहते, उन्हें स्कूल में दाख़िल होने की कोई ग्रावश्यकता नहीं है। वस्तुतः इसका परिणाम यह हुग्रा कि किसी ने भी पढ़ाई-लिखाई पर गंभीरतापूर्वक ध्यान नहीं दिया। ख़राब नम्बर पाने ग्रथवा कक्षा में कोई ग्रन्य ग्रप्रीतिकर बात होने पर तत्काल विद्यार्थी पढ़ाई-लिखाई छोड़ देने को स्वतंत्र हो जाता था।

मुझे इस बात का यक़ीन हो जाने में बहुत ग्रधिक समय नहीं लगा कि श्रम कोलोनी की प्रणाली में स्कूल नैतिक शिक्षा का बहुत ही प्रभावकारी साधन है। इस सिद्धान्त का समर्थन करने के कारण श्रम कोलोनी विभाग के कुछ कार्यकर्त्ताग्रों ने मेरे काम के ग्रन्तिम वर्षों में मुझे तंग किया। मैंने स्कूल में दस साल की शिक्षा को ग्रपना ग्राधार बनाया ग्रौर मुझे पूर्ण विश्वास है कि वास्तविक सुधार, पूर्ण सुधार, ग्रर्थात् फिर से किसी भी बुराई में फंसने के विरुद्ध युक्ति को केवल दस साल की स्कूली शिक्षा की सहायता से ही उपलब्ध किया जा सकता है, परन्तु ग्रभी भी, इस समय भी मेरा यह विश्वास है कि शैक्षिक विधि का ग्रपना तर्क है, जो शिक्षण-विधियों से सापेक्षिक रूप में स्वतंत्र है। मेरी दृष्टि में पहली ग्रौर दूसरी—शैक्षिक विधि एवं शिक्षण-विधि—शिक्षाशास्त्र की दो न्यूनाधिक स्वतंत्र शाखाएं हैं। यह कहने की कोई ग्रावश्यकता नहीं है कि समन्वित रूप से इन दोनों शाखाग्रों को सम्बद्ध करना है। ग्रौर यह कहना भी कोई जरूरी नहीं है कि वस्तुतः कक्षा में किया गया सभी काम शैक्षिक कार्य है। परन्तु शिक्षा को किताबी ज्ञान तक सीमित करना मैं ग्रसंगत मानता हूं। मैं ग्रागे इस विषय पर विस्तार से ग्रपने विचार प्रस्तुत करूंगा।

श्रौर श्रब मैं चन्द शब्द उस विषय में कहना चाहता हूं, जिसे शैक्षिक विधि का श्राधार समझा जा सकता है।

पहली बात यह कि मुझे पूरा यक़ीन है कि निकटवर्ती विज्ञानों द्वारा प्रस्तुत संकेतों से, चाहे इस प्रकार के विज्ञान जैसे मनोविज्ञान श्रौर प्राणिविज्ञान, श्रौर विशेष रूप से पाव्लोव* की उपलब्धियों के बाद प्राणिविज्ञान का जितना भी विकास हो चुका हो, शैक्षिक विधि विकसित नहीं हो सकती। मुझे विश्वास है कि इन विज्ञानों के निष्कर्षों से प्रत्यक्षत: शैक्षिक साधनों को प्राप्त करना कुछ ऐसी बात है, जिसे करने का हमें श्रधिकार नहीं है। हमारी व्यावहारिक उपलब्धियों के सत्यापन के लिए निर्देशक प्रस्थापनाश्रों के रूप में शैक्षिक कार्य में इन विज्ञानों को बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका श्रदा करनी चाहिए, परन्तु किसी भी प्रकार निष्कर्ष के लिए पूर्वापेक्षाश्रों के रूप में नहीं।

इसके श्रलावा, मेरा विचार है कि केवल श्रनुभव से शैक्षिक साधनों का विकास हो सकता है श्रौर उसके बाद मनोविज्ञान एवं प्राणिविज्ञान जैसे विज्ञानों द्वारा वे सत्यापित श्रौर स्वीकृत हो सकते हैं।

मेरा यह दावा निम्नांकित बातों पर श्राधारित है: शिक्षाशास्त्र श्रौर विशेष रूप से शिक्षा का सिद्धान्त सर्वोपरि रूप में व्यावहारिक उपयुक्तता का विज्ञान है। जब तक हमारी दृष्टि में सुस्पष्ट राजनीतिक ध्येय न हो, हम एक व्यक्ति को शिक्षित नहीं बना सकते। यदि हम ऐसा नहीं करते, तो हमें शैक्षिक कार्य को श्रपने हाथ में लेने का कोई श्रधिकार नहीं है। जो शैक्षिक कार्य स्पष्ट, गहरे श्रौर सूक्ष्मता से सुचिन्तित लक्ष्य का श्रनुसरण नहीं करता, वह राजनीतिक उद्देश्य से शून्य शिक्षा है श्रौर हम श्रपने सोवियत सार्वजनिक जीवन में प्रत्येक क़दम पर इसे प्रमाणित होने का सबूत पाते हैं। लाल सेना श्रपने शैक्षिक काम में महान, बहुत बड़ी सफलता प्राप्त कर रही है, जो वास्तव में विश्व इतिहास में सर्वथा उल्लेखनीय है।

---

*इवान पेत्रोविच पाव्लोव (१८४९–१९३६) प्रमुख रूसी शरीरविज्ञानी, श्रकादमीशियन श्रौर नोबेल पुरस्कार विजेता, जिन्होंने उच्च स्नायविक सक्रियता पर शिक्षण की बुनियाद डाली। उनकी मुख्य कृतियां निम्नांकित हैं: 'पशुश्रों की उच्च स्नायविक सक्रियता (श्राचरण) के बारे में बीस साल का वस्तुगत श्रध्ययन' (१९२२), 'प्रमस्तिष्क गोलार्ध की क्रिया पर व्याख्यानमाला' (१९२७)।

इस कारण इतनी महान, इतनी बड़ी सफलता है कि लाल सेना के शैक्षिक कार्य सदा उपयुक्त हैं और लाल सेना के प्रशिक्षक सदैव यह जानते हैं कि वे शिक्षा देकर किस प्रकार के लोगों को विकसित करना चाहते हैं और वे किस लक्ष्य को प्राप्त करना चाहते हैं। अब लक्ष्यहीन शिक्षाशास्त्रीय सिद्धान्त का उत्कृष्ट उदाहरण पेडोलाजी* है, जिसका हाल ही में अन्त हो गया है। इस अर्थ में पेडोलाजी सोवियत शिक्षा के बिल्कुल विपरीत है। यह प्रणाली सोद्देश्य नहीं थी।

तब शिक्षा के उद्देश्य कहां से आविर्भूत होते हैं? निस्सन्देह हमारी सामाजिक जरूरतों से, सोवियत जनता की आकांक्षाओं से, हमारी क्रान्ति के लक्ष्यों और कार्यभारों से, हमारे संघर्ष के उद्देश्यों और समस्याओं से। और इस कारण स्पष्टतः उद्देश्यों का सूत्र न तो प्राणिविज्ञान और न मनोविज्ञान से, बल्कि केवल हमारे सामाजिक इतिहास, हमारे सामाजिक वातावरण से प्राप्त हो सकता है।

और मेरा ख़याल है कि हमें प्राणिविज्ञान और मनोविज्ञान से इस प्रकार की अपेक्षाएं भी नहीं रखनी चाहिए और उनसे अपनी शैक्षिक विधि को प्रमाणित करने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए। उनका विकास हो रहा है, अगले दस वर्ष की अवधि समाप्त होने के पहले ही मनोविज्ञान और प्राणिविज्ञान दोनों ही संभवतः मानवीय आचरण के सम्बन्ध में निश्चित प्रस्थापनाएं निर्धारित करेंगे और तब हम इन विज्ञानों पर अपना कार्य आधारित कर पायेंगे। मनोविज्ञान तथा प्राणिविज्ञान के लक्ष्यों एवं निष्कर्षों के प्रति समाजवादी शिक्षा के सामाजिक लक्ष्यों, सामाजिक आवश्यकताओं की अभिवृति सतत् बदलती रहेंगी और हो सकता है कि इस परिवर्तन से हमारे शैक्षिक काम में भी मनोविज्ञान तथा प्राणिविज्ञान का सतत् भाग लेना प्रकट हो। परन्तु दृढ़ता से मुझे जिसका विश्वास है, वह यह है कि शिक्षाशास्त्रीय साधन केवल निगमनशास्त्र द्वारा न तो मनोविज्ञान और न प्राणिविज्ञान से सुलभ हो सकते हैं। मैं पहले ही कह चुका हूं कि

---

*इस सदी के तीसरे दशक के अन्त तथा चौथे दशक के मध्य में कुछ सोवियत बाल-शिक्षकों और मनोवैज्ञानिकों में पेडोलाजी-सम्बन्धी विचार वास्तव में प्रचलित हो गये थे। अ० से० माकारेंको यह विचार प्रतिपादित करते हुए कि पेडोलाजी से शिक्षण के सम्बन्ध में मार्क्सवादी सिद्धान्त के विकास में बाधा पैदा हुई है, इसके बहुत ही विरुद्ध थे।

शिक्षाशास्त्रीय साधन मूलत: अपने सामाजिक और राजनीतिक तथ्यों से प्राप्त होंगे।

यह मेरा विचार है कि लक्ष्य को निर्धारित करने के विषय में, उपयोगिता के विषय में शिक्षाशास्त्रीय सिद्धान्त मुख्यत: दोषपूर्ण था। हमारे शिक्षण-सम्बन्धी कार्यों में सभी भूलें, सभी ग़लतियां सदा उपयोगिता के तर्क के क्षेत्र में हुईं। आइए, संकेत के लिए हम उन्हें भूलें कहें।

मैं शिक्षाशास्त्रीय सिद्धान्त में इस प्रकार की तीन भूलों को अनुभव करता हूं: निगमनिक वक्तव्य, नैतिक जड़पूजा और पृथक्कृत साधन।

अपनी व्यावहारिक क्रियाशीलता में इन भूलों को दूर करने में मुझे काफ़ी कष्ट उठाने पड़े। कोई मनमाने ढंग से एक प्रणाली चुन लेगा और दावा करेगा कि इसका ऐसा-ऐसा प्रभाव होगा। उदाहरणार्थ, मिश्रित प्रणाली* की ही बात ले लीजिए, जिसे आप सभी अच्छी तरह जानते हैं। कोई एक प्रणाली की सिफ़ारिश करेगा – इस मामले में शिक्षण की मिश्रित प्रणाली और निगमन और तर्क द्वारा यह निष्कर्ष निकालेगा कि इस प्रणाली से अच्छे नतीजे हासिल होंगे।

और इस प्रकार अनुभव द्वारा ऐसा सिद्ध होने के पहले ही यह परिणाम – मिश्रित प्रणाली के अच्छे नतीजे – निश्चित हो गया। परन्तु यह मान लिया जाता था कि नतीजा निश्चय ही अच्छा होगा; कि वांछित नतीजा मानस जगत् के किन्हीं गुप्त भागों में तिरोभूत होगा।

जब हम, साधारण व्यावहारिक शिक्षक, इस अच्छे नतीजे को दिखाने की बात कहते, तो हमसे कहा जाता था: "मनुष्य के मन में जो कुछ है, उसे हम आपको कैसे दिखा सकते हैं, चूंकि यह वहां है, इसलिए वह अच्छा नतीजा होगा ही, यह मिश्रित संगति है, अंशों का जोड़ है।

---

*इस सदी के तीसरे दशक में सोवियत स्कूलों में इस प्रणाली का व्यापक रूप से प्रचलन था, जिससे विभिन्न विषयों की अध्ययन सामग्री को एक ही विषय बनाने के उद्देश्य से संयुक्त कर दिया जाता था। अनुभव से सिद्ध हुआ कि इस प्रकार की शिक्षण-प्रणाली से विद्यार्थियों को बुनियादी विज्ञानों के बारे में क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त करने का कोई अवसर नहीं प्राप्त होता था और ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यक प्रवृत्ति विकसित करने में उनके लिए बाधिक प्रमाणित हुई।

एक पाठ के पृथक् अंशों के बीच सम्बन्ध का एक व्यक्ति की मन:शक्ति पर ठोस प्रभाव पड़ेगा ही।"

दूसरे शब्दों में, तर्क से भी इस प्रणाली को अनुभव द्वारा परखने में बाधा पहुंची। और एक दुश्चक्र बन गया: प्रणाली अच्छी है, इसलिए नतीजा अच्छा होना ही चाहिए और चूंकि नतीजा अच्छा है, इसलिए प्रणाली अच्छी होगी ही।

और प्रायोगिक तर्क नहीं, बल्कि निगमनिक तर्क के प्रचलन से पैदा होनेवाली इस प्रकार की भूलें बहुत थीं।

तथाकथित नैतिक जड़पूजा के ढंग की भी बहुत-सी भूलें थीं। उदाहरणार्थ, श्रम द्वारा शिक्षा को ही ले लीजिए।

मैं भी उन लोगों में था, जिन्होंने यह ग़लती की। "श्रम" शब्द ही इतना सुखद प्रतीत होता है, यह इतना अधिक प्रभावपूर्ण और आकर्षक है कि हमारे लिए पवित्र एवं युक्तिसंगत है। श्रम द्वारा शिक्षा की धारणा हमें सर्वथा स्पष्ट, सुनिश्चित और सही प्रतीत हुई। और इसके बाद हमें ज्ञात हुआ कि "श्रम" शब्द में एकमात्र सही, परिष्कृत तर्क जैसी कोई बात निहित नहीं है। सर्वप्रथम, श्रम को साधारण काम समझा गया, जिसे आत्मसेवा कह सकते हैं, और उसके बाद इसे निरुद्देश्य श्रम प्रक्रिया के रूप में, अनुत्पादनकारी श्रम के रूप में – व्यर्थ के शारीरिक परिश्रम के रूप में माना गया। "श्रम" शब्द ने तर्क को इतना प्रदीप्त कर दिया कि यह दोषमुक्त प्रतीत हुआ, गोकि प्रत्येक क़दम पर यह प्रकट होता गया कि कोई वास्तविक दोषमुक्तता नहीं है। परन्तु स्वयं इस शब्द की नैतिक शक्ति में विश्वास इतना दृढ़ था कि तर्क भी पवित्र प्रतीत हुआ। और तब भी मेरे अनुभव तथा मेरे शिक्षक साथियों के अनुभव से सिद्ध हो गया है कि एक शब्द को नैतिक रंग प्रदान करने से कोई साधन नहीं विकसित किया जा सकता, कि शिक्षा में प्रयोजनीय श्रम भिन्न तरीक़ों से संगठित किया जा सकता है और यह कि प्रत्येक पृथक् अवस्था में इसका नतीजा भिन्न हो सकता है। किसी भी दशा में, स्कूली शिक्षा के साथ-साथ, सामाजिक और राजनीतिक शिक्षा के साथ-साथ जो श्रम नहीं किया जाता, वह शैक्षिक महत्त्व से शून्य एक निकम्मा प्रक्रम बना रहता है। आप एक व्यक्ति से जितना चाहते हैं, उतना काम करा सकते हैं, परन्तु जब तक वह इसके साथ ही राजनीतिक और नैतिक शिक्षा प्राप्त नहीं करता, जब तक वह

सार्वजनिक एवं राजनीतिक जीवन में भाग नहीं लेता, यह काम निकम्मे प्रक्रम के अतिरिक्त कुछ न होगा, जिससे कुछ ठोस नतीजे नहीं निकलते।

श्रम यदि सामान्य प्रणाली का अंग हो, तभी शिक्षा का साधन बन सकता है।

और अन्तिम, किन्तु किसी भी प्रकार नगण्य नहीं, "पृथक्कृत साधन" के ढंग की भूल है। अक्सर लोग कहते हैं कि अमुक-अमुक साधन से अचूक रूप मे फलां-फलां नतीजा हासिल होता है। यह एक विशेष साधन का प्रश्न है। आइए, हम उस दावे पर विचार करें, जो सरसरी दृष्टि डालने पर सर्वाधिक निर्विवाद प्रतीत होता है और शिक्षाशास्त्रीय पुस्तकों में जिसकी अक्सर चर्चा की जाती है – सजा का प्रश्न। दण्ड से गुलामों का सा मनोभाव विकसित होता है – यह एक ऐसा सुनिश्चित प्रमेय है, जिसमें कभी भी सन्देह नहीं किया गया है। निस्सन्देह, इस दावे में सभी तीनों भूलें निहित हैं। इसमें निगमनिक भविष्यवाणी और नैतिक जड़पूजा के ढंग की भूलें निहित हैं। "दण्ड" शब्द में रंग भरने से ही – वास्तविकता को छिपाने से ही इसे तर्कसंगत समझा जाता है। और अन्त में "पृथक्कृत साधन" के ढंग की भूल है – दण्ड से गुलाम का सा मनोभाव विकसित होता है। और तब भी मुझे पूरा यक़ीन है कि पूरी प्रणाली से पृथक् किसी भी साधन पर विचार नहीं किया जा सकता। यदि किसी साधन पर अन्य साधनों, पूरी प्रणाली, सम्पूर्ण मिश्रित प्रभावों से पृथक् विचार किया जाता है, तो साधन चाहे जैसा भी हो, उसे अच्छा अथवा बुरा नहीं कहा जा सकता। सजा से गुलाम का सा मनोभाव विकसित हो सकता है, परन्तु कभी-कभी इससे एक बहुत अच्छा व्यक्ति, एक बहुत ही स्वतंत्र और स्वाभिमानी व्यक्ति भी तैयार किया जा सकता है। आपको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि मेरे निजी अनुभव के अनुसार दण्ड भी उन साधनों में एक था, जिसे मैंने अपने विद्यार्थियों में इज्ज़त एवं स्वाभिमान की भावना पैदा करने के लिये अपनाया।

मैं बाद में आपको बताऊंगा कि किन अवस्थाओं में सज़ा से मानवीय मर्यादा का विकास होता है। स्पष्टत: केवल अन्य साधनों के सुनिश्चित वातावरण में और विकास के निश्चित स्तर पर ही यह नतीजा पैदा हो सकता है। कोई भी शिक्षाशास्त्रीय साधन, यहां तक कि सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत साधन भी, जिसे हम सामान्यतया प्रबोधन, सफ़ाई, बातचीत

ग्रौर सार्वजनिक प्रभाव कहते हैं, पूर्णतया निर्दोष तथा स्थाई रूप से उपयोगी साधन नहीं कहा जा सकता। कभी-कभी सर्वोत्कृष्ट साधन निश्चित रूप से निकृष्ट साधन बन जाते हैं। सामुदायिक प्रभाव ग्रर्थात् व्यष्टि पर समष्टि के प्रभाव जैसे साधन को ही लीजिए। किसी वक़्त यह ग्रच्छा ग्रौर कभी बुरा सिद्ध होगा। व्यक्तिगत प्रभाव को, विद्यार्थी के साथ शिक्षक की ग्रकेले में बातचीत को ही लीजिए। कभी यह हितकर ग्रौर कभी ग्रहितकर होती है। यदि साधनों की सम्पूर्ण प्रणाली से पृथक् किसी साधन पर विचार किया जाता है, तो उसकी उपयोगिता ग्रथवा ग्रपकारिता की दृष्टि से उसकी कोई गणना नहीं की जा सकती। ग्रौर ग्रन्ततः स्थाई प्रणाली के रूप में किसी भी साधन-प्रणाली को मान्य नहीं बताया जा सकता।

मुझे द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून के इतिहास का स्मरण हो ग्राता है। यह कम्यून १९२८ में स्थापित हुग्रा था। उस समय वहां ग्राठवीं कक्षा के विद्यार्थियों की उम्र (ग्रर्थात् १५ या १६ वर्ष) से छोटे लड़के-लड़कियां थीं। यह एक स्वस्थ ग्रौर प्रसन्न समुदाय था, परन्तु १९३५ के बड़े कोम्सोमोल संगठन ग्रौर ग्रनुभवी पुराने विद्यार्थियों वाले समुदाय से, जिनमें कुछ की ग्रवस्था बीस साल की थी, यह भिन्न था। स्पष्टतः परवर्ती समुदाय के ढंग के समुदाय के लिए सर्वथा भिन्न शैक्षिक पद्धति ग्रपेक्षित थी।

व्यक्तिगत रूप से मुझे निम्नांकित बात में विश्वास है: यदि हम एक साधारण सोवियत स्कूल को लेकर बीस साल के लिए ग्रच्छे शिक्षकों, संगठकों एवं पढ़ानेवालों के हाथ में दे दें, तो उस ग्रवधि में यह ग्रपूर्व रूप से इतनी तरक़्क़ी करेगा—बशर्ते यह ग्रच्छे शिक्षकों के नियंत्रण में बना रहे—कि इस पथ के ग्रन्त में शुरू की ग्रपेक्षा शैक्षिक पद्धति में बहुत ग्रन्तर ग्रा जायेगा।

सामान्यतया, शिक्षाशास्त्र सर्वाधिक द्वन्द्वात्मक, गतिशील, जटिल ग्रौर बहुविध विज्ञान है। यह दावा मेरे शिक्षाशास्त्रीय विश्वास का ग्राधार है। मैं यह कहने की कोशिश नहीं कर रहा हूं कि जिन बातों की सच्चाई की छानबीन व्यवहारतः करनी है, उन सभी चीजों की छानबीन कर चुका हूं; स्थिति इससे भिन्न है। ग्रभी ग्रनेक बातों के बारे में मेरे लिये भी ग्रस्पष्टता है, परन्तु मैं निश्चय ही एक व्यावहारिक प्राक्कल्पना के रूप में इसे प्रस्तुत करता हूं, जिसे व्यावहारिक रूप में कम-से-कम परखना

चाहिये। निजी रूप से मुझे अपने अनुभव का प्रमाण सुलभ है, परन्तु निस्सन्देह व्यापक सोवियत सामाजिक व्यवहार में इसे परखने की जरूरत है। इस प्रसंग में मुझे विश्वास है कि मैंने जो कुछ कहा है, उसका तर्क न तो हमारे सर्वोत्कृष्ट सोवियत स्कूलों के अनुभव और न हमारे अधिकांश सर्वोत्कृष्ट बाल और प्रौढ़ समुदायों के अनुभव के प्रतिकूल है।

ये हैं प्रारम्भिक सामान्य विचार, जिन पर जोर देना था।

आइए, अब हम सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्न, शैक्षिक ध्येयों को निर्धारित करने के प्रश्न पर विचार करें। किनसे, कब और कैसे शैक्षिक ध्येय निर्धारित हो सकते हैं और यथार्थतः वे ध्येय हैं क्या?

मेरी दृष्टि में "शैक्षिक ध्येय" की धारणा का अभिप्राय व्यक्तित्व के विकास का कार्यक्रम है, चरित्र-निर्माण का कार्यक्रम है और इससे भी बढ़कर मैं "चरित्र" की धारणा में उन सभी बातों को शामिल करता हूं, जो व्यक्तित्व में निहित होती हैं, अर्थात् उसकी बाह्य अभिव्यक्तियों का स्वरूप, उसके आन्तरिक विश्वास, उसकी राजनीतिक शिक्षा और उसका ज्ञान – अपने आप में पूर्ण मानवीय व्यक्तित्व का चित्र। मेरा यह विचार है कि हम बाल-शिक्षकों को मानवीय व्यक्तित्व का इसी प्रकार का कार्यक्रम अपनाना चाहिए और इसी दिशा में हमें प्रयास करना चाहिए।

मैं अपने व्यावहारिक काम में इस प्रकार के कार्यक्रम के बिना कुछ भी नहीं कर सकता था। अनुभव के समान कोई शिक्षा प्रदान करनेवाला नहीं है। उसी द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में कई सौ व्यक्ति मेरे सिपुर्द किये गए और मैंने इनमें से प्रत्येक व्यक्ति की गहरी और ख़तरनाक उत्सुकता, बद्धमूल प्रवृत्तियां अनुभव कीं और मुझे सोचना पड़ा: उनका चरित्र किस प्रकार का होना चाहिए, इन लड़के-लड़कियों को योग्य नागरिकों के रूप में ढालने के लिए मुझे किस बात का प्रयास करना चाहिए? और मैं जब इस प्रश्न पर विचार करने लगा, तो पता चला कि इस प्रश्न का उत्तर दो शब्दों में नहीं दिया जा सकता। एक अच्छे सोवियत नागरिक को ढालने की धारणा ने अभी तक मुझे रास्ता नहीं सुझाया। मुझे मानवीय व्यक्तित्व के एक अधिक व्यापक कार्यक्रम को तैयार करना पड़ा। और जब मैं इसे सुलझाने लगा, तो निम्नांकित प्रश्न मेरे सम्मुख प्रस्तुत हुआ: जहां तक इस कार्यक्रम का सम्बन्ध है, क्या अब सबके लिए वह एक ही होना चाहिए? मेरे लिए एक ही कार्यक्रम में प्रत्येक व्यक्ति को शामिल करना, एक ढांचे

में ढालना और इस ढांचे के लिए प्रयास करना क्यों आवश्यक है? यदि बात ऐसी ही है, तो मुझे व्यक्तिगत आकर्षण, व्यक्तित्व की मौलिकता एवं विशिष्ट सौन्दर्य को त्याग देना चाहिए, परन्तु यदि मैं ऐसा नहीं करता, तो किस प्रकार का ढांचा मुझे सुलभ होगा! मैं सुगमतः आगे न बढ़ सका और एक अमूर्त प्रश्न के रूप में इस सवाल का उत्तर न दे सका, परन्तु उसके बाद दस वर्षों के दौरान व्यावहारिक रूप में इसका उत्तर मुझे प्राप्त हो गया।

मुझे ज्ञात हो गया कि वास्तव में एक सामान्य कार्यक्रम, एक ढांचा और इसके साथ ही इस में विशिष्ट सुधार भी होना चाहिए। यह प्रश्न मेरे लिए पैदा नहीं हुआ: क्या मेरा विद्यार्थी बड़ा होकर एक साहसी व्यक्ति होगा अथवा क्या पढ़-लिखकर वह एक कायर होगा? इस सम्बन्ध में आदर्श निर्धारित था: मेरे प्रत्येक विद्यार्थी को बहादुर, दृढ़, ईमानदार और परिश्रमी देशभक्त बनना है। परन्तु जब आपको एक व्यक्ति की प्रतिभा जैसे गूढ़ पहलुओं से मतलब रखना है, तो सोचना पड़ता है कि किस पद्धति को अपनाना चाहिए? और कभी-कभी जब प्रतिभा की बात पैदा होती है, जब आपके सम्मुख यह समस्या उपस्थित हो जाती है, तो कुछ दुःखदायी सन्देह पैदा हो जाते हैं। इसी प्रकार की एक स्थिति मेरे सम्मुख उपस्थित हो गई थी। तेरेन्त्यूक नामक एक लड़के ने स्कूल में दस साल की पढ़ाई समाप्त कर ली थी। वह बहुत ही तेज़ विद्यार्थी था, सभी विषयों में उसे पांच अंक मिले थे, और प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के बाद उसने सूचित किया कि वह तकनीकी संस्थान में दाख़िल होना चाहता था। इसके पहले मैंने उसमें अभिनय कला की बड़ी प्रतिभा अनुभव की थी, और मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि सुखान्त नाटकों के असाधारण रूप से प्रभावकारी अभिनेता, बहुत ही विदग्ध, सूक्ष्मग्राही, स्वभावतः नक़ल उतारने में कुशल और भव्य वाणीवाले एक बुद्धिमान वर्ग के अभिनेता की यह प्रतिभा थी। मैंने अनुभव किया कि अभिनेता के पेशे में वह अच्छी ख्याति अर्जित कर सकता है और तकनीकी संस्थान में एक औसत विद्यार्थी से अधिक वह कुछ नहीं होगा। परन्तु मेरे सभी विद्यार्थी इंजीनियर बनना चाहते थे, क्योंकि यह समय की सनक थी। मान लीजिये कि यदि आप इतना ही सूचित करते कि वे संभवतः शिक्षक बन सकते हैं, तो वे आपकी हंसी उड़ाते: "आपके कहने का क्या अभिप्राय है? क्या इरादतन

एक शिक्षक बनने की बात ?" मैंने तेरेन्त्यूक से कहा : "अभिनेता का पेशा अपनाओ" और उसने उत्तर दिया : "कभी नहीं, क्या वह असल काम है अभिनेता का ?" और इस प्रकार उसने जाकर तकनीकी संस्थान में अपना नाम लिखाया, परन्तु मुझे पूर्णतः विश्वास रहा कि हम एक अच्छे अभिनेता को खो रहे थे। मैंने उसकी बात मान ली, क्योंकि एक व्यक्ति के जीवन में इस प्रकार की खींचातानी करने का मुझे कोई हक नहीं था...

परन्तु फिर भी हस्तक्षेप करने से मैं अपने को रोक नहीं सका। उस समय वह तकनीकी संस्थान में छः महीने से पढ़ रहा था, और अपने अवकाश के समय हमारी शौक़िया नाटक-मण्डली में भाग लिया करता था। मैंने इस पर बहुत विचार किया, और तब मैंने निश्चय कर लिया : मैंने आम सभा में तेरेन्त्यूक को बुलवाया और सूचित किया कि मैं उसके विरुद्ध अनुशासनहीनता की शिकायत प्रस्तुत करने जा रहा हूं। हमारे छात्रों और छात्राओं ने उससे कहा : "क्या तुम अपने व्यवहार से स्वयं लज्जित नहीं हो, तुम से जो कुछ कहा जाता है, उसे क्यों नहीं करते ?" और उन्होंने एक प्रस्ताव पास किया कि उसे तकनीकी संस्थान से नाम कटा लेना चाहिए और उसकी जगह नाट्यकला स्कूल में दाखिल हो जाना चाहिए। कुछ समय तक वह बहुत उदास दिखाई पड़ा, परन्तु वह समुदाय की इच्छा के खिलाफ़ नहीं जा सकता था, क्योंकि समुदाय ही उसे मासिक वज़ीफ़ा प्रदान करता था और उसी ने उसे रहने का स्थान दिया था। वह श्रेष्ठ अभिनेता हो गया है और दूसरों ने दस साल में जितना अनुभव प्राप्त किया है, वह उतना दो ही साल में अर्जित कर सुदूर पूर्व के एक सर्वोत्कृष्ट थियेटर में अभिनेता का काम कर रहा है। और अब वह मेरे प्रति बहुत आभारी है।

फिर भी, यदि इस समय इसी प्रकार की समस्या मेरे सम्मुख प्रस्तुत हो, तो इसे हल करने में मुझे भय लगेगा – मैं यह कैसे जान सकता हूं कि मुझे इस प्रकार हस्तक्षेप करने का अधिकार है ? क्या एक व्यक्ति को विद्यार्थी द्वारा पसन्द किये गए पेशे के बारे में दखल देने का कोई अधिकार है या नहीं, यह प्रश्न अभी मेरे लिए अनिर्णीत बना हुआ है। परन्तु मुझे पूरा यक़ीन है कि प्रत्येक शिक्षक के सम्मुख यह प्रश्न पैदा होगा – क्या उसे एक छात्र चरित्र के विकास के प्रसंग में हस्तक्षेप करने और उसे सही दिशा में लक्षित करने का अधिकार है अथवा क्या उसे निष्क्रिय रूप से केवल

एक तमाशाई बन जाना चाहिए? मेरे विचार से प्रश्न का उत्तर स्वीकारात्मक ढंग से देना चाहिए–हां उसे अधिकार है। परन्तु इस अधिकार का उपयोग कैसे किया जाये? प्रत्येक अलग-अलग अवस्था में व्यक्तिगत रूप से इस प्रश्न को हल करने का प्रयास करना होगा, क्योंकि अधिकार का होना एक बात है और समुचित रूप से इसका प्रयोग करना बिल्कुल दूसरी बात है। वे दो भिन्न समस्याएं हैं। और इस बात की बहुत संभावना है कि एक समय आयेगा, जब कैसे यह क्रिया की जाये, इसे लोगों को सिखाना हमारे शिक्षकों के प्रशिक्षण में भी बहुत ही महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा। अन्ततः एक शल्यचिकित्सक को शल्यक्रिया द्वारा खोपड़ी छेदना सिखाया जाता ही है। और जहां तक हमारा सम्बन्ध है, एक शिक्षक को संभवतः मेरी अपेक्षा अधिक कुशलतापूर्वक, अधिक सफलता के साथ इस "मानसिक क्रिया" को कैसे सम्पन्न किया जाये, इसे शायद सिखाया जायेगा और उसे यह भी बताया जायेगा कि एक व्यक्ति के सहज गुणों, रुझानों और योग्यता का यथेष्ट उपयोग करके कैसे उसे सबसे अच्छी दिशा में लक्षित किया जाये।

अब मैं उन व्यावहारिक ढंगों की चर्चा करूंगा, जो मेरे अनुभव तथा मेरे सहयोगियों के अनुभव के अनुसार हमारे शैक्षिक कार्य में सर्वाधिक सफलता के साथ लागू किये गए। मैं समुदाय को शैक्षिक कार्य का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण निर्माणात्मक रूप मानता हूं। ऐसा प्रतीत होगा कि शिक्षाशास्त्रीय साहित्य में समुदाय के बारे में बहुत कुछ लिखा गया है, परन्तु किसी कारण सुबोध ढंग से नहीं।

समुदाय क्या है और किस सीमा तक हम इसमें हस्तक्षेप कर सकते हैं? मैं मास्को और कीयेव, जहां अब मैं अक्सर जाता हूं और पहले अक्सर गया हूं, दोनों जगहों के अनेक स्कूलों का निरीक्षण करता रहा हूं और मुझे सदा विद्यार्थियों का वास्तविक समुदाय नहीं दिखाई पड़ा। कभी-कभी मैं श्रेणीगत समुदाय देख लेता हूं, परन्तु शायद ही मैंने कभी एक स्कूल-समुदाय देखा हो।

मेरे दोस्तों ने और ख़ुद मैंने जिस समुदाय को विकसित किया है, अब मैं अपने उस समुदाय के बारे में चन्द सीधे-सादे शब्दों में आपको कुछ बताऊंगा। ख़ैर, आपको स्मरण रखना चाहिए कि जिन परिस्थितियों में मैंने काम किया, वे एक सामान्य स्कूल की स्थितियों से भिन्न थीं, क्योंकि

जहां तक मेरे समुदाय का सम्बन्ध था, विद्यार्थियों का निवासस्थान बोर्डिंग-हाउस में था, उन्होंने काम किया, और अधिकांश विद्यार्थियों के मां-बाप नहीं थे, दूसरे शब्दों में उनका कोई अन्य समुदाय नहीं था। और इसलिए स्वाभाविक रूप से स्कूल के एक शिक्षक की अपेक्षा मुझे सामूहिक शिक्षा के अधिक साधन सुलभ थे। परन्तु केवल बेहतर परिस्थितियों के कारण रियायत देने का मेरा कोई इरादा नहीं है। एक समय मैं एक साधारण स्कूल में प्रधानाध्यापक था, जहां रेलवे मज़दूरों अथवा दरअसल रेल के डिब्बे तैयार करनेवाली एक फ़ैक्टरी के मज़दूरों के बच्चे पढ़ते थे और वहां भी मैंने उन्हें एक स्कूल-समुदाय के रूप में एकजुट कर दिया था।

स्कूली शिक्षा-पद्धति में, जो पहले शिक्षा की जन-कमिसारियत के पुराने नेताओं द्वारा संचालित होती थी, कुछ बहुत ही आश्चर्यजनक बातें हो रही हैं, ये बातें मेरे शैक्षणिक विचार से अग्राह्य हैं। इसे और स्पष्ट कर दूं। कल मैं एक विश्रामप्रद एवं आनन्ददायक पार्क में गया था, एक ऐसा पार्क, जिसमें युवा पायनियर प्रासाद है। इसी क्षेत्र में पाव्लिक मोरोज़ोव सदन* है, यह एक पृथक् भवन है। और इसी क्षेत्र में तेरह स्कूल हैं। कल मैंने देखा कि किस प्रकार वे तीनों संगठन – स्कूल, युवा पायनियर प्रासाद और पाव्लिक मोरोज़ोव सदन – बच्चों को एक समुदाय से दूसरे समुदाय में खींचते हैं। बच्चों का कोई समुदाय नहीं है।

स्कूल में पढ़ाई के समय वे एक समुदाय से, घर पर दूसरे समुदाय से, युवा पायनियर प्रासाद में तीसरे समुदाय से और पाव्लिक मोरोज़ोव सदन में चौथे समुदाय से सम्बद्ध हैं। वे सुबह एक, दोपहर के खाने के समय उससे भिन्न और उसके उपरान्त रात में एक अन्य समुदाय को पसन्द करते हुए एक समुदाय से दूसरे समुदाय में निरुद्देश्य जाते रहते हैं। कल मैंने निम्नांकित दृश्य देखा: युवा पायनियर प्रासाद की अपनी नृत्य-मण्डली है। इन स्कूलों में से एक के कोम्सोमोल संगठक ने सूचित किया: "उस मण्डली

---

*पाव्लिक मोरोज़ोव, चौदह वर्षीय पायनियर, एक ग़रीब किसान का लड़का, जिसने सामूहीकरण की अवधि में अपने गांव में कुलकों के विरुद्ध बड़ी बहादुरी के साथ संघर्ष किया। १९३२ में कुलकों ने उसकी हत्या कर दी। पाव्लिक मोरोजोव के नाम पर कई युवा पायनियर दलों और प्रासादों का नाम रखा गया है।

में शामिल होने के लिए हम अपनी लड़कियों को इजाज़त नहीं देंगे। स्कूल का प्रधानाध्यापक बहुत ग़ुस्से में था : "क्या आप इसकी कल्पना भी कर सकते हैं? कोम्सोमोल संगठक ने सूचित किया है कि वह लड़कियों को मण्डली में शामिल नहीं होने देगा!" प्रधानाध्यापक ने कोम्सोमोल संगठक को सार्वजनिक सुनवाई में घसीटा : "देखिए, यह व्यक्ति क्या कर रहा है?" और कोम्सोमोल संगठक अपनी बात पर अड़ा रहा : "मैं कह चुका हूं कि मैं इजाज़त नहीं दूंगा और हर्गिज न दूंगा।" टकराव की स्थिति पैदा हो गई। और मुझे स्मरण है कि हमारे कम्यून में भी इसी प्रकार विग्रह की स्थिति पैदा हो गई थी। हमारे पास विविध प्रकार की मण्डलियां थीं, बहुत ही गंभीर अध्ययन-केन्द्र थे, सच्चे ग्लाइडर थे और एक अश्वारोही सेक्शन भी था... ख़ैर, एक लड़का, एक बहुत ही अच्छा लड़का, एक युवा पायनियर अपने पायनियर संगठन द्वारा ख़ार्कोव के युवा पायनियर प्रासाद में शामिल हो गया और वहां उसने उत्तरी ध्रुवीय क्षेत्र की जानकारी प्राप्त करने के काम में भाग लिया और उसने इतना अच्छा काम किया कि उक्त प्रासाद ने उसे पुरस्कार प्रदान किया – अन्य लड़कों के दल के साथ मुर्मान्स्क की यात्रा। मीशा पेकेर नामक यह लड़का कम्यून में वापस आया और सबको उसने बताया कि वह मुर्मान्स्क जा रहा है।

"तुम कहां जा रहे हो?" बड़े लड़कों में से एक ने उससे पूछा।

"मुर्मान्स्क।"

"कौन तुम्हें जाने की अनुमति देगा?"

"ख़ार्कोव का युवा पायनियर प्रासाद मुझे भेज रहा है!"

कम्यून के बड़े सदस्यों ने आम सभा में मीशा से जवाब-तलब किया – कौन उसे भेज रहा है और कहां।

"मैं उत्तरी ध्रुवीय क्षेत्र का अनुसन्धान करने मुर्मान्स्क जा रहा हूं और युवा पायनियर प्रासाद मुझे वहां भेज रहा है," मीशा ने उन्हें बताया।

इस पर आम विरोध प्रकट किया गया।

"युवा पायनियर प्रासाद तुम्हें कहीं भी भेजने की धृष्टता कैसे कर रहा है? और मान लो कि हम तुम्हें कल अफ़्रीका अथवा अन्यत्र किसी काम से भेजना चाहें, तो क्या होगा? हम वोल्गा पर यात्रा की योजना बना रहे हैं और तुम हमारे अलगोजावादक हो, परन्तु यदि तुम अलगोजा न

बजाम्रो, तो भी दो नावों पर सवार होना क्या अच्छी बात है? नहीं, तुम कहीं नहीं जा सकते। तुम्हें इन पुरस्कारों आदि को स्वीकार करने के लिए ग्राम सभा से अनुमति लेनी चाहिए थी!"

मीशा ने ग्राम सभा का निर्णय स्वीकार कर लिया। परन्तु युवा पायनियर और कोम्सोमोल संगठनों तथा पायनियर प्रासाद को सब कुछ ज्ञात हो गया और यह चर्चा थी: "द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में यह सब क्या हो रहा है? हम एक व्यक्ति को उत्तरी ध्रुवीय क्षेत्र में भेजना चाहते हैं और वे उसे निर्देश देते हैं: नहीं, तुम नहीं जा सकते, तुम्हें रुकना होगा और अलगोजा बजाना ही होगा, क्योंकि हम वोल्गा पर यात्रा की योजना बना रहे हैं।" उक्रइनी कोम्सोमोल संगठन की केन्द्रीय समिति में यह प्रश्न उठाया गया। परन्तु बिना किसी गड़बड़ी के यह सुलझ गया: "यदि मीशा को जाना ही होगा, तो हम उसे जबरन नहीं रोकेंगे, निस्सन्देह हम उसे मासिक वज़ीफ़ा और सब कुछ प्रदान करते रहेंगे और यदि वह चाहे, तो युवा पायनियर प्रासाद में शामिल हो सकता है और वहां रह सकता है... और यदि ज़रूरत पड़ी, तो हम स्वयं जिसे भी चाहे आवश्यक अनुसन्धान में सहायता प्रदान करने के लिए उत्तरी ध्रुव भेजेंगे और हम उत्तरी ध्रुव के अनुसन्धान में हाथ बंटायेंगे। इस समय हमारी योजना में यह शामिल नहीं है, बस यही बात है। और यदि श्मीद्त* को इस काम से भेजा जाये और वही यह कार्य करे, तो क्या बात है! सोवियत संघ में प्रत्येक व्यक्ति उत्तरी ध्रुव नहीं जा सकता और इसलिए यह तर्क करना बेकार है कि उत्तरी ध्रुव के अनुसन्धान के लिए जाना हरेक व्यक्ति का काम है!" स्पष्टतः मीशा तर्क करना चाहता था, परन्तु उन्होंने उससे कहा: "अच्छा, बस, तुम काफ़ी बहस कर चुके हो।" और तब उसने कहा: "अब मैं स्वयं नहीं जाना चाहता।"

और यहां एक दूसरा प्रश्न पैदा होता है। मैं मास्को के निकट कई ग्रीष्मकालीन शिविरों में जा चुका हूं। वे अच्छे शिविर हैं, इनमें से किसी

---

*ओ० यू० श्मीद्त (१८९१–१९५६) – प्रमुख सोवियत गणितज्ञ, ज्योतिर्विद, भूभौतिकशास्त्री, सोवियत संघ के वीर। १९२९ से १९३८ तक सोवियत संघ के उत्तर ध्रुवीय क्षेत्रों के अनुसंधान के लिए जानेवाले कई अनुसन्धान-दलों का उन्होंने नेतृत्व किया था।

भी शिविर में ठहरना सुखकर है और निस्सन्देह वे अपूर्व स्वास्थ्यवर्धक हैं। परन्तु मुझे इस पर आश्चर्य हुआ कि विभिन्न स्कूलों के विद्यार्थी वहां आते हैं और यह कुछ ऐसी बात है, जिसका औचित्य मैं नहीं समझ पाता। मेरा ख़्याल है कि इससे शिक्षा का सामंजस्य गड़बड़ा जाता है। एक लड़का किसी एक स्कूल-समुदाय से सम्बन्धित है और वह अपना ग्रीष्मावकाश एक संयुक्त समुदाय में व्यतीत करता है। इसका अर्थ यह है कि उसका अपना स्कूल-समुदाय उसकी गरमी की छुट्टियां व्यतीत करने की व्यवस्था करने में कोई भूमिका अदा नहीं करता। और इसी कारण युवा पायनियर प्रासादों में तथा अन्यत्र मतभेद पाया जाता है और मैं जानता हूं कि यह मतभेद क्यों पैदा होता है।

संयुक्त, सबल और प्रभावकारी समुदायों का गठन करके उपयुक्त सोवियत शिक्षा संगठित होनी चाहिए। स्कूल को अविभक्त समुदाय होना चाहिए, जहां सभी शैक्षिक प्रक्रियाएं समुचित रूप से संगठित की जाती हैं। समुदाय के प्रत्येक सदस्य को समुदाय पर अपनी निर्भरता महसूस करनी चाहिए, उसे समुदाय के हितों के प्रति निष्ठावान होना चाहिए, उसे इन हितों का समर्थन करना चाहिए और इन्हें सब बातों से अधिक महत्त्वपूर्ण समझना चाहिए। परन्तु मैं उस स्थिति को ठीक नहीं समझता, जिसमें एक समुदाय का प्रत्येक सदस्य अपने समुदाय की मदद और साधन का इस्तेमाल किये बिना ही अपनी पसन्द के अनुसार अपने साथियों को ढूंढ़ निकालने के लिए स्वतंत्र है। इसके क्या नतीजे हो सकते हैं? हमारे सभी नगरों और विशेष रूप से मास्को में युवा पायनियर प्रासाद बहुत अच्छा काम कर रहे हैं। हम बहुतेरे कार्यकर्ताओं के प्रयासों और उनके द्वारा प्रयुक्त कार्य-प्रणाली की सराहना कर सकते हैं। परन्तु जहां वे इतना अच्छा काम कर रहे हैं और हमारा समाज उन्हें इस काम में सहायता प्रदान करता है, वहीं इससे हमारे कुछ स्कूलों को कोई भी अतिरिक्त काम करने से कतराने का मौक़ा हाथ लगता है। कई स्कूल मण्डलियों को चलाने की तकलीफ़ गवारा नहीं करते, क्योंकि विद्यार्थी युवा पायनियर प्रासादों की ऐसी मण्डलियों में शामिल हो सकते हैं। और निस्सन्देह सदैव बहाने बनाये जा सकते हैं: या तो उनके पास कोई उपयुक्त इमारत नहीं है अथवा कोष नहीं है, या यदि यह नहीं, तो इन मण्डलियों को चलाने के लिए प्रशिक्षक नहीं हैं, इसी प्रकार के कई अन्य बहाने प्रस्तुत किये जा सकते हैं। मैं एक

ऐसे समुदाय का समर्थक हूं, जहां सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रियाओं को समुचित रूप से संगठित किया जाये।

व्यक्तिगत रूप से, मैं एक सुदृढ़, प्रभावकारी, सभी आवश्यक वस्तुओं और साधनों से युक्त सामुदायिक प्रणाली के रूप में इसे देखता हूं। परन्तु ये तो एक सुसंगठित समुदाय की बाह्य आवश्यकताएं हैं...

युवा पायनियरों का वही प्रासाद अथवा दूसरे शब्दों में बाल-क्लब स्कूल के साथ-साथ काम कर सकता है, परन्तु सदा स्कूल को ही कार्य संगठित करना चाहिए। स्कूल को ही इस काम के लिए जवाबदेह होना चाहिए और इसे संयुक्त प्रयास का ही रूप देना है। नृत्य-मण्डली में लड़कियों के शामिल होने के विरुद्ध निर्णय करनेवाले कोम्सोमोल संगठक की बात ठीक थी। यदि वह अपने समुदाय में बच्चों की शिक्षा के लिए जवाबदेह है, तो उसे सौंपे गए बच्चे युवा पायनियर प्रासाद में क्या करते हैं, उसमें उसे दिलचस्पी लेनी ही चाहिए और इसके लिए उसे जवाबदेह होना ही चाहिए।

पारस्परिक दायित्व अथवा एक संगठन द्वारा प्रबंध से असम्बद्ध शैक्षिक प्रक्रिया को विभिन्न संस्थाओं और व्यक्तियों में छितिर-बितिर करना फलदायक सिद्ध नहीं हो सकता।

मैं इसे समझता हूं कि सुव्यवस्थित रूप में सभी आवश्यक वस्तुओं और साधनों से युक्त एक ही बाल-समुदाय को चलाने पर स्वाभाविक रूप से अधिक धन ख़र्च होगा, परन्तु यदि कुशलतापूर्वक इसे संगठित किया जाये, तो इसकी बहुत संभावना है कि अन्ततः यह बहुत ही कमख़र्चीला साबित होगा।

यह सब कुछ उसी रूप में समुदाय के ढांचे से सम्बन्धित है। संक्षेप में, मैं इसपर ज़ोर देना चाहता हूं कि बच्चों को उनकी शिक्षा के काम में पथ-प्रदर्शन करनेवाले एक ही समुदाय की भूमिका स्कूल को अदा करनी चाहिए। और अन्य सभी संस्थाएं स्कूल के मातहत होनी चाहिए।

मुझे इसका पूरा यक़ीन है कि यदि किसी समुदाय का कोई निर्धारित ध्येय नहीं है, तो इसे संगठित करने की कोशिश करना ही बेकार है। प्रत्येक समुदाय का, अलग-अलग कक्षा के सम्मुख नहीं, बल्कि पूरे स्कूल के समक्ष निर्धारित आम सामूहिक ध्येय होना चाहिए, जो नितान्त आवश्यक है।

मेरे समुदाय में पांच सौ व्यक्ति थे। वे ग्राठ से ग्रठारह वर्ष तक की उम्र के थे, दूसरे शब्दों में इस समुदाय में पहली से दसवीं कक्षा तक के विद्यार्थी शामिल थे। स्पष्टतः वे कई बातों में एक-दूसरे से भिन्न थे। उम्र में बड़े विद्यार्थी ग्रधिक शिक्षित, ग्रौद्योगिक काम में ग्रधिक कुशल ग्रौर ग्रधिक सुसंस्कृत थे। निस्सन्देह, सबसे छोटे ग्रपढ़ ग्रौर "भटके हुग्रों" की परिभाषा के ग्रनुरूप थे। परन्तु ग्रन्तिम लेखे में, साधारणतः वे बच्चे थे। किन्तु फिर भी, मेरे काम के ग्राख़िरी वक़्त में यथार्थतः समान उद्देश्य की प्राप्ति में संलग्न सभी पांच सौ विद्यार्थियों का एक ही समुदाय था। मैंने एक भी विद्यार्थी को समुदाय के एक सदस्य के रूप में उसकी उम्र ग्रथवा विकास पर ध्यान दिये बिना उसके ग्रधिकारों ग्रथवा मत से कभी भी वंचित नहीं किया। वास्तव में कम्यून की ग्राम सभा एक वास्तविक प्रबन्धक सभा थी।

मेरे ग्रालोचकों ग्रौर ग्रधिकारियों ने प्रबन्धक सभा के रूप में ग्राम सभा के कार्य करने के इस विचार के कारण ही विरोध ग्रौर इस व्यवस्था की उपयोगिता में सन्देह प्रकट किए। उन्होंने कहा: ग्राप इतनी बड़ी ग्राम सभा को निर्णय करने की ग्रनुमति नहीं प्रदान कर सकते, ग्राप एक समुदाय का प्रबन्ध बच्चों एवं किशोरों की भीड़ को नहीं सौंप सकते। निस्सन्देह, उनका ख़्याल ठीक था। परन्तु मेरा पूरा उद्देश्य इन बच्चों को मात्र एक भीड़ नहीं बनने देना था, बल्कि एक समुदाय के सदस्यों की ग्राम सभा के रूप में उन्हें ढालना था।

एक "भीड़" को ग्राम सभा में बदलने के ग्रनेक तरीक़े ग्रौर उपाय हैं। यह न तो किसी कृत्रिम उपाय से हो सकता है ग्रौर न एक महीने में यह लक्ष्य पूरा हो सकता है। यह एक उसी प्रकार की बात है, जबकि ग्रनिवार्यतः शीघ्र फल पाने का प्रयास विफल हो जाता है। एक ऐसे स्कूल को ले लीजिए, जहां किसी प्रकार का समुदाय नहीं है, कोई सामंजस्य नहीं है, जहां ग्रधिक-से-ग्रधिक एक कक्षा की ग्रपनी पृथक् जीवन-प्रणाली है ग्रौर वह दूसरी कक्षाग्रों से उसी प्रकार सम्पर्क में ग्राती है, जैसे रास्ते से गुज़रनेवालों से हमारा साथ हो जाता है। बच्चों के इस बेडौल समूह से एक समुदाय का गठन स्वाभाविक रूप से दीर्घकालीन ग्रौर कठिन काम होगा (निश्चित रूप से एक या दो साल से ग्रधिक समय लगेगा)। परन्तु उसके बाद, यदि एक समुदाय का निर्दिष्ट रूप में गठन हो जाये, यदि इसे ग्रविभाज्य रूप में क़ायम रखा जाये, इसकी ग्रच्छी देखभाल की जाये ग्रौर

इसके विकास पर ध्यानपूर्वक निगाह रखी जाये, तो यह युगों तक क़ायम रह सकता है। और ऐसे समुदाय को, विशेष रूप से स्कूल में समुदाय को जहां बच्चा आठ या दस साल व्यतीत करता है, शिक्षा के सर्वाधिक प्रभावकारी साधन के रूप में सम्भाल रखना चाहिए।

बाल-समुदाय बहुत बड़ी शक्ति है, सामर्थ्य की दृष्टि से वस्तुतः यह अनुपम है, परन्तु फिर भी इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इसे भी आसानी से भंग किया जा सकता है। लगातार ग़लतियां करने, मार्ग-निर्देशन में परिवर्तन करते रहने से समुदाय एक "भीड़" में बदल सकता है। परन्तु जितने अधिक समय तक एक समुदाय क़ायम रहता है, जितना अधिक यह शक्तिशाली होता जाता है, उतना ही वह अपना अस्तित्व बनाये रखने को बहुत उत्सुक रहता है।

और अब मैं एक बहुत महत्त्वपूर्ण बात का उल्लेख करूंगा, जिसपर मैं विशेष रूप से ज़ोर देना चाहूंगा। वह बात है परम्परा। परम्परा की भांति समुदाय को इतने प्रबल रूप में और कोई बात सुदृढ़ नहीं करती। परम्पराओं को विकसित करना और उनके लिए सम्मान की भावना पैदा करना शैक्षिक कार्य का बहुत ही महत्त्वपूर्ण अंग है। जिस सोवियत स्कूल में परम्पराओं का अभाव हो, वह अच्छा स्कूल नहीं हो सकता और मास्को में भी मैंने जिन सर्वोत्कृष्ट स्कूलों को देखा है, वे वही हैं, जिन्होंने परम्पराएं विकसित की हैं। परम्परा क्या है? परम्पराओं के सम्बन्ध में भी मुझे विरोध का सामना करना पड़ा है। हमारे पुराने शिक्षाविद् कहा करते थे: "प्रत्येक सिद्धान्त, प्रत्येक नियम विवेकपूर्ण और युक्तिसंगत रूप में स्पष्ट होना चाहिए। और आप ऐसी परम्परा क़ायम कर रहे हैं, जिसका अभिप्राय और औचित्य बहुत पहले मिट चुका है।" यह पूर्णतया सही है कि मैंने परम्परा क़ायम की। मैं यहां एक उदाहरण प्रस्तुत करता हूं। जब मेरी उम्र नयी थी और मेरे पास कम काम था, तो मैं प्रतिदिन सुबह ६ बजे उठ जाता था और हाज़िरी लिया करता था: अर्थात् टुकड़ी के ड्यूटी पर तैनात कमांडर के साथ मैं सामान्य शयनागार में जाता था और मेरे पहुंचते ही "सावधान!" का निर्देश सुनाई पड़ता था! मैं कम्यून के सदस्यों की हाज़िरी लिया करता था और टुकड़ी की सुबह की स्थिति का जांच किया करता था। उस समय मैं कम्यून का कमांडिंग अफ़सर था और इस हैसियत से यदि किसी झगड़े को सुलझाने की

ग्रावश्यकता होती, तो मैं उसकी जांच कर सकता था और सज़ाएं दे सकता था। मेरे सिवा, निस्सन्देह ग्राम सभा को छोड़कर, कम्यून में अन्य किसी को दण्ड देने का अधिकार नहीं था। किन्तु, जब मेरे लिए स्वयं प्रतिदिन हाज़िरी लेना संभव न था, तो पहली बार मैंने अपने विद्यार्थियों से कहा कि आगे ड्यूटी पर तैनात कमांडर मेरी जगह यह काम किया करेगा।

क्रमशः यह एक नियत परिपाटी बन गई। और इस प्रकार एक परम्परा क़ायम हुई: हाज़िरी लेते समय ड्यूटी पर तैनात कमांडर को कमाण्डिंग अफ़सर का अधिकार सुलभ था और उसका हुक्म ही नियम था। समय व्यतीत होने के साथ ही मूल कारण भूला दिया गया। कम्यून में नये आनेवालों को यह ज्ञात था कि ड्यूटी अफ़सर को दण्ड देने का अधिकार था, परन्तु उन्हें इसका कारण मालूम नहीं था। निस्सन्देह, पुराने विद्यार्थियों को वह याद था। ड्यूटी अफ़सर उनसे कहता: "तुम्हें दुगुना कठोर काम करना होगा।" और वे उत्तर देते: "हां, महाशय।" परन्तु यदि वही ड्यूटी अफ़सर दिन के किसी अन्य समय इसी अधिकार का प्रयोग करने की कोशिश किया होता, तो उन्होंने उससे यही कहा होता: "तुम हमें आदेश देनेवाले हो कौन?" यह एक स्थिर परम्परा बन गई और समुदाय को संहत बनाने में इसने बड़ी सहायता प्रदान की।

मेरे समुदाय में इस प्रकार की अनेक, प्रायः सैकड़ों परम्पराएं थीं। मुझे सभी परम्पराओं की जानकारी नहीं थी, परन्तु लड़के-लड़कियों को उनका ज्ञान था। यद्यपि वे लिपिबद्ध नहीं थीं, फिर भी वे उन्हें जानते थे, उनकी जानकारी प्राप्त करने के लिए टोह लगाते थे अथवा किसी अन्य ढंग का इस्तेमाल करते थे। "क्या यह ठीक व्यवहार है?" वे स्वयं अपने से प्रश्न करते थे। "किस आधार पर? क्योंकि हमसे बड़े भी इसी ढंग का व्यवहार करते हैं।" अपने बड़ों के अनुभव का अनुसरण करना, बड़ों की युक्ति का सम्मान करना, कम्यून के विकास में उनके प्रयास का आदर करना और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण समुदाय और इसके प्रतिनिधियों के अधिकारों का सम्मान करना – ये बहुत ही महत्त्वपूर्ण व्यवहार हैं और निस्सन्देह वे परम्पराओं द्वारा अनुमोदित हैं। इन परम्पराओं से बच्चों का जीवन अधिक मनोहर हो जाता है। परम्पराओं के इस ढांचे के अन्तर्गत रहते हुए, अपने निजी समुदाय के लिए निर्दिष्ट इन विशेष नियमों में वे व्यक्तिगत गर्व का अनुभव करते हैं और उन्हें निर्दोष बनाने की कोशिश करते हैं।

मेरे विचार से ऐसी परम्पराओं के बिना सच्ची सोवियत शिक्षा नहीं दी जा सकती। और एक सबल, आत्मसम्मान की भावना से पूर्ण समुदाय का गठन हुए बिना सोवियत शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त नहीं किया जा सकता।

मैं अनेक दिलचस्प परम्पराओं का उल्लेख कर सकता हूं, परन्तु उदाहरण के रूप में मैं केवल कुछ परम्पराओं की चर्चा करूंगा। एक उदाहरण यह है, यह भी एक परम्परा है और इस ख़्याल से एक अजीब परम्परा है। सफ़ाई कमीशन का एक सदस्य प्रतिदिन ड्यूटी पर तैनात रहता है, इस काम पर तैनात लड़का अथवा लड़की हाथ पर पट्टी बांधे रहती है, जिसपर रेड क्रास बना होता है और उसे महत्त्वपूर्ण अधिकार, वास्तव में एक अधिनायक के अधिकार सुलभ हैं। वह लड़का अथवा लड़की समुदाय के किसी भी सदस्य, कोम्सोमोल के किसी भी सदस्य को खाने की मेज से उठने तथा जाकर हाथ धोने का आदेश दे सकती है और इसका पालन करने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं है। उसे स्टाफ़ के किसी भी सदस्य के फ़्लैट में, चाहे वह एक इंजीनियर या शिक्षक हो, अचानक जाने और उसके बाद आम सभा को यह रिपोर्ट देने का अधिकार है कि अमुक व्यक्ति का फ़्लैट गन्दा है। यह नियम बना दिया गया था कि विस्तार से कुछ उल्लेख करने की ज़रूरत नहीं है, वे केवल इतना ही कहते थे: "गन्दगी है।" सफ़ाई-आन्दोलन शुरू करने के लिए यही पर्याप्त था। यह परम्परा बन गई, मुझे यह स्मरण नहीं रहा कि लड़कियों के समूह में से इस "अधिनायक" को चुनने की परम्परा कैसे शुरू हुई, परन्तु निचली कक्षाओं में से एक लड़की ही इस काम के लिए चुनी जा सकती थी और सफ़ाई के लिए उसे क्रूर होना नितान्त आवश्यक था। उदाहरणार्थ, वे किसी का नाम प्रस्तावित करते, किन्तु बाक़ी व्यक्ति आपत्ति कर बैठते: "उससे यह काम न होगा, वह १७ साल की हो चुकी है।" तो उसमें ख़राबी क्या है? "कुछ दिन पहले वह जिस लम्बे मोज़े को पहनकर ड्यूटी पर गई थी, उनमें सलवटें पड़ी हुई थीं, इसलिए वह इस कार्य के लिए उपयुक्त नहीं है।" इस काम के लिए लड़का नहीं, बल्कि लड़की ही क्यों चुनी जानी चाहिए? वे कहते कि स्वयं अपने को साफ़-सुथरा रखने के बारे में एक लड़के में विश्वास नहीं किया जा सकता और लड़कियां स्वभावत: संकीर्ण विचारों की होती हैं। यदि एक लड़की दोष का पता लगा ले, तो उसको इस बात का ख़याल नहीं होता कि दोषी उसका दोस्त अथवा शत्रु

है, वह विरक्त भाव से उसका दोष बता देगी। मैं इसे लड़कों और सयानी लड़कियों के लिए उचित नहीं समझता। उन सभी ने मुझसे सहमति प्रकट की, परन्तु उसके साथ ही जब भी चुनाव का समय आता और कोम्सोमोल उम्र की किसी लड़की का नाम प्रस्तावित किया जाता, तो वे सभी उसके विरुद्ध वोट देते और किशोर पायनियर उम्र की एक लड़की को चुन लेते। और वे जिसको चुनते, वह निरी बच्ची होती। आप उसे काम सौंपने की बात भी नहीं सोचेंगे। वे कहते, "नहीं, वही उपयुक्त है।"

सफ़ाई कमीशन में काम करनेवाली वे लड़कियां सचमुच क्रूर थीं, वे पूर्णतया विभीषिका तुल्य थीं। ऐसी बारहवर्षीय लड़की दिन भर—खाना खाते समय, काम करते समय, शयनागार में सभी जगह किसी न किसी के पीछे पड़ी रहती। बाक़ी व्यक्ति शिकायत करते: "यह भी क्या जीवन है! जब वह शयनागार में धूल का कण नहीं पाती, तो किसी कुर्सी को उलट देती है और यदि रोयें का टुकड़ा अथवा एक बाल भी वहां दिखाई पड़ जाता है, तो हंगामा मचा देती है।"

और वह अपनी रिपोर्ट में यह लिखती कि उसने पन्द्रहवें नम्बर के शयनागार को गन्दा पाया। और इस शिकायत के विरुद्ध तर्क करने की कोई गुंजाइश नहीं थी, क्योंकि वह सच थी। सर्वथा बच्ची नीना नाम की वह लड़की कहती: "तुम कंघी कर रहे थे और फ़र्श पर बाल गिरा रहे थे, तो क्या मुझसे यह आशा की जाती है कि मैं तुम्हारे दोष को छिपा दूं?" सयाने हमजोली इस बच्ची को अपने काम का विवरण प्रस्तुत करते हुए, कितने कमरों का उसने निरीक्षण किया है, उनकी संख्या बताते हुए और उन पर उसकी टिप्पणियां करते हुए सुनते और स्वयं अपने से पूछते: "क्या इसने ठीक ढंग से अपना काम किया है?"—"बहुत अच्छा काम किया है।" इसे बिल्कुल विस्मृत करते हुए कि उन्होंने स्वयं उसे कण्टक समझा था, वे पुनः उसी को चुनते।

समुदाय ने यह महसूस किया कि सुनिश्चित रूप से इसी प्रकार की लड़कियों को, छोटी लड़कियों को, सबसे अधिक सिद्धान्तनिष्ठ, सर्वाधिक साफ़-सुथरी और ईमानदार लड़कियों को, उन बहुत छोटी लड़कियों को जो प्रेम के चक्कर में नहीं फंस सकती थीं अथवा किसी अन्य बात से नहीं बहक सकती थीं, यह काम सौंपना चाहिए। इस परम्परा की जड़ें इतनी गहरी चली गई कि कोम्सोमोल ब्यूरो की बैठकों में भी वे कहते: "नहीं,

इस लड़के से काम नहीं चल सकता, हमें क्लावा जैसी छोटी लड़की को चुनना चाहिए, वह बहुत परिश्रम से काम करेगी।"

इस प्रकार की परम्पराएं स्थापित करने में बच्चे प्रभावकारी रूप में समर्थ हैं।

निस्सन्देह, परम्पराओं को क़ायम करने में कुछ सहज अनुदारता का प्रयोग होना चाहिए, मेरे कहने का अभिप्राय है सराहनीय अनुदारता : जो कुछ हो चुका है, उसका सम्मान करना, अपने साथियों द्वारा स्थापित मान्यताओं का सम्मान करना और किसी की सनक (इस मामले में मेरी सनक) से उन्हें नष्ट न होने देना चाहिए।

अन्य परम्पराओं में मैं एक विशेष परम्परा की क़द्र करता हूं और यह है खेलकूद की भांति सैन्यीकरण की परम्परा... इसे एक फ़ौजी टुकड़ी की नियमावली की पुनरावृत्ति मात्र नहीं होनी चाहिए। किसी भी रूप में इसे किसी बात की नक़ल और अनुकृति नहीं होनी चाहिए।

मैं सतत सैनिक ढंग से चलने के विरुद्ध हूं, जिस पर कुछ युवक शिक्षक बहुत अधिक ज़ोर देते हैं। उनके विद्यार्थी चाहे भोजन-कक्ष में, चाहे काम करने अथवा कहीं और जा रहे हों, वे सदैव मार्च करते रहते हैं। यह बुरा लगता है और बिल्कुल अनावश्यक है। परन्तु फ़ौजी जीवन में, विशेष रूप से लाल सेना के जीवन-क्रम में बहुत कुछ ऐसा है, जो प्रभावोत्पादक एवं उत्साहवर्धक है और मैं अपने काम में इस सुगठन की उपयोगिता का अधिकाधिक क़ायल हो गया हूं। बच्चों में इस "सैन्यीकरण" को और भी आकर्षक बनाने, इसे अधिक बालोचित एवं सुखद बनाने का सहज गुण है। मेरे समुदाय का कुछ हद तक सैन्यीकरण हुआ। प्रथमतः, हम जिस शब्दावली का उपयोग करते थे, वह कुछ-कुछ फ़ौजी ढंग की थी, जैसे "टुकड़ी का कमांडर"। शब्दावली महत्त्वपूर्ण है। उदाहरणार्थ, मैं इससे सहमत नहीं हूं कि एक स्कूल को अपूर्ण माध्यमिक स्कूल* कहना ठीक है।

---

*अपूर्ण माध्यमिक स्कूल (सात साला स्कूल) – पूर्ण अथवा दस साला माध्यमिक स्कूल की पहली सात कक्षाएं। स्वतंत्र स्कूलों के रूप में भी उनका संचालन होता है। बिना प्रवेश परीक्षाओं को दिये ही सातवीं कक्षा पास विद्यार्थी दस साला स्कूल की आठवीं कक्षा में दाख़िल हो सकता है अथवा परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने के बाद विशेष माध्यमिक स्कूलों में (तकनीकी, मेडिकल, ट्रेनिंग कालेज आदि) नाम लिखा सकता है।

मैं इस बात पर विचार करूंगा। यह कैसा लगता है: मैं एक अपूर्ण माध्यमिक स्कूल जाता हूं। निश्चय ही एक विकृत नाम है। स्वयं विद्यार्थियों के लिए नाम आकर्षक होना चाहिए। मैंने शब्दावली के प्रश्न पर ग़ौर किया। जब मैंने अपने सीनियरों को टोली का नेता कहने का सुझाव प्रस्तुत किया, तो किशोरों ने कहा कि यह उपयुक्त नहीं है। एक टोली का नेता उद्योग में मज़दूरों की एक टोली का नेता होता है और हमें अपनी टुकड़ी का एक कमांडर चाहिए। परन्तु, अन्ततः वह भी वही काम करेगा। किशोरों ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि वह तो है ही, परन्तु एक कमांडर आदेश दे सकता है, जबकि एक टोली का नेता यदि आदेश देने की कोशिश करे, तो उससे कह दिया जायेगा कि तुम अपना काम देखो। बाल-समुदाय में एक जन प्रबन्ध की समस्या को सुलझाने का उनका तरीक़ा बहुत अच्छा और आसान है।

"रिपोर्ट" शब्द को ही लीजिए। स्वभावतः, लड़का दिन भर का केवल विवरण हमें दे सकता था, परन्तु मैंने महसूस किया कि कुछ औपचारिकता उन्हें बहुत ही अच्छी लगती है। अपनी रिपोर्ट देने के लिए कमांडर को ऊपरी पोशाक अथवा दिन भर जिस कपड़े को वह पहने रहता है, उसमें नहीं, बल्कि अपनी वर्दी में उपस्थित होना चाहिए। रिपोर्ट प्रस्तुत करते समय अभिवादन में फ़ौजी ढंग से उसे अपना हाथ उठाये रखना चाहिए और बैठे-बैठे मैं भी रिपोर्ट नहीं ले सकता। वहां उपस्थित सभी व्यक्तियों को भी खड़ा होना और अभिवादन करना चाहिए। इस प्रकार वे टुकड़ी, पूरे समुदाय के काम के प्रति अपना सम्मान प्रकट कर रहे हैं।

ख़ैर बहुत-सी ऐसी बातें हैं, जो फ़ौजी जीवन से ग्रहण की जा सकती हैं और समुदाय के दैनिक कार्यों तथा आन्दोलन में लागू की जा सकती हैं। उदाहरणार्थ, आम सभाओं के उद्घाटन के लिए कम्यून की अपनी शानदार परम्परा थी। यह विशेषाधिकार केवल ड्यूटी पर तैनात कमांडर को प्राप्त था। आश्चर्यजनक बात यह थी कि इस परम्परा को इतना अधिक महत्त्व प्राप्त हो गया कि यदि कोई बड़ा व्यक्ति भी कम्यून में आता था, यदि स्वयं जन-कमिसार भी पधारते थे, तो भी ड्यूटी पर तैनात कमांडर के अलावा और किसी को आम सभा का उद्घाटन नहीं करने दिया जाता था। सभी को सभा में उपस्थित होने के लिए सूचनार्थ बिगुल बजाये जाते थे। उसके बाद छज्जे पर बैठा हुआ वादक दल तीन मार्च बजाता था।

पहले मार्च के समय लोग इच्छानुसार बैठ सकते थे ग्रौर बातें कर सकते थे, इधर-उधर ग्रा-जा सकते थे। परन्तु जब वादक दल तीसरे मार्च को बजाना समाप्त करनेवाला होता, तो मुझे हाल में पहुंच ही जाना चाहिए। मैं महसूस करता था कि यह मेरा कर्त्तव्य है: यदि मैं नहीं पहुंचता, तो ग्रनुशासन भंग करने का मैं दोषी हो जाता। फिर यह ग्रावाज़ गूंज जाती – "सावधान! झण्डा लाया जाये!" मैं झण्डा नहीं देख पाता, परन्तु मुझे पक्का विश्वास रहता कि उसे पास ही कहीं रखा गया होगा ग्रौर एक बार जब ग्रादेश दे दिया गया है, तो इसे ग्रन्दर लाया जायेगा। जब कमरे में झण्डा लाया जाता, तो सभी खड़े हो जाते ग्रौर वादक दल विशेष ध्वज-ग्रभिवादन राग बजाता। ज्योंही ध्वज-वाहक मंच पर ग्रपना-ग्रपना स्थान ग्रहण कर लेते, तो यह समझा जाता कि सभा का उद्घाटन हो गया है ग्रौर इसके बाद उस दिन ड्यूटी पर तैनात कमांडर ग्रन्दर ग्राता ग्रौर कहता: "सभा का उद्घाटन हो गया है।" ग्रौर दस साल तक एक भी सभा का उद्घाटन ग्रन्य किसी ढंग से नहीं हुग्रा।

इस परम्परा से समुदाय सुशोभित होता है, ऐसा ढांचा निर्मित होता है, जिसके ग्रन्तर्गत जीवन ग्राकर्षक हो सकता है ग्रौर ऐसा होने से इस ग्रोर ध्यान ग्राकृष्ट होता है। इस परम्परा का शानदार ग्रन्तर्य लाल झण्डा है।

इसी परम्परा के ग्रनुसार ग्राम सभा सर्वोत्कृष्ट ग्रौर योग्यतम कम्युनार्डों में से ध्वज-वाहकों ग्रौर उनके ग्रनुगामियों का "उनके कम्यून के जीवन-काल के ग्रन्त तक" ग्रर्थात् कम्यून में उनके रहते समय तक चुनाव करती थी। ध्वज-वाहकों को सज़ा नहीं दी जा सकती थी, ग्रपने लिए उनका एक कमरा था, एक विशेष सर्वोत्कृष्ट पोशाक थी ग्रौर जब वे झण्डे की निगरानी करते थे, तो उस समय उन्हें उनके प्रचलित नाम से सम्बोधित नहीं किया जा सकता था।

झण्डे के प्रति सम्मान बहुत बड़ा शैक्षिक साधन है। द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में निम्नांकित ढंग से इसे प्रदर्शित किया जाता था: जिस कमरे में झण्डा रखा जाता था, यदि फिर से उसकी रंगाई की ग्रावश्यकता होती ग्रौर झण्डे को वहां से ग्रन्यत्र हटाना पड़ता, तो इसका एकमात्र तरीक़ा यही था कि सभी विद्यार्थी पंक्तिबद्ध खड़े कर दिये जाते थे, बैंड बजता रहता था ग्रौर इस प्रकार धूमधाम से दूसरे कमरे में झंडे को हटाया जाता था।

हमने प्राय: पूरे उक्रइना, वोल्गा प्रदेश, काकेशिया ग्रौर क्रीमिया की यात्रा की ग्रौर एक क्षण के लिए भी लाल झण्डे को बिना निगरानी के नहीं छोड़ा गया। जब मेरे शिक्षक साथियों ने इस सम्बन्ध में सुना, तो उन्होंने कहा: "ग्राप क्या कर रहे हैं? लड़कों को रात में सोना है। ग्राप उनके स्वास्थ्य के लिए ये यात्राएं कर रहे हैं ग्रौर फिर भी ग्राप उन्हें रात भर झण्डे की निगरानी के लिए खड़ा रखते हैं।"

हमारे विचार भिन्न थे। मैं इसे नहीं समझ सकता था कि प्रयाण के समय झण्डे को बिना निगरानी के कैसे छोड़ा जा सकता है।

कम्यून के प्रवेश-द्वार पर ग्रच्छी राइफ़ल लिये एक संतरी सदा खड़ा रहता था। मुझे इसका उल्लेख करने में भी डर लगता है। निस्सन्देह उसके पास कारतूस नहीं होते थे, परन्तु उसे व्यापक ग्रधिकार प्राप्त थे। ग्रक्सर तेरह या चौदह वर्ष का लड़का संतरी की ड्यूटी पर रहता था। वे बारी-बारी से यह कार्य करते थे। उनका काम बाहर से ग्रानेवाले ग्रपरिचित व्यक्ति को रोककर उसका पहचानपत्र देखना, उसके ग्राने का उद्देश्य पता लगाना, किससे वह मिलना चाहता है, इसे पूछना था ग्रौर राइफ़ल सामने करके उसे रोक देने का भी उन्हें ग्रधिकार था। रात में दरवाजा बन्द नहीं किया जाता था ग्रौर संतरी को रखवाली करनी पड़ती थी। कभी-कभी वह भयभीत हो जाता था, परन्तु किसी प्रकार वह दो घंटे की ग्रपनी ड्यूटी पूरी करता था। एक बार उक्रइनी शिक्षा की जन-कमिसारियत की एक पेडोलाजिस्ट महिला ग्रसाधारण समिति (चेका) के एक कार्यकर्ता के साथ कम्यून में ग्राई। उनमें कौतूहलपूर्ण बातचीत हुई: "क्या ग्रापका ग्रभिप्राय है कि वह वहां सिर्फ़ खड़ा रहे?" उस महिला ने पूछा। "हां, यही उसका काम है।" "वह ऊब जाता होगा। ग्रापको चाहिए कि उसे किताब पढ़ने की इजाजत दे दें।" इसके उत्तर में उसने कहा: "एक संतरी ड्यूटी पर किताब कैसे पढ़ सकता है?" "किन्तु समय का सदुपयोग तो ग्रवश्य ही होना जाहिए। एक व्यक्ति को ग्रपना ज्ञान बढ़ाना चाहिए।" दो विभिन्न विचारों के व्यक्ति: उस महिला को इस बात पर ग्राश्चर्य था कि संतरी कुछ नहीं कर रहा था ग्रौर ग्रसाधारण समिति के कार्यकर्ता को इस सुझाव पर कि संतरी को ड्यूटी पर पढ़ना चाहिए। उन्हें विभिन्न बातों पर ग्राश्चर्य हुग्रा।

एक दूसरा नियम यह था, वस्तुतः वह भी परम्परा थी। रेलिंग को पकड़े हुए सीढ़ियों से उतरने की इजाज़त नहीं थी। मैं जानता था कि कैसे यह परम्परा शुरू हुई। उस अच्छी इमारत में सीढ़ियां अच्छी थीं और सीढ़ियों से चढ़ते-उतरते समय जहां लोग रेलिंग को पकड़ लेते थे, वहां सीढ़ी घिस जाती थी और इस कारण किशोरों ने सीढ़ियों को पूर्ववत बनाये रखने के उद्देश्य से यह नियम बनाया। परन्तु, बाद में उन्होंने इस कारण को भुला दिया। नये विद्यार्थी पूछते : "हमें सीढ़ियों के रेलिंग को क्यों नही पकड़ना चाहिए?" इसका उत्तर यह था : "क्योंकि तुम्हें रेलिंग को पकड़कर नहीं, बल्कि कमर के ज़ोर से सीढ़ियों से चढ़ना-उतरना चाहिए।" मूलतः कमर को मज़बूत बनाना इसका उद्देश्य नहीं था : अभिप्राय सीढ़ियों को पूर्ववत बनाये रखना ही था।

फ़ौजी चुस्ती और सुव्यवस्था होनी ही चाहिए, परन्तु किसी भी स्थिति में पूर्णतः सैनिकों की भांति सामान्य शस्त्राभ्यास नहीं करना चाहिए। बन्दूक़ चलाना और घुड़सवारी तथा सैन्य विज्ञान की भी शिक्षा दी जाती है। और इसका अर्थ है कार्यकुशलता और सौंदर्य-बोध शिक्षा, जो किशोरों के एक समुदाय के लिए नितान्त आवश्यक है। इस प्रकार का प्रशिक्षण विशेष रूप से बहुत उपयोगी है, क्योंकि इससे समुदाय की शक्ति क़ायम रहती है, मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि इससे बालकों को अस्पष्ट, अनुपयुक्त चेष्टा, शिथिल एवं निरुद्देश्य काम न करने की शिक्षा प्राप्त होती है। इस प्रसंग में वर्दी का प्रश्न बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इस बारे में आप मुझसे बेहतर जानते हैं और इस सम्बन्ध में शिक्षा की जन-कमिसारियत और पार्टी का सुनिश्चित दृष्टिकोण है, इसलिए मैं विस्तार से इस बारे में कुछ नहीं कहूंगा। परन्तु ख़ूबसूरत और आरामदेह होने पर ही वर्दी अच्छी मालूम पड़ती है। अन्ततः न्यूनाधिक आरामदेह और ख़ूबसूरत वर्दी पहनने की प्रथा लागू करने के पहले मुझे अनेक प्रकार की बहुत-सी कठिनाइयों और बाधाओं का सामना करना पड़ा।

परन्तु जहां तक वर्दियों का सम्बन्ध है, मैं इस प्रश्न पर आगे कुछ और भी करने को तैयार हूं। मेरे विचार से बच्चों के कपड़े इतने ख़ूबसूरत और आकर्षक होने चाहिए कि उनसे आनन्दपूरित आश्चर्य की भावना पैदा हो। बीते युगों में फ़ौजें आकर्षक वर्दियां पहनती थीं। यह विशेषाधिकार प्राप्त वर्गों की शान थी। हमारे समाज में ख़ूबसूरत कपड़े पहनने के

विशेषाधिकार से युक्त वर्ग बच्चों का होना चाहिए। मैं किसी भी अन्य चीज पर नहीं अटकूंगा, मैं प्रत्येक स्कूल को बहुत ही आकर्षक वर्दी देना चाहूंगा। यह समुदाय को संयुक्त रखने के लिए एक बहुत अच्छे "सरेस" का काम करती है। न्यूनाधिक मैं इसी दिशा की ओर अग्रसर हुआ, परन्तु दुर्भाग्य से मेरे पर कतर दिये गये थे। मैंने जो वर्दी निर्धारित की थी, उसमें ये चीजें शामिल थीं–सुनहरे और रुपहले मोनोग्राम, बेलबूटोंवाली मख़मल की छोटी टोपी, सफ़ेद कपड़े की कलफ़ लगाई हुई कालर, इत्यादि। और जिस समुदाय को आप अच्छी वर्दी पहनाते हैं, उसकी व्यवस्था करना आधा आसान है।

दूसरा व्याख्यान

अनुशासन, क़ायदा, सज़ा और पुरस्कार

आज मैं अनुशासन, क़ायदा, सज़ा और पुरस्कार के विषय में अपने विचार आपके सम्मुख प्रस्तुत करूंगा। एक बार फिर मैं आपको इसका स्मरण दिला देना चाहता हूं कि मेरी प्रस्थापनाएं पूर्णतया मेरे निजी अनुभव पर आधारित हैं, जिसे मैंने वस्तुतः असाधारण परिस्थितियों में, अधिकांशतः बाल-अपराधियों की कोलोनियों और कम्यूनों में प्राप्त किया। परन्तु मुझे इसका यक़ीन है कि अलग-अलग निष्कर्ष नहीं, बल्कि मेरे निष्कर्षों की आम प्रणाली सामान्य बाल-समुदाय में लागू की जा सकती है। इसका तर्क यह है।

किशोर-अपराधियों की एक संस्था के प्रधान की हैसियत से अपने १६ वर्षों के काम में अन्तिम दस साल अथवा बारह वर्ष के काम को मैं सामान्य कार्य के रूप में मानता हूं। यह मेरा पक्का विश्वास है कि लड़के-लड़कियां अपराधी अथवा "असामान्य" "अपराधी" या "असामान्य" शिक्षाशास्त्र का इस्तेमाल करने के कारण बन जाते हैं। सामान्य शिक्षाशास्त्र, प्रभावकारी और उद्देश्यपरक शिक्षाशास्त्र लागू करने से ऐसा बाल-समुदाय एक पूर्णतः सामान्य समुदाय में बहुत शीघ्र परिवर्तित हो जाता है। पैदाइशी अपराधी अथवा सहजतः बुरी आदतोंवाले बच्चों के होने जैसी कोई बात नहीं है; व्यक्तिगत रूप से अनुभव द्वारा मुझे शत प्रतिशत विश्वास हो गया है कि तथ्य यही है। द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में अपने कार्य-काल के अन्तिम वर्षों में मैंने बहुत ज़ोर देकर इस विचार पर ही आपत्ति प्रकट की थी कि मेरा समुदाय सामान्य बच्चों का नहीं है, कि वह बाल-अपचारियों का समुदाय है, और इसलिए आज आपके सम्मुख जिन निष्कर्षों और तरीक़ों को प्रस्तुत करने का मेरा इरादा है, वे सामान्य बच्चों के लिए भी उपयुक्त हैं।

अनुशासन क्या है? व्यवहारतः कुछ शिक्षक और शिक्षाशास्त्रीय चिन्तक शिक्षा के एक साधन के रूप में अनुशासन को समझने के आदी

हैं। मेरा विचार यह है कि अनुशासन शिक्षा का साधन नहीं, बल्कि शिक्षा का नतीजा है, और शिक्षा के साधन के रूप में इसे क़ायदे से भिन्न होना ही चाहिए। क़ायदा शिक्षा को सुविधाजनक बनाने के लिए साधनों और तरीक़ों की एक सुनिश्चित व्यवस्था है। और इस शिक्षा का फल अनुशासन है।

यह दावा करते हुए मैं सुझाव प्रस्तुत करता हूं कि क्रान्ति के पहले—क्रान्तिपूर्व स्कूलों और क्रान्तिपूर्व समाज में—परम्परागत रूप में अनुशासन का जो अर्थ लगाया जाता था, उसकी अपेक्षा अब इसका अधिक व्यापक अर्थ लगाना चाहिए। उस समय यह प्रभुत्व का एक ढंग था, व्यक्तित्व, व्यक्तिगत संकल्प और व्यक्तिगत आकांक्षा को कुचलने का ढंग था और यहां तक कि कुछ हद तक प्रभुत्व क़ायम रखने का तरीक़ा, सत्ताधारियों के सम्मुख गिड़गिड़ाते हुए व्यक्ति को झुकाने का तरीक़ा था। पुराने शासन-काल में रहनेवाले तथा पढ़ने के लिए स्कूल जानेवाले हम सभी व्यक्ति अनुशासन का यही अर्थ लगाते थे और सभी जानते हैं कि हम तथा शिक्षक भी अनुशासन का अभिप्राय यही समझते थे: अनुशासन एक अनिवार्य नियमसंग्रह था, जो सुविधा, व्यवस्था और भलाई जैसी बातों के लिए आवश्यक था। यह केवल ऊपरी भलाई थी, जो नैतिक नहीं, बल्कि एक प्रकार का बन्धन थी।

हमारे समाज में अनुशासन की धारणा नैतिक और राजनीतिक दोनों ही है। और फिर भी मैं देखता हूं कि कुछ शिक्षक इस समय भी अनुशासन के सम्बन्ध में पुराने विचार का परित्याग नहीं कर पाते। पुराने समय में एक अनुशासनशून्य व्यक्ति एक आचारहीन व्यक्ति, सामाजिक आचार-संहिता के विरुद्ध आचरण करनेवाले एक व्यक्ति के रूप में नहीं समझा जाता था। आपको याद होगा कि पुराने स्कूल में हम और हमारे साथी दोनों ही अनुशासन की इस अवज्ञा को वीरता के समान, साहसिक कार्य अथवा किसी भी रूप में एक प्रकार का विनोदपूर्ण, मनोरंजक खेल समझते थे। केवल विद्यार्थी नहीं, बल्कि ख़ुद शिक्षक भी सभी प्रकार की शरारत को उल्लास अथवा हास्यप्रियता या शायद क्रान्तिकारी भावना की अभिव्यक्ति मानते थे।

हमारे समाज में अनुशासन की अवहेलना का अर्थ यह है कि अनुशासनशून्य व्यक्ति समाज के विरुद्ध कार्य कर रहा है और हमें

राजनीतिक एवं नैतिक दृष्टिकोण से उसके व्यवहार के बारे में धारणा बनानी चाहिए। प्रत्येक शिक्षक को इसी दृष्टिकोण से अनुशासन के प्रश्न पर ग़ौर करना चाहिए, बशर्ते कि अनुशासन को वस्तुत: शिक्षा का नतीजा माना जाये।

प्रथमत:, जैसा कि हम पहले से ही जानते हैं, हमारा अनुशासन सदा सचेत अनुशासन होना चाहिए। स्पष्टत: इस सदी के तीसरे दशक में जब स्वतंत्र शिक्षा का सिद्धान्त अथवा यथार्थत: स्वतंत्र शिक्षा की प्रवृत्ति बहुत व्यापक रूप से लोकप्रिय थी, उसी समय सचेत अनुशासन-सम्बन्धी इस सूत्र की विस्तृत व्याख्या की जा रही थी कि अनुशासन की भावना चेतना से पैदा होनी चाहिए। मैंने अपने प्रारम्भिक प्रयोग में ही अनुभव कर लिया कि इस सूत्र का केवल अनर्थकारी परिणाम होगा। एक व्यक्ति को यह समझाना कि उसे आज्ञा माननी चाहिए और यह आशा करना कि यह अनुशासन का पालन करने के लिए काफ़ी है, ५० या ६० प्रतिशत ख़तरा उठाने के समान है।

अनुशासन केवल चेतना पर आधारित नहीं हो सकता, क्योंकि यह किन्हीं विशेष उपायों का नहीं, बल्कि सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया का परिणाम है। यह सोचना ग़लत है कि अनुशासन पैदा करने की ओर लक्षित कुछ विशेष उपायों से अनुशासन की भावना पैदा की जा सकती है। अनुशासन शैक्षिक प्रयासों का कुल निष्कर्ष है, जिनमें शिक्षण प्रक्रिया, राजनीतिक शिक्षा की प्रक्रिया, चरित्र-निर्माण की प्रक्रिया, समुदाय में, मैत्री और विश्वास की प्रक्रिया में झगड़ों का सामना करने तथा उन्हें सुलझाने की प्रक्रिया और समस्त शैक्षिक प्रक्रिया सम्मिलित हैं, जिनमें शारीरिक शिक्षा, शारीरिक विकास आदि भी शामिल हैं।

केवल उपदेश पर अनुशासन क़ायम करने की आशा करने का अर्थ है बहुत ही अल्प फल का विश्वास रखना।

जब भी उपदेश देने की नौबत आई, तो अनुशासन का सबसे कड़ा विरोध किया गया (मेरे कहने का अर्थ है कुछ विद्यार्थियों द्वारा)। और मौखिक रूप से अनुशासन की आवश्यकता के बारे में उन्हें विश्वास दिलाने के किसी भी प्रयास का इसी प्रकार उग्र विरोध होता था।

और इसलिए इस प्रकार अनुशासन की भावना पैदा करने की कोशिश से केवल अन्तहीन विवाद की स्थिति पैदा हो सकती है। परन्तु इसके

बावजूद मैं दृढ़तापूर्वक इस बात पर ज़ोर देना चाहता हूं कि क्रान्तिपूर्व अनुशासन से भिन्न हमारे अनुशासन को नैतिक और राजनीतिक धारणा के रूप में चेतना पर आधारित होना चाहिए, अर्थात् इसके साथ ही इसका पूर्ण ज्ञान होना चाहिए कि अनुशासन क्या है और किसलिए इसकी आवश्यकता है।

इस प्रकार का चेतनायुक्त अनुशासन कैसे क़ायम किया जा सकता है?

हमारे स्कूल में कोई नैतिकता के सिद्धान्त की पढ़ाई नहीं है, इस प्रकार का कोई विषय नहीं है और न तो इस सिद्धान्त की शिक्षा देने के लिए कोई शिक्षक नियुक्त है और न कोई निश्चित कार्यक्रम के अनुसार इसे बच्चों को बतलाने के लिए बाध्य है।

पुराने स्कूल में धार्मिक शिक्षा दी जाती थी। यह एक ऐसा विषय था, जिसका खण्डन न केवल विद्यार्थी, बल्कि अक्सर स्वयं पादरी भी किया करते थे। पादरी इसका बहुत कम सम्मान करते थे, परन्तु इसके साथ ही इससे कई नैतिक प्रश्न प्रस्तुत हो जाते थे, जिनके सम्बन्ध में पढ़ाई के समय किसी न किसी रूप में चर्चा हो जाती थी। इस सिद्धान्त के अच्छे परिणाम हुए या नहीं, यह एक अलग प्रश्न है, परन्तु कुछ हद तक नैतिकता की समस्याएं विद्यार्थियों के सम्मुख सैद्धान्तिक रूप में प्रस्तुत की जाती थीं, अर्थात् उनसे कहा जाता था: चोरी मत करो, किसी की हत्या मत करो, किसी का अपमान न करो, अपने बड़ों का सम्मान करो, मां-बाप का आदर करो, आदि। ये नैतिक धारणाएं, ईसाई नैतिकता की धारणाएं, जिनका अभिप्राय विश्वास और धर्म की भावना मन में भरना था, सैद्धान्तिक रूप में अभिव्यक्त हुई और नैतिक नियम – चाहे वे केवल पुराने धार्मिक रूप में ही क्यों न हों – विद्यार्थियों को समझाये जाते थे।

मैं अपने प्रयोग से इस नतीजे पर पहुंचा कि हमें भी नैतिकता के सिद्धान्त की शिक्षा विद्यार्थियों को देनी चाहिए। हमारे आधुनिक स्कूलों में इस प्रकार के किसी विषय की शिक्षा नहीं दी जाती। हमारे पास शिक्षकों का समुदाय है, कोम्सोमोल संगठक हैं और युवा पायनियर नेता हैं, जो यदि चाहें, तो विद्यार्थियों के सम्मुख नैतिकता का उपयुक्त सिद्धान्त और सदाचार का सिद्धान्त प्रस्तुत कर सकते हैं।

मुझे पूरा यक़ीन है कि अपने सोवियत स्कूल के भावी विकास में हम अनिवार्यतः नैतिकता के सिद्धान्त की शिक्षा देने की विधि अपनायेंगे। मैं

एक क्रमिक विषय के रूप में, निश्चित रूप में विद्यार्थियों के सम्मुख नैतिकता का सिद्धान्त प्रस्तुत करने को विवश हो गया। मुझे स्वयं नैतिकता जैसे एक विषय की पढ़ाई शुरू करने का कोई अधिकार नहीं था, परन्तु मैंने अपने निजी मार्ग-दर्शन के लिए जो कार्यक्रम तैयार किया था, उसे मैं आम सभाओं में विभिन्न बहानों से विद्यार्थियों के सम्मुख प्रस्तुत करता था।

अपने अनुभव-क्रम में नैतिक सिद्धान्त के ढंग के इन भाषणों को लिखते समय मैंने एक कार्यक्रम निर्धारित कर लिया। मुझे कुछ हद तक इस दिशा में प्रयासों को पूरा करने का समय और अवसर सुलभ था और मैंने नतीजे देखे – वे बहुत अच्छे और प्रभावकारी थे, पुराने स्कूल के एक प्रबुद्ध पादरी द्वारा प्राप्त नतीजों से भी अत्यन्त बेहतर।

चोरी के प्रश्न को ही लीजिए। हमें ईमानदारी के सिद्धान्त – अपनी खुद की वस्तुओं, दूसरों की चीजों और राज्य की चीजों के प्रति सम्बन्ध के सिद्धान्त – को अपार विश्वास, सम्यक् विवेक और बड़ी प्रेरणा के साथ विकसित करने की सम्भावना सुलभ है। सम्पत्ति के सम्बन्ध में इस ठोस आचारिक सिद्धान्त, चोरी रोकने के इस सिद्धान्त से चोरी की बुराई के बारे में पुराने प्रवचन के प्रभाव और शक्ति का कोई मुकाबला नहीं है, क्योंकि इस पुराने तर्क में शायद ही किसी को विश्वास हुआ कि किसी व्यक्ति को चोरी नहीं करनी चाहिए अन्यथा ईश्वर उसे दण्ड देगा, और इससे चोरी को रोकना भी संभव न हुआ।

आत्म-नियंत्रण, स्त्रियों, बच्चों और वृद्धजनों के प्रति सम्मान, स्वयं अपने लिए आदर और सम्पूर्ण समाज अथवा समुदाय के प्रति व्यवहार-सम्बन्धी सिद्धान्त को सर्वाधिक विश्वसनीय और स्वीकरणीय रूप में विद्यार्थियों के सम्मुख प्रस्तुत किया जा सकता है।

मेरे ख़याल में सदाचार का ऐसा सिद्धान्त, सोवियत सदाचार का सिद्धान्त हमारे सामाजिक जीवन, हमारे सामाजिक व्यवहार, गृहयुद्ध के इतिहास, हमारे सोवियत संघर्ष और विशेष रूप से कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास के अनेक तथ्यों से इस प्रकार प्रमाणित है कि इस विषय को रुचिकर और विश्वसनीय रूप में प्रस्तुत करने में बहुत ही कम प्रयास करना पड़ेगा।

मैं इस दावे को तर्कसंगत मानता हूं कि एक समुदाय, जिसके सम्मुख नैतिकता का यह सिद्धान्त प्रस्तुत किया जाता है, निस्सन्देह इसे पूर्णतया

ग्रंगीकार करेगा और प्रत्येक विद्यार्थी अलग-अलग हरेक उदाहरण में अपने लिए कुछ अनिवार्य नैतिक नियमों और सूत्रों को ढूंढ़ निकालेगा।

मुझे स्मरण है कि कैसे कुछ मामलों में इस नैतिक विषय पर एक ही भाषण के बाद मेरे समुदाय ने शीघ्र ही ख़ुशी से नया जीवन अपना लिया था। और इस प्रकार की व्याख्यान-माला अथवा नियमित व्याख्यानों का समुदाय के नैतिक दर्शन पर यथार्थतः अनुकूल प्रभाव पड़ा।

यहां आधार के रूप में कौन-से आम सिद्धान्त उपयुक्त होंगे?

मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूं कि सामान्य नैतिक सिद्धान्तों की निम्नांकित सूची उपयोगी सिद्ध होगी। सर्वप्रथम, अपने राजनीतिक और नैतिक कल्याण के रूप में समुदाय से अनुशासन की अपेक्षा करनी चाहिए।

इस पर भरोसा करना व्यर्थ है कि बाहरी उपायों, तरीक़ों अथवा यदा-कदा दिये गये भाषणों के फलस्वरूप स्वेच्छा से अनुशासन पैदा होगा। समुदाय पर अनुशासन सुस्पष्ट, सुनिश्चित कार्यभार के रूप में सुनिर्दिष्ट उद्देश्य के साथ लागू करना पड़ता है।

निम्नांकित निरूपणों से इन तर्कों और, अनुशासन को लागू करने की आवश्यकता पैदा होती है। प्रथमतः, प्रत्येक विद्यार्थी के मन में यह विश्वास पैदा हो जाना चाहिए कि अनुशासन सम्पूर्ण समुदाय को सर्वोत्तम ढंग से अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में समर्थ बनाने का तरीक़ा है। बड़ी स्पष्टता और उत्कटता से (मैं अनुशासन पर उत्साहशून्य प्रवचन के विरुद्ध हूं) प्रस्तुत किया जानेवाला वह तर्क, जो इस पर ज़ोर देता है कि बिना अनुशासन के एक समुदाय अपना लक्ष्य प्राप्त करने में समर्थ न होगा, कार्यपरिणति के सुनिश्चित सिद्धान्त, अर्थात् नैतिकता के सिद्धान्त की आधारशिला में रखी गई पहली ईंट सिद्ध होगा।

दूसरे, हमारे अनुशासन का विवेक इस पर बल देता है कि अनुशासन से अलग-अलग प्रत्येक व्यक्ति अधिक सुरक्षित और स्वतंत्र स्थिति में हो जाता है। यह विरोधाभासी दावा कि अनुशासन ही स्वतंत्रता है, किशोर समुदाय बहुत आसानी से स्वीकार कर लेता है। उनके लिए इसकी सत्यता हर क़दम पर प्रमाणित हो जाती है और अनुशासन के लिए अपने सक्रिय प्रचार में वे स्वयं कहते हैं कि यही स्वतंत्रता है।

समुदाय में अनुशासन का अर्थ है प्रत्येक व्यक्ति के लिए पूर्ण सुरक्षा, अपने अधिकार, अपनी योग्यता और अपने भविष्य में पूरा विश्वास।

निस्सन्देह इस सिद्धान्त की पुष्टि में हमारे सामाजिक जीवन, हमारे सोवियत इतिहास में अनेक तथ्य पाये जा सकते हैं। हमारी क्रान्ति और स्वयं हमारे समाज से इस नियम की पुष्टि होती है।

यहां एक दूसरे प्रकार की सामान्य नैतिक अपेक्षाएं हैं, जिन्हें एक बाल-समुदाय के लिए निर्धारित करनी चाहिए और जिनसे अन्ततः शिक्षक को किसी भी झगड़े को सुलझाने में सहायता प्राप्त होगी। प्रत्येक अलग-अलग मामले में, केवल मैं ही नहीं, बल्कि पूरा समुदाय दोषी व्यक्ति के विरुद्ध अन्य सदस्यों के हितों के प्रतिकूल कार्य करने और उन्हें उनकी उचित स्वतंत्रता से वंचित करने का इलजाम लगाता है।

वास्तव में विद्यार्थियों की ओर से इस सहयोग को प्राप्त करने का शायद यह कारण था कि उस समय जो भटके हुए तथा बाल-अपचारी मेरे सिपुर्द किये गये थे, उनमें से आधे से अधिक एक ऐसे बाल-समुदाय में कुछ समय व्यतीत कर चुके थे, जहां अनुशासन का अभाव था और अनुशासनशून्य जीवन के सारे भयंकर कष्ट झेल चुके थे। यह दस्यु-आचार का द्योतक था, जिसमें बड़े तथा अधिक बिगड़े हुए बच्चों में जो अगुआ थे, वे कमजोर तथा छोटे बच्चों पर अपना हुक्म चलाते थे, उनसे अपना मतलब निकालते थे और उन्हें चोरी तथा गुन्डागर्दी करने को विवश करते थे। एक समय के सताये गए इन बच्चों ने अनुशासन को अपने व्यक्तित्व के पूर्ण विकास की अनिवार्य शर्त मानते हुए इसे वास्तविक वरदान समझा।

यदि मेरे पास समय होता, तो मैं आप लोगों को एक अनुशासित वातावरण में इन बच्चों के प्रायः तत्काल नया जीवन प्राप्त करने के बारे में कुछ बहुत ही उल्लेखनीय उदाहरण बताता। परन्तु इस समय मैं आपको इस प्रकार के केवल एक उदाहरण के बारे में बताऊंगा।

१९३२ में एक रात आन्तरिक मामलों की जन-कमिसारियत के आदेश पर मैंने ख़ार्कोव स्टेशन पर रुकनेवाली एक्सप्रेस ट्रेनों से पचास परित्यक्त बच्चों को जमा किया। उन शरारती लड़कों का हाल बहुत बुरा था। पहली बात जिसकी ओर मेरा ध्यान आकृष्ट हुआ, वह यह थी कि यद्यपि मैंने उन्हें काकेशिया और क्रीमिया से आनेवाली अलग-अलग ट्रेनों से उतारा था, परन्तु वे एक-दूसरे को जानते थे, सचमुच जानते थे। यह "सागर तटीय गिरोह" था, जो इधर-उधर चक्कर लगाया करता था, रास्ते में मिल जाता था और उनमें किसी हद तक सम्बन्ध क़ायम था।

जब मैं उन्हें अपनी संस्था में ले आया, तो पहले उनसे नहाने को कहा, उनके बाल कटवा दिये, इत्यादि। और दूसरे ही दिन वे झगड़ा कर बैठे। यह तथ्य प्रकट हुआ कि उन्हें कई पुरानी बातों का एक-दूसरे से बदला लेना था। किसी ने किसी की कोई चीज़ चुरा ली थी, किसी ने किसी को अपमानित किया था, किसी ने अपना वादा तोड़ा था और तत्काल यह बात मुझे साफ़-साफ़ मालूम हो गई कि पचास लड़कों के इस गिरोह के अपने अगुआ थे, फ़ायदा उठानेवाले थे, इस पर अपनी हुकूमत जमानेवाले थे और इसके शोषित तथा उत्पीड़ित सदस्य थे। केवल मैंने ही नहीं, बल्कि मेरे कम्यूनार्डों ने भी इसे समझ लिया और हमने अनुभव किया कि एक पृथक् छोटे समुदाय के निर्माण की आशा से इन पचास लड़कों को एक साथ रखना भूल थी।

दूसरी ही शाम हमने अधिक शरारती लड़कों को सबसे तगड़ी टुकड़ियों में शामिल कर इस गिरोह के सदस्यों को अलग-अलग कर दिया।

एक सप्ताह तक हमने उन्हें मिल जाने पर पुरानी दुश्मनी का बदला लेने की कोशिश करते हुए देखा। समुदाय के दबाव से इसका अन्त हो गया, परन्तु कई लड़के कम्यून छोड़कर भाग गए, क्योंकि वे इस बात को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं थे कि उन्हें अपनी अपेक्षा अधिक शक्तिशाली शत्रु के समक्ष झुकने को विवश कर दिया गया था।

हमने कोम्सोमोल की बैठक में इस प्रश्न पर अच्छी तरह ग़ौर किया और अनुशासनशून्य जीवन की उन अनेक परिस्थितियों पर प्रकाश डाला, जिनमें अनुशासन के अभाव से व्यक्ति को कष्ट झेलना पड़ता था और तब अवसर का सदुपयोग करते हुए हमने इस नैतिक सिद्धान्त को समझाने के लिए, लड़कों को यह बताने के लिए कि अनुशासन का अर्थ व्यक्ति की स्वतंत्रता है, आन्दोलन शुरू किया और बड़े उत्साहपूर्ण, विश्वासप्रद और भावप्रवण ढंग से इस सिद्धान्त के समर्थन में बोलनेवाले वे ही नये लड़के थे, जिन्हें ख़ार्कोव रेलवे स्टेशन पर ट्रेनों से उतारकर मैं अपने कम्यून में ले आया था। उन्होंने बताया कि जब अनुशासन नहीं था, तो जीवन कितना दूभर था और कैसे नया जीवन-क्रम व्यतीत करने पर उस एक पखवारे के अपने अनुभव से उन्होंने यह समझ लिया कि अनुशासन क्या है।

उनको यह समझदारी इस कारण प्राप्त हुई कि हमने आन्दोलन शुरू कर दिया था और उन्हें भी बहस में भाग लेने के लिए आकृष्ट किया

था। यदि हमने उनसे इस बारे में बातचीत न की होती, तो वे संभवतः यह तो अनुभव कर लेते कि बिना अनुशासन के जीवन कष्टदायक है, परन्तु उन्हें यह समझदारी प्राप्त नहीं हुई होती।

मैंने इसी प्रकार के बच्चों में से, जिन्होंने परित्यक्त और भटके हुए बालक-बालिकाओं के समाज में व्याप्त अराजकता के कारण कष्ट उठाये थे, अनुशासन के कट्टर समर्थकों, इसके सर्वाधिक उत्साही पोषकों और सबसे बढ़कर समर्पण की भावना से पूरित प्रचारकों को विकसित किया। और यदि मुझे उन सभी लड़कों को याद करना हो, जो शिक्षक समुदाय में मेरे दाहिने हाथ थे, तो आप देखेंगे कि वे वही बच्चे थे, जिन्होंने बचपन में एक अनुशासनहीन समाज की अराजकता से सर्वाधिक कष्ट उठाये थे।

मेरे नैतिक सिद्धान्त की तीसरी बात, जिसे समुदाय के सम्मुख प्रस्तुत करना चाहिए, जिसे समुदाय को सदा स्मरण रखना चाहिए और जिससे अनुशासन के हेतु संघर्ष में उसका पथ-प्रदर्शन होना चाहिए, वह है: व्यष्टि के हितों की अपेक्षा समष्टि के हित महत्तर हैं। यह प्रकट होगा कि हम सोवियत नागरिकों के लिए यह पूर्णतया अवबोधनीय प्रमेय है। फिर भी व्यावहारिक रूप में अनेक बुद्धिमान, शिक्षित, सुसंस्कृत और यहां तक कि सामाजिक दृष्टि से बहुतेरे सुसंस्कृत लोग भी इसे अच्छी तरह नहीं समझ पाते।

हम दावे के साथ कहते हैं कि ऐसी अवस्थाओं में जहां व्यक्ति समुदाय का विरोधी है, वहीं व्यष्टि के हितों की अपेक्षा समष्टि के हित महत्तर हैं।

परन्तु किसी मामले में अक्सर इससे भिन्न निर्णय हो जाता है।

मुझे अपने जीवन-क्रम में एक बार इसी प्रकार के जटिल मसले का सामना करना पड़ा। द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में मेरे कार्य-काल के अन्तिम वर्षों में अनुशिक्षक नहीं थे, वहां केवल स्कूल में पढ़ानेवाले शिक्षक थे, परन्तु विशेष अनुशिक्षक नहीं थे और इस कारण हमारे सीनियर विद्यार्थी, मुख्यतः कोम्सोमोल के सदस्य शैक्षिक काम करते थे। जिस ढांचे पर हमारे समुदाय का गठन हुआ था, उसमें यह संभव था। विद्यार्थी टुकड़ियों में विभाजित थे और हर टुकड़ी का अपना कमांडर हुआ करता था। दिन में समुदाय जो कुछ भी करता था, उसके लिए कमांडरों में से एक जवाबदेह था: कमरों की सफ़ाई करना, चीज़ों को सुव्यवस्थित रखना, खाना परोसना और भोजन करना, बाहर से आनेवालों से भेंट करना, स्कूल

जाना और फ़ैक्टरी में काम करना। उसे ड्यूटी पर तैनात कमांडर कहा जाता था, वह हाथ पर पट्टी बांधता था और उसे बहुत अधिकार प्राप्त था, जो उसे अकेले ही दिन भर के कार्य-संचालन के लिए आवश्यक था। बिना किसी आपत्ति के उसके आदेशों का पालन करना पड़ता था और केवल दिन के समाप्त होने पर, अपनी ड्यूटी कर लेने के बाद, उसने जितने आदेश जारी किये थे, उनका उसे विवरण देना पड़ता था। किसी को उससे बैठे-बैठे बातें करने का अधिकार नहीं था, उसके सामने खड़ा रहना पड़ता था और किसी को उससे किसी भी रूप में आपत्ति करने का कोई अधिकार नहीं था। नियमत: ड्यूटी पर तैनात कमांडर एक सुयोग्य और सम्मानित कामरेड हुआ करता था और किसी ने भी कभी उसके आदेशों का उल्लंघन नहीं किया।

एक रोज़ ड्यूटी पर तैनात कमांडर एक लड़का था, जिसे हम संकेत के लिए इवानोव कहेंगे। वह कोम्सोमोल का सदस्य, हमारा एक होनहार सांस्कृतिक कार्यकर्ता, नाटक मण्डली का एक सदस्य और एक अच्छा औद्योगिक कामगार था। उसे सबका और मेरा भी सम्मान प्राप्त था। मैं ख़ुद सिम्फ़ेरोपोल से पकड़कर उसे उठा लाया था – वह बहुत समय से एक पथभ्रष्ट बच्चा था और क़ानून तोड़ने तथा आवारागर्दी की अनेक हरकतें कर चुका था।

शाम को मुझे अपनी रिपोर्ट देते समय उसने कहा कि किसी ने मेज़्याक नामक लड़के के हाल ही में ख़रीदे रेडियोसेट को चुरा लिया है। कम्यून में यह पहला रेडियोसेट था। मेज़्याक ने इसे ७० रूबल में ख़रीदा था। उसने अपने वेतन से रूबल बचाकर रेडियोसेट के लिए ६ महीने में यह रक़म जमा की थी। वह अपनी चारपाई के पास ही रेडियोसेट को रखता था और अब वह वहां से ग़ायब हो गया है। चूंकि कम्यून में ताला लगाने की इजाज़त नहीं थी, इसलिए शयनागार सदा खुला रहता था, परन्तु दिन में कमरे में जाने की मनाही थी और किसी भी परिस्थिति में कोई भी कम्यूनार्ड अन्दर नहीं गया होगा, क्योंकि वे वहां से दूर काम पर थे।

मैंने आम सभा आयोजित करने का सुझाव दिया, जिसमें इवानोव से भाषण करने को कहा गया। उसने बहुत होशियारी से भाषण दिया, यह राय प्रकट की कि हो सकता है कि कोई अपने औज़ार लेने कमरे में आ

गया हो, इत्यादि; उसने सभा को अपना सन्देह बताया और एक कमीशन का चुनाव करने का प्रस्ताव रखा और आम सभा से इस मामले की पूरी छानबीन करने तथा अपराधी का पता लगाने का अनुरोध किया, क्योंकि उसे मेज़्याक से सहानुभूति थी और लोग इस हरकत से चिन्तित भी थे – एक ऐसी चीज़ की चोरी, जिसके लिए एक व्यक्ति ६ महीने से अपने वेतन से पैसे बचा रहा था।

परन्तु उस शाम, लड़कों के सोने चले जाने तक भी कुछ भी पता नहीं लगा। प्रसंगत: मेज़्याक क़रीब १२ वर्ष का था।

दूसरे दिन भोर में निचली कक्षा के विद्यार्थियों का एक समूह, जिनमें सभी युवा पायनियर थे, मेरे पास आया और मुझे बताया कि पांच बजे उठकर उन्होंने सम्पूर्ण कम्यून की तलाशी ली और नाट्यशाला में रंगमंच के नीचे छिपाकर रखे हुए रेडियोसेट को ढूंढ़ निकाला। उन्होंने मुझसे इस पर निगाह रखने के लिए दिन भर की छुट्टी देने का अनुरोध किया।

वे दिन भर वहां रहे और तब आकर उन्होंने मुझे बताया कि स्वयं इवानोव ने ही रेडियोसेट को चुराया था: उन्होंने कई बार उसे प्राम्पटर-बक्स के निकट आते और वहां कान लगाकर सुनते हुए कुछ मिनट तक खड़े रहते देखा। उनके पास कोई अन्य प्रमाण नहीं था। उसके विरुद्ध यही सबूत था कि वह ड्यूटी पर नहीं था, फिर भी अन्दर आया और प्राम्पटर-बक्स के पास खड़ा होकर और कान लगाकर बातें सुनीं।

मैंने सब की बाजी लगाने का निर्णय कर लिया: मैंने इवानोव को बुलाया और उससे कहा:

"तुम्हीं ने रेडियोसेट की चोरी की।"

उसका चेहरा पीला पड़ गया, वह चुपचाप बैठ गया और उसने कहा: "हां"।

हमारी आम सभा में यह मामला बहस का विषय बन गया। कोम्सोमोल संगठन ने इवानोव को निष्कासित कर दिया और कम्यूनार्डों के हाथ में इस मामले को सौंप दिया। एक लड़का अध्यक्ष के आसन पर विराजमान था, जिसे रोबेसपियेर के नाम से पुकारा जाता था: वह सदैव एक बात प्रस्तावित करता था – कम्यून से निष्कासन। इस बार भी सभा ने इवानोव को निकाल बाहर करने, यथार्थत: लात मारकर हटाने और सीढ़ियों से नीचे फेंक देने का निर्णय किया।

मैंने अन्य मामलों का स्मरण दिलाते हुए, जब उपस्थित शिक्षार्थियों में से फलां-फलां को प्रायः निष्कासित कर दिया गया था, इस क़दम पर अपनी आपत्ति प्रकट की, परन्तु मुझे कोई सफलता नहीं मिली।

तब मैंने आन्तरिक मामलों की जन-कमिसारियत (चेका) को फ़ोन किया और उन्हें बताया कि आम सभा ने एक लड़के को लात मारकर निकाल बाहर करने का प्रस्ताव मंज़ूर किया है। जन-कमिसारियत ने उत्तर दिया कि वे इस निर्णय का अनुमोदन नहीं करेंगे और यह कि सभा द्वारा इसे रद्द कराना मेरा काम है।

कम्यूनार्डों पर मेरा बड़ा प्रभाव था और मैं जो भी चाहता था, कभी-कभी बहुत कठिन बातें भी उनसे करा लेता था। परन्तु इस मामले में मैं निरुपाय हो गया था – इस कम्यून के अस्तित्व में आने के बाद उन्होंने पहली बार मुझे बोलने की अनुमति नहीं दी।

और स्थिति यही थी। फिर भी मैंने उन्हें बताया कि आन्तरिक मामलों की जन-कमिसारियत की स्वीकृति पाने के पहले ही उन्हें इवानोव को निकाल बाहर करने का अधिकार नहीं है। उन्होंने इस पर सहमति प्रकट की कि मेरा कहना ठीक है और दूसरे दिन सभा होने तक, जब कि जन-कमिसारियत के प्रतिनिधियों के सम्मुख वे अपने निर्णय को दुहराते, इस बात को स्थगित कर दिया।

मेरे लिए परेशानी की बात पैदा हुई, निर्णय को रद्द कराने में विफल होने के लिए मेरी आलोचना की गई। दूसरे दिन चेका के कई आदमी कम्यून में पहुंचे।

"आप लोग यहां किस उद्देश्य से आये हैं? इवानोव की तरफ़दारी करने के लिए?" लड़कों ने पूछा

"नहीं, यह देखने के लिए कि न्याय हो।"

और तब अनुशासन के प्रश्न पर चेका के प्रतिनिधियों और कम्यूनार्डों के बीच बहस शुरू हुई, वह बहस मेरे लिए इस समय भी इस बहुत ही महत्त्वपूर्ण समस्या की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत करने के लिए आधार का काम कर सकती है।

चेका के प्रतिनिधियों ने आम सभा में जो कुछ कहा, वह इस प्रकार था: "तुम लोग अपने निर्णय से क्या सिद्ध करने की कोशिश कर रहे हो? इवानोव तुम्हारा अग्रणी साथी है, तुम्हारे समुदाय का एक सक्रिय

सदस्य है, तुम लोगों ने उसमें विश्वास किया, तुमने कम्यून को उसके सिपुर्द किया और बिना आपत्ति किये उसके आदेशों का पालन किया। और अब चूंकि एक बार उसने चोरी की है, तुम लोग उसे लात मारकर हटा रहे हो। आख़िर वह कहां जायेगा। फिर वह बेठौर-ठिकाने सड़कों पर व्यर्थ भटकेगा और इसका अर्थ है – अपचार! क्या तुम लोग इतने कमज़ोर हो कि इवानोव को रास्ते पर नहीं ला सकते?

जहां तक स्वयं इवानोव का सम्बन्ध है, कहना चाहिए कि वह पूरे दिन विक्षिप्त था, वह बिल्कुल बदहवास था।

चेका के प्रतिनिधियों ने इवानोव की ओर संकेत करते हुए कहा, "देखो, उसकी क्या दशा है। तुम्हारा समुदाय इतना प्रभावकारी है, तुम लोगों ने अनेक व्यक्तियों का चरित्र सुधारा है, क्या तुम्हें इसका भय है कि तुम्हारे ऊपर उसका बुरा असर पड़ेगा? तुम लोगों की संख्या ४५६ है और इस प्रकार का बुरा तो वह अकेला है।"

यह विरोध को समाप्त कर देनेवाली दलील थी, चकित कर देनेवाला तर्क था।

चेका के प्रतिनिधियों की अपेक्षा बहुत ही कम अनुभवी, किन्तु अपने समुदाय के लिए अपने को ज़िम्मेदार समझनेवाले कम्यूनार्डों, रोबेसपियेर तथा दूसरों ने उन्हें यह उत्तर दिया:

"यदि इवानोव ग़लत रास्ते पर चला जाता, तो यही बात काफ़ी होती। उसे जाने दीजिए। अगर उसने केवल कोई चीज़ चुरा ली होती, तो यह भी एक भिन्न बात होती। परन्तु वह ड्यूटी पर तैनात कमांडर था, हमने कम्यून को उसके सिपुर्द कर दिया था, उसने आम सभा की अध्यक्षता की और जो कुछ भी हम जानते थे, उसे हमसे बताने का उसने अनुरोध किया। यह केवल चोरी करने का अपराध नहीं है। वह सत्तर रूबल की चीज़ के प्रलोभन में आकर बेशर्मी और दुष्टता के साथ हमारे विरुद्ध चला गया, वह हमारे ख़िलाफ़ और मेज्याक के विरुद्ध चला गया, जो अपने मासिक वेतन से दस रूबल अलग रखकर महीनों से इस धन को बचा रहा था। और इस कारण यदि इवानोव ग़लत रास्ते पर चला गया, तो अब हम उसके साथ दया का व्यवहार नहीं कर सकते।

"हम निश्चित रूप से उसे संभाल सकते हैं। हमें कोई भय नहीं है। परन्तु हमें अब इस बात में बिल्कुल कोई दिलचस्पी नहीं है। हम उसे संभाल

सकते थे, क्योंकि हम जानते हैं कि हम उसे हटा सकते हैं। परन्तु यदि हम उसे रख लेते हैं और नहीं निकाल बाहर करते, तो उसकी भांति दूसरे को भी हम नहीं निकाल सकेंगे, हमारा समुदाय अपनी शक्ति खो बैठेगा और तब हम किसी को भी बिल्कुल नहीं संभाल पायेंगे। इवानोव की भांति यहां अन्य सत्तर लड़के और हैं और उसको निकाल बाहर करने से उन्हें संभालने में हमें सहायता प्राप्त होगी।"

चेका के प्रतिनिधियों ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि एक सदस्य को खो देने से समुदाय का नाम कलंकित होगा और यह कि इवानोव ग़लत रास्ते पर चला जायेगा। कम्यूनार्डों ने इसके जवाब में कहा: फलां कोलोनी को देखिए, वहां अनुशासन नहीं है और ध्यान दीजिए कि वे एक साल में अपने कितने सदस्यों को खो बैठते हैं। प्रति वर्ष पचास प्रतिशत लड़के भाग जाते हैं। और इसलिए यदि हम बहुत सख़्ती से अनुशासन लागू करते हैं, तो हम कम नुक़सान उठायेंगे, हम इवानोव को खोने के लिए तैयार हैं, परन्तु यह भी तो है कि हम दूसरों को सुधार पायेंगे।

पूरी शाम बहस चलती रही। कम्यूनार्डों ने आख़िर में एतराज़ करना बन्द कर दिया और यहां तक कि चेका के प्रतिनिधियों के अच्छे भाषणों पर तालियां भी बजाई। परन्तु जब मत प्रकट करने का समय आया और अध्यक्ष ने कहा—इवानोव के निष्कासन के पक्ष में कौन है, तो तत्काल सभी हाथ ऊपर उठ गए। फिर चेका के प्रतिनिधियों ने मंच पर जाकर भाषण दिए, पुन: उन्होंने समझाने की कोशिशें कीं, परन्तु मैं उनके चेहरे की भावनाओं से भांप गया था कि उन्हें यह ज्ञात हो गया है कि वे चाहे जो कुछ कहते, इवानोव के भाग्य का निर्णय हो चुका था। आधी रात तक प्रस्ताव पास हो गया: इवानोव को निष्कासित करने और कल कम्यूनार्ड जिस ढंग से उसे हटाना चाहते थे, उसी प्रकार निकाल बाहर करने का निर्णय हुआ: फाटक को खोलकर उसे सीढ़ियों के नीचे फेंक देना। बहरहाल हमने किसी प्रकार हिंसा का प्रयोग रोकने में सफलता प्राप्त कर ली और अनुरक्षक दल के साथ इवानोव को ख़ार्कोव भेज दिया।

और इस प्रकार उन्होंने उसे निकाल बाहर किया। निस्सन्देह, बाद में हमने इसका ख़्याल रखा कि इवानोव दूसरी कोलोनी में भेज दिया जाये और अपने कम्यूनार्डों से इसे गोपनीय रखने के लिए सावधानी बरती। गोकि एक साल बाद उन्होंने इस बारे में पता लगा लिया और मुझसे पूछा

कि मैंने ग्राम सभा के निर्णय के विरुद्ध कैसे यह काम किया: उन्होंने उसे निकाल बाहर किया था और इसके बावजूद मैंने अपनी ओर से हस्तक्षेप किया।

इस मामले को दृष्टि में रखकर मैं सोचने लगा: व्यष्टि के हितों की अपेक्षा समष्टि के हितों को किस हद तक ऊपर रखना चाहिए? और अब यह सोचने की ओर मेरा रुझान है कि यदि यह निर्मम हो तो भी समुदाय के हितों को ही बिल्कुल अन्त तक प्रमुख हित समझना चाहिए—और तभी शिक्षा वास्तव में व्यष्टि और समष्टि दोनों के लिए उपयोगी होगी।

इस विषय पर कहने के लिए मेरे पास बहुत कुछ है। परन्तु इस प्रसंग में मैं केवल इतना ही कहूंगा कि इसे भौतिक दृष्टि से निर्मम नहीं होना चाहिए, अर्थात्, निष्ठुरता का ढंग इस प्रकार अपनाना चाहिए कि जब व्यष्टि के हितों पर समष्टि के हितों की विजय हो, तो भी सम्बन्धित व्यक्ति को गंभीर और निराशाजनक स्थिति में नहीं डालना चाहिए।

और अन्तिम, किन्तु नगण्य नहीं, चौथा प्रमेय यह है, जिसे विशुद्ध सिद्धान्त के रूप में बच्चों को बताना चाहिए: अनुशासन समुदाय की शोभा है। अनुशासन का यह पहलू—इसकी शोभा और सुन्दरता—सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। जो कुछ मुझे जानकारी है, उसके अनुसार हमारे बाल-समुदायों में इसकी शिक्षा देने के बारे में बहुत कम प्रयास किया जाता है। कभी-कभी हमारा अनुशासन, जैसा कि हमारे गुमराह बच्चे कहते हैं, "उबाऊ", अरुचिकर होता है और वस्तुतः इसका अभिप्राय सताना, धकियाना और खीज पैदा करनेवाली बकवास है। अनुशासन को सुखद, प्रेरक और प्रबोधक बनाने का प्रश्न सर्वथा शिक्षाशास्त्रीय प्रणाली की एक समस्या है।

अपने निजी अनुभव में मैंने रुचिकर अनुशासन के निर्णायक तरीक़े की समझदारी बहुत जल्द प्राप्त नहीं की। निस्सन्देह, यहां अनुशासन को केवल बाहरी शोभा समझने का ख़तरा दूर करना होगा। इसके सारतत्व से उसकी सुन्दरता प्रादुर्भूत होनी चाहिए।

बहरहाल, जहां तक मेरा सम्बन्ध है, अन्ततः मैंने अपने लिए अनुशासन के रुचिकर पहलू को विकसित करने की दरअसल एक पेचीदा योजना तैयार कर ली थी। उदाहरण के लिए मैं आप लोगों को अपने कुछ तरीक़ों के

वारे में वताऊंगा, जिनका इस्तेमाल मैंने अनुशासन लागू करने के लिए उतना नहीं, जितना इसकी रुचिरता को परखने और इसे क़ायम रखने के लिए किया।

उदाहरणार्थ जलपान में देर लग जाती थी। जलपान की सूचना दस मिनट देर करके दी जाती थी। मैं नहीं जानता कि इसका दोषी कौन था: पाकशाला में काम करनेवाले, ड्यूटी पर तैनात कमांडर अथवा अधिक समय तक सो जानेवाला एक विद्यार्थी। प्रश्न यह था कि आगे क्या किया जाये: काम की सूचना दस मिनट के लिए टाल दी जाये, देर से काम शुरू किया जाये अथवा जलपान त्याग दिया जाये। व्यावहारिक रूप में इस प्रश्न का निर्णय करना बहुत कठिन हो सकता है।

मेरे कम्यून में इंजीनियरों, फ़ोरमैनों और प्रशिक्षकों का एक बड़ा वेतनभोगी स्टाफ़ था, उनकी कुल संख्या क़रीब दो सौ थी, और उनके लिए भी समय बहुमूल्य था। वे आठ बजे काम पर आ जाते थे तथा फ़ैक्टरी की सीटी ठीक आठ बजे बजती थी। इधर जलपान में दस मिनट की देरी हो जाती थी, कम्यूनार्ड काम के लिए तैयार नहीं हो पाते थे और इसका अर्थ था कि मुझे मज़दूरों तथा इंजीनियरों को काम के घंटों के बाद रोकना पड़ता। उनमें से बहुतेरे शहर से बाहर रहते थे, उन्हें गाड़ी पकड़नी पड़ती थी, इत्यादि। बहरहाल समय पालन के नियम इस प्रश्न में सन्निहित थे।

कम्यून में अपने कार्य-काल के अन्तिम वर्षों में, मुझे क्या करना था, इस सम्वन्ध में एक वार भी न तो मुझे और न विद्यार्थियों को कभी कोई द्विविधा हुई। जलपान में देरी हो जाती थी। मैं ठीक आठ वजे सीटी बजाने का आदेश दे दिया करता था। कुछ विद्यार्थी दौड़े हुए काम पर जाते थे, अन्य विद्यार्थी जलपान करते रहते थे। मैं भोजनालय में जाता और सूचित करता कि जलपान का समय ख़त्म हो गया है। मैंने बिल्कुल अच्छी तरह यह महसूस किया कि मैं उन्हें भूखा रख रहा था, मैंने पूर्णतया अनुभव किया कि उनके स्वास्थ्य की दृष्टि से यह वुरा है, आदि। किन्तु इसके वावजूद एक वार भी मुझे अपनी कार्रवाई के औचित्य में कोई सन्देह नहीं हुआ। यदि मैं एक ऐसे समुदाय के साथ यह व्यवहार करता, जिसमें अनुशासन की सुन्दरता की भावना न होती, तो निश्चय ही किसी ने यह कह दिया होता:

"क्या हमसे भूखे रहने की आशा की जाती है?"

परन्तु किसी ने भी कभी मुझसे इस प्रकार की बात नहीं कही। हरेक ने अच्छी तरह समझ लिया कि उसे यही करना था और यह तथ्य कि मैं भोजनालय में जाकर इस प्रकार का आदेश दे पाता था, इसका द्योतक है कि समुदाय से इस बात की अपेक्षा रखने का मुझे विश्वास था कि वे बिना जलपान के भी काम पर जायें।

एक समय दिन में ड्यूटी पर तैनात काम करनेवालों ने लड़कों के बारे में शयनागार में समय बर्बाद करने, भोजनालय में जल्दी से न आने और इसके फलस्वरूप जलपान के लिए देर से आने की शिकायत करनी शुरू की। मैंने भी इस विषय पर कोई सैद्धान्तिक बहस शुरू नहीं की और कभी भी इस सम्बन्ध में किसी से कुछ नहीं कहा। सुबह मैं केवल भोजनालय के दरवाज़े के बाहर जाकर खड़ा हो जाता था और वहां अन्य चीजों के बारे में किसी से बातचीत किया करता था। और आपको जानकर आश्चर्य होगा कि एक सौ अथवा डेढ़ सौ देर से आनेवाले, जो अधिकांशतः सीनियर विद्यार्थी थे, भोजनालय में जलपान के लिए जाने की जगह मेरे पास से बहुत तेज़ी से आगे बढ़ जाते और सीधे फ़ैक्टरी चले जाते। वे कहा करते, "नमस्कार, अन्तोन सेम्योनोविच!" किसी ने भी जलपान न करने के बारे में शिकायत नहीं की और कभी-कभी उनमें से कोई शाम को मुझसे कहता: "निस्सन्देह आज तो आपने हम लोगों को भूखा ही रख दिया।"

मैं इसी आधार पर विभिन्न प्रकार के प्रयोग करने की कोशिश कर सका। फ़र्ज़ कीजिए, सभी "युद्धपोत पोत्योमकिन" नामक फ़िल्म के शुरू होने की प्रतीक्षा में होते। सभी हाल में बैठे होते और फ़िल्म शुरू हो गई होती तथा चल रही होती। तीसरे भाग के दौरान मैं कह पड़ता: "चौथी, दूसरी और तीसरी टुकड़ी बाहर आ जाये।"

"क्या बात है?"

"मुझे बताया गया है कि कुछ सन्देहात्मक व्यक्ति बाहर चक्कर लगा रहे हैं। जाकर देखो क्या बात है।"

"हां, महोदय।"

उन्हें इसका विश्वास न होता कि बाहर सचमुच सन्देहात्मक व्यक्ति चक्कर लगा रहे थे, उन्हें संभवतः इसका भी सन्देह हो जाता कि यह केवल परीक्षा है, परन्तु यदि कोई अन्य इस प्रकार उनसे अपनी बात कहता, तो दूसरों के साथ वह अपने को भी मुसीबत में डाल देता। वे

बाहर जाते, इसका पता लगा लेते कि वहां कोई नहीं है और वापस चले आते। वे अपनी पसन्द की फ़िल्म का कुछ अंश नहीं देख पाते, फिर भी कोई जरा भी शिकायत नहीं करता, वे शान्तिपूर्वक बैठ जाते और शेष फ़िल्म को देखते।

यह एक प्रकार का प्रयोग था। इसी तरह अनेक प्रकार के विविध प्रयोग थे। उदाहरणार्थ, घर की सफ़ाई का काम बांटते समय हमारी एक परम्परा सर्वोत्कृष्ट टुकड़ी को सबसे कड़ा और सर्वाधिक अप्रिय कार्यभार सौंपने की थी। और मैं आप लोगों को बताना चाहता हूं कि सफ़ाई करना सर्वथा एक कड़ा काम था, क्योंकि प्रायः प्रतिदिन कम्यून में कई प्रतिनिधि-मण्डल आया करते थे और हमें उस स्थान को बिल्कुल साफ़-सुथरा, बिल्कुल चमाचम रखना पड़ता था।

"सर्वोत्कृष्ट टुकड़ी कौन है?"

"छठी।"

और सर्वोत्कृष्ट होने के कारण छठी टुकड़ी को सर्वाधिक अप्रिय काम करने को दिया जाता था। सबसे अच्छी टुकड़ी होने के कारण इसे सर्वाधिक अरुचिकर काम करना पड़ता था। हमने इस युक्ति को बिल्कुल स्वाभाविक महसूस किया। यह सर्वोत्कृष्ट टुकड़ी थी और इसलिए उसे सबसे कड़ा काम सौंपा गया।

अथवा जब हम अपनी किसी यात्रा पर होते, तो बहुधा अपने को कठिनाइयों में पाते, जिन्हें पार करने के लिए कोई कम शारीरिक प्रयास, फुर्ती और शक्ति अपेक्षित न होती। हम किस टुकड़ी को भेजते? सबसे अच्छी टुकड़ी को, और इसे यह काम करने पर गर्व होता था। मैं शायद ही इसे कोई अतिरिक्त काम देने अथवा इसके सामान्य कर्त्तव्यों के अलावा कोई कार्य सौंपने में कभी किसी खटके से सोच-विचार करता था। किसी हिचक के बिना मैं इसी को अतिरिक्त काम दिया करता था, स्पष्टतः इस कारण कि यह सर्वोत्कृष्ट टुकड़ी थी और इस कारण भी कि इस में मेरे विश्वास को महसूस किया जायेगा। इसकी असामान्य सुन्दरता लड़कों की दृष्टि से ओझल नहीं होती थी।

वास्तव में अनुशासन को रुचिकर कार्य-कौशल का रूप प्रदान कर सुन्दरता के प्रति यह अनुभूतिशीलता ही इसकी अन्तिम कसौटी होगी। प्रत्येक समुदाय इस लक्ष्य को प्राप्त नहीं करेगा, परन्तु यदि कोई समुदाय इसे प्राप्त कर ले और इस विवेक को अपना ले कि तुम जितने ही अधिक

ऊंचे होंगे, तुमसे उतनी ही अधिक अपेक्षा की जायेगी, अगर यह इस तर्क को प्रामाणिक, यथार्थ तर्क मान ले, तो इसका अर्थ यह होगा कि अनुशासन और शिक्षा के सम्बन्ध में उस समुदाय ने एक निश्चित, संतोषप्रद स्तर को उपलब्ध कर लिया है।

और अब मैं अनुशासन-संबंधी अन्तिम सैद्धान्तिक सामान्य प्रमेय के बारे में कुछ कहूंगा, जिसे मैंने यथासंभव अक्सर अपने विद्यार्थियों के सम्मुख समझने लायक़ आसान रूप में प्रस्तुत करना आवश्यक समझा: यदि किसी व्यक्ति को कुछ मनपसन्द काम करना है, तो अनुशासन हो अथवा न हो, वह उसे सदा करेगा; अनुशासन का प्रश्न वहीं पैदा होता है, जब वह कोई अप्रिय काम ख़ुशी से करता है। यह अनुशासन-सम्बन्धी बहुत ही महत्त्वपूर्ण थीसिस है। इसे अवश्य ही ध्यान में रखना चाहिए और हर अवसर पर यथासंभव अक्सर इस पर ज़ोर देना चाहिए।

ख़ैर, सामान्य आचारिक सिद्धान्त, नैतिकता का सिद्धान्त संक्षेप में यही है, जिसे ज्ञान के निश्चित निचोड़ के रूप में बच्चों के सम्मुख प्रस्तुत करना चाहिए, बातचीत के दौरान सदा इस पर ज़ोर देना चाहिए और इसके बारे में बच्चों की समझदारी बढ़ाने के लिए सदैव प्रयास करना चाहिए। केवल इसी ढंग से, इसके सामान्य सिद्धान्त को विकसित करने, उसे ध्यान में रखने से अनुशासन चेतनाशील हो जायेगा।

इन सभी सिद्धान्तों और प्रमेयों में मुख्य और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात अनुशासन के राजनीतिक महत्त्व पर सदा बल देना चाहिए। इस सम्बन्ध में हमारी सोवियत वास्तविकता अनेक उज्जवल उदाहरण प्रस्तुत करती है। हमारे इतिहास की महानतम उपलब्धियां और इसके भव्यतम अध्याय अनुशासन की सराहनीय अभिव्यक्ति से सम्बद्ध हैं। हमारे उत्तर ध्रुवीय अनुसन्धानों, पापानिन टोली *, सोवियत संघ के वीरों ** के साहसिक कार्यों

---

* इ० द० पापानिन, एक विख्यात उत्तर ध्रुवीय अनुसन्धानकर्त्ता, जिन्होंने चार सदस्यों की सोवियत उत्तर ध्रुवीय अनुसन्धान टोली का नेतृत्व किया, जो २१ मई, १९३७ को उत्तर ध्रुव के क्षेत्र में बर्फ़ पर उतरी और नौ महीने तक संचरण करते हुए उत्तर ध्रुवीय महासागर के मध्यवर्ती भाग की प्राकृतिक स्थिति का अध्ययन किया।

** सोवियत विमान चालकों द्वारा जहाज़ के नष्ट हो जाने से संकट में फंसे उत्तर ध्रुवीय अनुसन्धानकर्ताओं की टोली को बचाने के सम्बन्ध में १९३४ में इस उपाधि को प्रदान करने की परम्परा शुरू हुई।

को स्मरण रखिए, सामूहीकरण के इतिहास को लीजिए, हमारे औद्योगीकरण के इतिहास को लीजिए और अपने साहित्य में भी आप शानदार उदाहरण पायेंगे, जिन्हें आप अनुशासन के इन्हीं सिद्धान्तों पर आधारित सोवियत अनुशासन के आदर्श के रूप में अपने छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत कर सकते हैं।

फिर भी, जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूं, यह चेतना, यह आचारिक सिद्धान्त अनुशासन का आधार नहीं, बल्कि अनुशासन का सहायक होना चाहिए, यह अनुशासन के अनुरूप होना चाहिए।

तब अनुशासन का आधार क्या है?

मनोवैज्ञानिक शोध की गहराई में डुबकी लगाये बिना, स्पष्ट और सरल शब्दों में बातें करते हुए अनुशासन का आधार है बिना किसी सिद्धान्त के अपेक्षा। यदि कोई मुझसे बहुत ही संक्षिप्त सूत्र में अपने शिक्षण-सम्बन्धी अनुभव के सारतत्त्व की व्याख्या करने को कहे, तो मैं कहूंगा: एक व्यक्ति से सर्वाधिक अपेक्षाएं रखिए और उसके साथ सर्वाधिक सम्मानपूर्ण व्यवहार कीजिए। मुझे पूरा यक़ीन है कि सोवियत अनुशासन का यही सूत्र है, सामान्यतया यही हमारे समाज का भी सूत्र है। हमारा समाज इस दृष्टि से पूंजीवादी समाज से भिन्न है कि हम पूंजीवादी समाज की अपेक्षा एक व्यक्ति से बहुत उच्चतर अपेक्षा रखते हैं और इसके अलावा हमारी अपेक्षाएं अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। पूंजीवादी समाज में एक व्यक्ति एक दूकान खोल सकता है, दूसरों का शोषण कर सकता है, सट्टेबाज़ी कर सकता है अथवा भाड़े या लगान से प्राप्त आय पर आश्रित रह सकता है। वहां हमारे समाज की अपेक्षा एक व्यक्ति से बहुत कम अपेक्षाएं की जाती हैं।

परन्तु दूसरी ओर हम उसके साथ अपूर्व रूप में बहुत अधिक और बुनियादी रूप में भिन्न सम्मानपूर्ण व्यवहार करते हैं। एक व्यक्ति के प्रति सर्वाधिक सम्मानपूर्ण व्यवहार के साथ सबसे अधिक सख़्त अपेक्षाओं का यह संयोजन एक ही चीज़ के अविच्छिन्न भाग हैं—वे दो भिन्न चीज़ें नहीं हैं। एक व्यक्ति से अपेक्षाएं रखते समय हम उसकी शक्ति और योग्यता के प्रति अपना सम्मान प्रकट करते हैं और उसके लिए सम्मान की भावना प्रकट करते हुए इसके साथ ही हम उससे अपेक्षाएं रखते हैं। यह सम्मान किसी बाहरी चीज़ के लिए, समाज के बाहर किसी सुखद और आकर्षक चीज़ के लिए नहीं है। यह एक साथी के प्रति सम्मान है, जो हमारे

सम्मिलित प्रयास में भाग ले रहा है, जो हमारे साथ सार्वजनिक काम कर रहा है, यह एक श्रमिक के प्रति सम्मान है।

निस्सन्देह, जब तक व्यक्ति से अपेक्षाएं नहीं की जायेंगी, तब तक कोई समुदाय, और कोई अनुशासन क़ायम नहीं हो सकता। मैं आज भी बिना संशोधन और रियायतों के अविचल, अधिकतम और स्पष्ट अपेक्षाएं रखने के पक्ष में हूं।

आप लोगों में से जिन्होंने 'जीवन की ओर' नामक मेरी पुस्तक पढ़ी है, वे जानते होंगे कि मैंने इस प्रकार की अपेक्षाओं के साथ अपना काम शुरू किया और ज़ादोरोव की मेरी पिटाई की कहानी को भी जानते ही होंगे। इसमें सबसे अधिक एक शिक्षक के रूप में प्रशिक्षण की मेरी कमी, शिक्षण-विधि की मेरी नगण्य जानकारी, मेरी धैर्यशून्यता और मेरी निराशा प्रमाणित हुई। परन्तु वह सज़ा नहीं थी। वह भी एक अपेक्षा थी।

अपने काम के प्रारम्भिक वर्षों में मैंने अपनी अपेक्षाओं की पूर्ति के लिए बल-प्रयोग भी किया, परन्तु मैंने अपने विद्यार्थियों को कभी उनके गलत काम के लिए सज़ा नहीं दी, मैंने कभी इतनी बेरहमी और इतनी सख़्ती से उन्हें दण्ड नहीं दिया। मेरा वह अपराध, जिसकी मैंने चर्चा की है, वह सज़ा नहीं, अपेक्षा थी।

मैं आपको अपने अनुभव को दुहराने का सुझाव नहीं दूंगा, क्योंकि यह १९२० नहीं, बल्कि १९३८ है और इस कारण भी कि मैं यह सोच सकता हूं कि आप में से कोई अथवा, जिन साथियों का आप संचालन करते हैं, उनमें से कोई शायद ही उस प्रकार की कठिन, असहाय और उलझी हुई स्थिति में अपने को पायेगा, जैसी मेरी थी। परन्तु मैं इस पर ज़ोर देना चाहता हूं कि यदि अपेक्षाएं नहीं की जायेंगी, तो शिक्षा नहीं दी जा सकती। एक अपेक्षा अधूरी चीज़ नहीं हो सकती। यह बोलशेविक ढंग से अधिकतम, यथासंभव अधिक से अधिक ऊंची होनी चाहिए।

स्वाभाविक रूप से अपेक्षाएं रखना एक बहुत कठिन बात है, किन्तु जैसा कि बहुतों को विश्वास है इसके लिए सुदृढ़ इच्छा शक्ति की कतई आवश्यकता नहीं है। निजी रूप से मैं सुदृढ़ संकल्पशक्ति का व्यक्ति नहीं हूं और मैं कभी भी सबल व्यक्तित्व के गुणों से युक्त नहीं था। इससे भिन्न मैं एक साधारण बुद्धिजीवी, एक सामान्य शिक्षक हूं। मुझे पूरा यक़ीन था कि मुझे अपनी बौद्धिकता के साथ खिलवाड़ करने अथवा उसके अभिमान

में चूर होने का कोई हक़ नहीं है और मैं जानता था कि शिक्षक अक्सर यही किया करते थे, क्योंकि उन्हें यह ज्ञात नहीं था कि कौन-सी पद्धति अपनानी चाहिए। मुझे पक्का विश्वास है कि विद्यार्थियों से अपेक्षाएं रखना सही पद्धति है।

यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि इस पद्धति को आगे और विकसित करना चाहिए। परन्तु मुझे दृढ़ विश्वास है कि विकास के तरीक़े सदा एक-से हैं। यदि आप अनुशासनशून्य अथवा केवल बाहरी दृष्टि से अनुशासित बच्चों के समुदाय को लेने जा रहे हैं, तो आपको उनके लिए अपनी ही व्यक्तिगत अपेक्षाएं स्थिर करके काम शुरू करना होगा।

बच्चों से अपनी बात मनवा लेने के लिये और जो आप चाहते हैं, वही उनसे करा लेने के लिये अधिकांश मामलों में बहुधा ऐसी दृढ़ अविचल अपेक्षा को व्यक्त कर देना ही पर्याप्त होता है। इस प्रसंग में यह आत्मप्रेरणा और ज्ञान कि आप सही हैं, कुछ भूमिका अदा करते हैं। उसके बाद सभी बात आपकी बुद्धि पर निर्भर होगी। समुदाय की मांगों से असम्बद्ध भोंडी, विवेकशून्य और उपहासजनक अपेक्षाएं कभी नहीं करनी चाहिए।

मुझे भय है कि अब मेरी बात कहीं युक्तियुक्त न होगी। यह एक प्रमेय है, जिसे व्यक्तिगत रूप से मैंने ख़ुद अपने लिए सोचा : जब भी मुझे इसका विश्वास नहीं होता था कि मैं क्या अपेक्षाएं रख सकता था, क्या यह अपेक्षा उपयुक्त होगी अथवा अनुपयुक्त, तो मैं कुछ भी न देखने का बहाना बनाता था। जब तक मुझे और सामान्य समझ वाले किसी अन्य व्यक्ति को भी यह स्पष्ट नहीं हो जाता था कि मैं ठीक था, तब तक मैं उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करता था। और उसके बाद मैं अपनी एकनिष्ठ अपेक्षाओं को पूर्णतया व्यक्त करता था और चूंकि स्पष्टतः मेरी ठीक बात के कारण वे अपेक्षाएं उपयुक्त प्रतीत होतीं, मैं अधिक साहस के साथ काम करता और इसे समझते हुए कि मैं ठीक था, विद्यार्थीगण आसानी से मेरी बात मान लेते।

मेरे विचार से प्रारम्भिक अवस्था में इस युक्ति को नियम बना देना चाहिए। एक शिक्षक, जो विद्यार्थियों से समझ में न आनेवाली बातों की अपेक्षा करते हुए अधिकार की अपनी भावना को स्वच्छन्दता प्रदान करता है और अपने विद्यार्थियों की निगाह में तानाशाह बन जाता है, वह उनकी भावनाओं पर विजय नहीं प्राप्त कर सकता।

मैंने गुमराह बच्चों के प्रथम समूह से यह अपेक्षा नहीं की कि उन्हें चोरी नहीं करनी चाहिए। मैंने इसे महसूस कर लिया कि मैं उन्हें तत्काल सुधारने की आशा नहीं कर सकता। परन्तु मैंने उनसे यह अपेक्षा जरूर की कि वे निश्चित समय पर उठ जायें और उन्हें जो काम करना था, उसे करें। किन्तु वे चोरी करते रहे और कुछ समय के लिए मैंने उधर से अपनी आंख मूंद ली थी।

किसी भी दशा में, कोई बिना सत्यनिष्ठ, खरी, विश्वासनिष्ठ, उत्साहपूर्ण और निश्चयात्मक अपेक्षा के एक समुदाय को शिक्षित बनाने का काम शुरू नहीं कर सकता। और जो व्यक्ति दोलायमानता, खुशामद और विनती के साथ इसे शुरू करने का इरादा रखता है, वह बहुत ही गंभीर भूल करता है।

अपेक्षाओं के विकास के साथ-साथ नैतिकता के सिद्धान्त का विकास होना चाहिए, परन्तु किसी भी दशा में इस विकास को अपेक्षाओं का स्थान नहीं देना चाहिए। जब आपको सिद्धान्त स्थिर करने और किशोरों को यह समझाने का अवसर प्राप्त हो कि उन्हें क्या करना चाहिए, तो आप ऐसा अवश्य करें। परन्तु जब दृढ़ता प्रकट करने का अवसर हो, तो आपको सिद्धान्त स्थिर करने के चक्कर में कदापि नहीं पड़ना चाहिए, आपको स्पष्टतः अपनी अपेक्षाएं व्यक्त करनी चाहिए और उनकी पूर्ति पर ज़ोर देना चाहिए।

मैं कई स्कूलों, अधिकांशतः कीयेव के स्कूलों में जा चुका हूं। इन स्कूलों में मुझे सबसे अधिक आश्चर्य भयानक शोरगुल, चुलबुलापन, बच्चों में गंभीरता की कमी, उनकी उन्मादपूर्ण उत्तेजना, सीढ़ियों के ऊपर-नीचे उनके दौड़ने और इससे खिड़कियों, नसों, सिरों को तोड़ने आदि पर हुआ।

मैं शोरगुल बर्दाश्त नहीं कर सकता। यदि किशोरों की भीड़ में रहते हुए मैं 'जीवन की ओर' नामक अपनी पुस्तक लिख सका, तो मैं यही कहूंगा कि मुझ में काफ़ी धैर्य रहा होगा। उनकी बातचीत से मुझे कोई परेशानी नहीं हुई। परन्तु मेरे विचार से चिल्लाना, चीखना और दौड़ना ऐसी बातें हैं, जिनके बिना भी बच्चे अच्छी तरह रह सकते हैं।

किन्तु फिर भी मैंने कुछ बाल-शिक्षकों को यह बहस करते हुए सुना है कि बच्चे को इधर-उधर दौड़ते रहना चाहिए, उसे शोरगुल करना चाहिए, इसे स्वाभाविक माना जाता है।

मुझे इस सिद्धान्त पर आपत्ति है। बच्चे को इनकी स्वाभाविक आवश्यकता नहीं है। स्कूल में सबके शोरगुल से सदा सभी लोग अधिक परेशान हो जाते हैं तथा इससे और कुछ नहीं होता, बल्कि नुक़सान हो पहुंचता है। इसके प्रतिकूल, मुझे अपने अनुभव से विश्वास हो गया है कि एक बाल समुदाय को आसानी से अनुशासित रूप में व्यवहार करने, चंचलता को कम करने, दूसरों की सुविधा-असुविधा पर ध्यान रखने और सम्पत्ति, दरवाज़ों, खिड़कियों आदि की रक्षा करने के लिए प्रशिक्षित किया जा सकता है।

आप कम्यून में इस प्रकार का गुल-गपाड़ा कभी नहीं सुन पाते। जब विद्यार्थी घूमने बाहर सड़कों पर जाते, स्कूल के खेल के मैदान में और कमरों में होते, तो अन्ततः वे मेरे प्रयास से सर्वथा अनुशासित रूप में व्यवहार करने लगे। मैंने उनके व्यवहार में पूर्ण अनुशासनप्रियता की अपेक्षा की।

यदि अब मैं किसी स्कूल का इनचार्ज बना दिया जाता, तो मैं सबको एक जगह जमा कर और उन्हें यह बताते हुए अपना काम शुरू करता कि मैं पुनः इस प्रकार का व्यवहार कभी पसन्द नहीं करूंगा। इसके लिए किसी दलील की, किसी सिद्धान्त की ज़रूरत नहीं है। शुरू में ही नहीं, किन्तु बाद में मैं उनके सम्मुख सिद्धान्त प्रस्तुत करता। मैं दृढ़ निश्चय के साथ अपना काम शुरू करता: मैं कभी उस प्रकार की बात होते देखना नहीं चाहता। मैं फिर कभी स्कूल में शोर मचानेवाले एक भी विद्यार्थी को नहीं देखना चाहता।

ज्योंही एक समुदाय को अपनाया जाये, त्योंही बिना किसी बहस-मुबाहिसे के स्पष्ट लहजे में व्यक्त यह दृढ़ अपेक्षा की जानी चाहिए। मैं यह सोच भी नहीं सकता कि जब तक संगठक ऐसे कड़े लहजे में अपनी अपेक्षाएं व्यक्त नहीं करता, तब तक वह अनुशासनशून्य, उद्धत और अनियंत्रित समुदाय में अनुशासन की भावना कैसे भर सकता है। परन्तु दृढ़ता से अपनी अपेक्षाएं प्रकट करने के बाद वह अनुभव करेगा कि उसका काम काफ़ी आसान हो गया है।

जब एक, फिर दो, फिर तीन और फिर चार विद्यार्थी एक ऐसा समूह बनाकर, जो ईमानदारी से अनुशासन को क़ायम रखना चाहता है, आपके साथ हो जाये, तो दूसरा दौर शुरू हो जाता है।

मैंने अनुशासन स्थापित करने का काम जल्दी-जल्दी किया। इससे मुझे परेशानी नहीं हुई कि मेरे इन विद्यार्थियों में काफ़ी ख़राबियां थीं; मैं यथासंभव शीघ्र ऐसे समूह को जमा करना चाहता था जो मेरी अपेक्षाओं को अपनी मांगें मानकर, आम सभाओं में उन पर अपनी राय ज़ाहिर कर और दूसरे विद्यार्थियों को अपने विचार बतलाकर इनका समर्थन करेंगे। अपेक्षा के विकास के दूसरे दौर में अपने इर्द-गिर्द इस प्रकार के विद्यार्थियों के एक मुख्य समूह का गठन करना अनिवार्य था।

और अब मैं उस तीसरे दौर के बारे में कुछ कहूंगा, जब समुदाय मांगें प्रस्तुत करना शुरू करता है। यह वह परिणाम है जो पहले दौर के अधीर प्रयास का प्रतिदान है। जब समुदाय अपेक्षाएं रखने लगता है, जब इसकी क्रियाशीलता का ढंग और शैली निश्चित हो जाती है, तब शिक्षक का काम गणितीय सुतथ्यता और कुशलता की चीज़ बन जाता है।

मैंने द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून के अपने अन्तिम पांच साल के दौरान बिल्कुल किसी बात की अपेक्षा कभी नहीं की। इसके प्रतिकूल, समुदाय की अपेक्षाओं पर एक प्रकार से रोक लगाने का काम किया, क्योंकि आम तौर पर समुदाय एक व्यक्ति से बहुत अधिक अपेक्षा रखने का आदी होता है।

इसके बाद आप व्यापक स्तर पर नैतिकता का सिद्धान्त लागू करने में सक्षम हो जायेंगे। इस अवस्था में सभी इसे समझ जायेंगे कि नैतिक और राजनीतिक अपेक्षाएं बुनियादी अपेक्षाएं हैं और इसके फलस्वरूप प्रत्येक विद्यार्थी अपने व्यवहार के प्रति बहुत ही अविचल विचार ग्रहण कर अपने प्रति स्वयं कठोर दृष्टिकोण अपना लेगा।

मैं विकास के इस क्रम को—संगठक की तानाशाही अपेक्षाओं से समुदाय की अपेक्षाओं की पृष्ठभूमि में स्वयं अपने प्रति प्रत्येक व्यक्ति की स्वेच्छामूलक अपेक्षा तक—एक सोवियत बाल समुदाय के विकास में बुनियादी क्रम मानता हूं। मेरा ख़्याल है कि स्थिर ढंग नहीं हो सकते। हो सकता है कि एक समुदाय विकास के प्रथम दौर से गुज़र रहा हो और इस स्थिति में इसके पथ-प्रदर्शन के लिए तानाशाह जैसे शिक्षक की ज़रूरत होगी, परन्तु यथासंभव शीघ्र ही इसे दूसरे दौर में—समुदाय की स्वैच्छिक अपेक्षाओं की रीति के अन्तर्गत—और उसके बाद स्वतंत्र व्यक्ति द्वारा स्वयं अपने आप से अपेक्षाएं रखने के दौर में जाना चाहिए।

निस्सन्देह अपेक्षा ही सब कुछ नहीं है। यह अनुशासन का एक अनिवार्य तत्त्व है, किन्तु एकमात्र तत्त्व नहीं है। यह सच है कि यथार्थतः सभी अन्य तत्त्व भी अपेक्षाओं के वर्ग से सम्बद्ध हैं, परन्तु उन्हें अपेक्षतः कम दृढ़ रूप में व्यक्त किया जाता है। प्रेरणा और दबाव अपेक्षा के अधिक शिथिल रूप हैं। और अन्तिम, किन्तु किसी भी अर्थ में नगण्य नहीं, धमकी है— यह साधारण अपेक्षा की तुलना में अधिक प्रभावकारी तरीक़ा है।

मेरा विचार है कि अपनी शिक्षा-पद्धति में इन सभी तरीक़ों को लागू करना चाहिए।

प्रेरणा क्या है? इस तरीक़े का विकास भी होना चाहिये। उपहार, पुरस्कार, इनाम अथवा अलग व्यक्ति के लिये किसी दूसरे लाभ द्वारा प्रदत्त प्रेरणा एक बात है, और एक क्रिया के आन्तरिक सौन्दर्य द्वारा प्रदत्त प्रेरणा दूसरी बात है।

दबाव के साथ भी यही बात है। प्रारम्भिक दौर में यह अधिक प्राथमिक रूप में, प्रमाण और समझाने-बुझाने के रूप में व्यक्त हो सकता है। उच्चतर दौर में संकेत, मुस्कराहट अथवा मज़ाक़ द्वारा दबाव प्रकट किया जाता है। यह कुछ ऐसी बात है, जिसका महत्त्व बच्चे समझते और जिसे पसन्द करते हैं।

जहां आप एक समुदाय के विकास की प्रारम्भिक मंज़िलों में बच्चों को दण्ड देने और अन्य असुविधाओं की धमकी दे सकते हैं, वहीं बाद में इसकी कोई आवश्यकता नहीं होगी। एक विकसित समुदाय में धमकी देना अमान्य है और द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में मैंने कभी भी किसी को यह कहते हुए कोई धमकी नहीं दी कि तुम्हें अमुक सज़ा दी जायेगी। ऐसा करना मेरी भूल होती। मैं अपने विद्यार्थियों को जिस बात की धमकी दिया करता था, वह यह थी कि मैं मामले को आम सभा के सामने पेश करने जा रहा हूं और वे इससे अधिक किसी भी बात से नहीं डरते थे।

एक समुदाय के विकास में दबाव, प्रेरणा और धमकी के भिन्न-भिन्न रूप हो सकते हैं। द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में बाद के वर्षों में अच्छे काम अथवा अच्छे व्यवहार के लिए विद्यार्थियों को प्रदत्त पुरस्कारों को इस आरोही ढंग से क्रमबद्ध किया गया था: उपहार, बोनस और आदेशानुकूल सभी सदस्यों के सम्मुख घोषित कृतज्ञता। सर्वोत्कृष्ट टुकड़ियां इस अन्तिम, सर्वोच्च पुरस्कार को प्राप्त करने के लिए बड़े प्रयास किया करती थीं, जो किसी

उपहार अथवा भौतिक आनन्द से सम्बद्ध नहीं था। तो फिर वे किस बात के लिए प्रयास करते थे? सम्मान के लिए। सभी विद्यार्थियों को अपने सबसे अच्छे कपड़े पहनने और परेड के मैदान में जमा होने का आदेश दिया जाता था। उसके बाद बैन्ड और फिर एक पृथक पंक्ति में सभी शिक्षक, इंजीनियर और प्रशिक्षक वहां जाते थे। यह आदेश दिया जाता था: "सावधान"! वहां झण्डा लाया जाता था, बैन्ड ज़ोरों से बजता रहता था और तब पुरस्कार पानेवाला लड़का और मैं सामने आ जाते थे। उसके बाद यह आदेश पढ़ा जाता था: "आम सभा के निर्णयानुसार फ़लां-फ़लां आदमी के प्रति कृतज्ञता प्रकट की जाती है।"

टुकड़ी और कम्यून की डायरी में कृतज्ञता-सम्बन्धी सूचना लिखी जाती थी और विशेष "लाल तख़्ती" पर यह सूचना लगा दी जाती थी कि फ़लां व्यक्ति अथवा अमुक टुकड़ी के प्रति अमुक तिथि को कम्यून के सभी सदस्यों के सम्मुख कृतज्ञता प्रकट की गई।

श्रेष्ठ भावनाओं, उच्च नैतिक गुणों और स्वाभिमान से युक्त समुदाय में ही ऐसा सर्वोच्च पुरस्कार संभव है। यह ऐसी बात है, जिससे शुरूआत नहीं होनी चाहिए, बल्कि इसके लिए प्रयास करना चाहिए। एक अधिक प्रारम्भिक ढंग की प्रेरणा से अलग-अलग प्रत्येक अवस्था में उपयुक्त भौतिक और अन्य सुखों की प्रेरणा से उदाहरणार्थ, थियेटर में एक नाटक दिखाने की प्रेरणा से एक शिक्षक को इस दिशा में अपना प्रयास शुरू करना चाहिए। निस्सन्देह, एक अच्छा शिक्षक अलग-अलग प्रत्येक अवस्था में विभिन्न तरीक़ों – प्रेरणा, दबाव, धमकी और अपेक्षा – को लागू करने में बहुत-से सूक्ष्म अन्तर पायेगा।

प्रश्न यह है – क्या अपेक्षा की जाये? मैं यहां जिस सूत्र का सुझाव प्रस्तुत करूंगा, उसे विकसित करने की जगह सदा जैसा का तैसा रहना चाहिए। सर्वप्रथम, एकमात्र चीज जिसकी अपेक्षा की जानी चाहिए, वह है समुदाय की इच्छा का सम्मान करना। कम्यूनार्डों ने ही मुझे इसकी शिक्षा दी थी। अपने समुदाय को विकसित करने में उन्होंने एक बहुत ही दिलचस्प तरीक़ा ढूंढ़ निकाला।

बाद के वर्षों में हमने चोरी के लिए विद्यार्थियों को सज़ा नहीं दी। इस बात पर मुझे आश्चर्य हुआ कि कम्यूनार्डों ने छोटी-मोटी चोरियों के मामलों को निबटाने के लिए स्वयं अपना तरीक़ा विकसित कर लिया था।

एक कम्यूनार्ड, एक सोलह वर्षीय लड़के ने अपने दोस्त के सन्दूक़ से पांच रूबल चुरा लिये। उसे ग्राम सभा में तलब किया गया और कमरे के बीच में खड़ा होने को कहा गया, जो इसी कमरे की भांति बड़ा था और दीवाल के किनारे-किनारे सोफ़े लगा दिये गये थे। सभी लोग इन सोफ़ों पर बैठे हुए थे, बीच में कोई मेज़ अथवा अन्य कोई चीज़ नहीं थी, और जिसे भी ग्राम सभा को बयान देने के लिए बुलाया जाता था, उसे सामने आकर बिल्कुल बीच में, झाड़-फ़ानूस के नीचे खड़ा होना पड़ता था। कम्यूनार्डों के कुछ निश्चित नियम थे। उदाहरणार्थ, यदि एक लड़के को गवाह के रूप में बुलाया जाता था, तो उसे कमरे के बीच में नहीं आना पड़ता था। इसी प्रकार अगर कमांडर अपनी टुकड़ी की ओर से बयान देता, तो उसे भी कमरे के बीच में नहीं आना पड़ता था, परन्तु यदि वह व्यक्तिगत रूप से बयान देता, तो उसे कमरे के बीच में आना पड़ता था। मुझे एक भी ऐसे मामले का स्मरण नहीं है, जिसे किसी अन्य तरीक़े से निबटाया गया हो। कमरे के बीच में आने से इनकार करने को समुदाय की आज्ञा का उल्लंघन माना जाता था। हो सकता है कि एक लड़के ने छोटा अपराध किया हो और मामूली सज़ा पाकर वह मुक्त हो जाये, परन्तु यदि वह कमरे के बीच में आने से इनकार करता, तो समुदाय के विरुद्ध जाने का सबसे बड़ा अपराध उस पर लगाया जाता।

ख़ैर, वह लड़का कमरे के बीच में आ गया।

"क्या तुमने रूबल चुराये थे?" उससे पूछा गया।

"हां, मैंने ही चुराया था।"

"कौन बोलना चाहता है?"

लड़के को सावधान होकर खड़ा होना पड़ा।

सदा निष्कासन की मांग करनेवाला रोबेसपियेर सबसे पहले बोलने के लिए खड़ा हुआ।

"उसके साथ हम क्या करें? वह जंगली है। वह चोरी करने से बाज़ नहीं आ सकता। हां तो, सुनो, तुम दो बार और चोरी करोगे।"

सबको उसका भाषण पसंद आया।

"बिल्कुल ठीक है, वह दो बार और चोरी करेगा। अब उसे कमरे के बीच से हटने दीजिए," सबने कहा।

अपराधी ने व्यथित एवं अपमानित होकर कहा:

"आपके कहने का क्या मतलब है कि दो बार मैं और चोरी करूंगा। मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं अब चोरी नहीं करूंगा।"

रोबेसपियेर ने कहा–

"हम अच्छी तरह समझते हैं। तुम दो बार और चोरी करोगे।"

अपराधी बाहर चला गया। उस शाम वह मेरे कमरे में आया।

"यह कितनी कष्टदायक बात है! उन्होंने मुझे सज़ा भी नहीं दी। वे मुझे यह कहते हुए कि मैं दो बार और चोरी करूंगा, ताने मार रहे हैं।"

"तो तुम यथार्थतः सिद्ध कर दो कि तुम्हें ताने मारने में वे ग़लती पर थे।"

क्या आप सोच भी सकते हैं कि अभी एक ही सप्ताह गुज़रा था और उसने अपने पड़ोसी की सन्दूक़ से कटर चुरा लिया। और वह पुनः कमरे के बीच में खड़ा था और जब अध्यक्ष ने पूछा कि "क्या तुमने उस कटर को चुराया?"–तो इस पर सभी हंस पड़े।

रोबेसपियेर बोलने के लिए खड़ा हुआ।

"मैंने तुमसे कहा था कि तुम दो बार और चोरी करोगे और तुमने चोरी की। तो लोगों से इसे कहने का क्या अर्थ था कि हमने तुम्हारे साथ ज़्यादती की थी? तुम एक बार और चोरी करोगे!"

लड़का कमरे से बाहर चला गया। एक महीने तक उसने कोई गड़बड़ी नहीं की और उसके बाद वह रसोईघर में गया और उसने समोसा चुराया।

जब वह पुनः कमरे के बीच में खड़ा हुआ, तो सबने सहानुभूति के साथ उसकी ओर देखा। और रोबेसपियेर ने उससे पूछा:

"तो क्या, यह आख़िरी चोरी है?"

"मैं अब समझता हूं कि यह आख़िरी बार है।"

उन्होंने उसे छोड़ दिया और उसने फिर कभी चोरी नहीं की। वे सही साबित हुए।

सबने इसे इतना पसन्द किया कि जब भी हमारे सम्मुख चोरी का कोई मामला होता, तो यह कहना एक प्रथा बन गई: "तुम दो बार और चोरी करोगे।" यह वाक्य लाक्षणिक बन गया।

मैंने लड़कों से पूछा:

"चोरी करनेवालों से यह कहने का क्या अभिप्राय है कि वे दो बार

ग्रौर चोरी करेंगे! तुम लोगों की कुल संख्या यहां ४५० है ग्रौर यदि प्रत्येक तीन बार चोरी करे, तो कम्यून की दशा क्या होगी?"

उन्होंने मुझसे कहा:

"ग्राप परेशान न हों।"

ग्रौर सचमुच मुझे परेशान होने की कोई ग्रावश्यकता नहीं पड़ी, क्योंकि समुदाय के विश्वास की इस शक्ति का इतना जोरदार प्रभाव पड़ा कि सभी चोरियां बन्द हो गई ग्रौर जब एक लड़के ने कोई चीज़ चुरा ली, तो उसने घुटने टेककर बड़ी विनम्रता के साथ कमरे के बीच में मामले की सुनवाई के लिए खड़ा न करने का ग्राग्रह किया, क्योंकि यदि ऐसा हुग्रा, तो वह लाक्षणिक वाक्य, जिसे वह दूसरों के लिए कहा करता था, उसके लिए कहा जायेगा ग्रौर वह सत्यनिष्ठा के साथ पुनः चोरी न करने की प्रतिज्ञा करता था।

छोटी-मोटी चोरियों जैसे ग्रपराधों के लिए हम दण्ड नहीं दिया करते थे। इसे एक रोग, पुरानी ग्रादत का बुरा प्रभाव समझा जाता था, जिसे ग्रपराधी ग्रभी तक दूर नहीं कर पाया था।

हम न तो नवागन्तुकों को उजड्डपन ग्रथवा ग्रावारागर्दी की ग्रोर कुछ रुझान के लिए सज़ा देते थे।

हम कुछ ग्रन्य प्रकार के ग्रपराधों के लिए दण्ड दिया करते थे। उदाहरणार्थ, इस प्रकार के मामले को ही लीजिए। हमारे समुदाय की सर्वोत्कृष्ट लड़कियों में शूरा नाम की लड़की थी, जो एक निपुण कम्यूनार्ड, एक टुकड़ी की कमांडर, कोम्सोमोल की सदस्य, ख़ूबसूरत, बहुत फुरतीली थी। उसके प्रति सभी सम्मानपूर्ण व्यवहार करते थे। वह एक रोज़ छुट्टी पर गई ग्रौर उस रात वापस नहीं ग्राई। उसकी एक सहेली ने हमें टेलीफ़ोन करके यह बताया कि शूरा बीमार पड़ गई है ग्रौर उस रात उसके घर रह गई है।

ड्यूटी पर तैनात कमांडर ने, जिसने टेलीफ़ोन पर बातचीत की थी, ग्राकर मुझे इसकी सूचना दी।

इस सूचना से मैं चिन्तित हो गया। मैंने ग्रपने भूतपूर्व विद्यार्थी, कम्यून के डाक्टर, वेश्नेंव से वहां जाकर यह देखने को कहा कि उसे क्या हो गया है। वह वहां गया, किन्तु उसे वहां कोई भी नहीं मिला—न तो शूरा

ग्रौर न उसकी मेज़बान। दूसरे दिन शूरा को कमरे के बीच में खड़ा होने का ग्रादेश दिया गया।

उसके व्यवहार से लड़कियों जैसी झिझक ग्रौर कुछ ग्रन्य बात भी प्रकट हुई। उसने कहा :

"मैं थियेटर जाना चाहती थी, परन्तु मुझे भय था कि मुझे ग्रनुमति नहीं मिलेगी।"

यह कहकर वह बहुत सलज्ज ग्रौर मीठे ढंग से मुस्करा उठी।

परन्तु यह कोई हंसने की बात नहीं थी। मैं इसे जानता था ग्रौर सभी कम्यूनार्ड भी इसे समझते थे। सदा की भांति रोबेसपियेर ने उसे निष्कासित करने का सुझाव प्रस्तुत किया, क्योंकि यदि प्रत्येक टुकड़ी का कमांडर शहर जाने ग्रौर वहां इसी प्रकार "बीमार पड़ जाने" की बात सोच ले ग्रौर हमें वहां डाक्टर भेजने तथा इसी प्रकार की ग्रन्य बातें करने को विवश कर दे, तो क्या होगा।

व्यग्रता के साथ मैंने उनकी ग्रोर देखा...

ग्रध्यक्ष ने कहा :

"इस पर वोट ले लिया जाये।"

मैंने उनसे कहा :

"तुम लोग पागल हो गये हो। वह यहां इतने वर्षों से है ग्रौर ग्रब तुम लोग उसे निकाल बाहर करोगे।"

रोबेसपियेर ने कहा :

"मेरा ख़्याल है कि हम ज्यादती कर रहे हैं। परन्तु हर सूरत में उसे दस घंटे के लिए बन्दी बनाना होगा।"

वही निर्णय था—दस घंटे की गिरफ़्तारी ग्रौर उसके बाद कोम्सोमोल ने इस मामले को ग्रपने हाथ में ले लिया। उस शाम उन्होंने कोम्सोमोल की बैठक में उसके लिए विषम स्थिति पैदा कर दी। पार्टी संगठन को हस्तक्षेप करना पड़ा ताकि शूरा कोम्सोमोल से कहीं निष्कासित न कर दी जाये। सदस्यों ने उससे जो कुछ कहा, वह इस प्रकार था : "यह चोरी से भी बुरी बात है। तुम कोम्सोमोल की एक सदस्य हो, एक टुकड़ी की कमांडर हो, तुमने यह बताने के लिए फ़ोन करवाया कि तुम बीमार हो, परन्तु तुम बीमार नहीं थी, तुम सिर्फ़ कहीं जाना चाहती थी ग्रौर इसलिए तुमने झूठ बोला ग्रौर यह एक ग्रपराध है।"

यह विवेक तत्काल नहीं प्राप्त हो जाता, यह क्रमिक रूप में उपलब्ध होता है और सुमदाय के विकास के साथ बढ़ता है।

एक ऐसे व्यक्ति के प्रति सर्वाधिक कठोर रुख़ अपनाना पड़ता है, जो न्यूनाधिक इरादतन समुदाय के विरुद्ध कार्य करता है। जब अपराध का कारण अपराधी की आदत, उसका चरित्र, आत्मनियंत्रण की कमी अथवा उसकी राजनीतिक और नैतिक अनभिज्ञता हो, तो उसके प्रति कम सख़्ती बरती जा सकती है। ऐसे मामले में मनोवांछित फल के लिए अच्छे प्रभाव और क्रमशः अच्छी आदतों के विकास पर भरोसा किया जा सकता है। परन्तु जिन मामलों में एक व्यक्ति समुदाय के अधिकार को स्वीकार करने से इनकार और इसकी अपेक्षाओं का उल्लंघन करते हुए जान-बूझकर उसके विरुद्ध काम करता है, तो जब तक यह व्यक्ति इस बात को स्वीकार न कर ले कि समुदाय की आज्ञा माननी ही चाहिए, तब तक उसके साथ सख़्ती का व्यवहार करना ही पड़ेगा।

और अब मैं सज़ा के बारे में चन्द शब्द कहूंगा। इस प्रसंग में बातें हमारे बहुत अनुकूल नहीं हैं। एक ओर हम पहले से ही यह मान चुके हैं कि सज़ा आवश्यक और उपयोगी दोनों ही हो सकती है। किन्तु दूसरी ओर, गोकि दण्ड उचित है, निस्सन्देह, हमारी विचित्र शंकाशीलता से प्रादुर्भूत और मुख्यतः हम शिक्षकों द्वारा अनुसरित एक सिद्धान्त यह भी है, जिसका अभिप्राय है कि सज़ा उचित है, परन्तु सबसे अच्छी बात यही है कि दण्ड देने से बचा जाये। आप सज़ा देने के लिए स्वतंत्र हैं, परन्तु यदि आप दण्ड देते हैं, तो आप एक अच्छे शिक्षक नहीं हैं। जो शिक्षक सज़ा नहीं देता, वही अच्छा माना जाता है।

मुझे विश्वास है कि इस तर्क से शिक्षक उलझन में पड़ जायेगा। और इस कारण सदा के लिए इसे स्थिर कर लेना होगा कि दण्ड है क्या। व्यक्तिगत रूप से मुझे यक़ीन है कि सज़ा बहुत हितकारी नहीं है। परन्तु मेरा यह भी विचार है कि जिस मामले में सज़ा देनी हो, उसमें शिक्षक को इसे न देने का कोई हक़ नहीं है। दण्ड देना अधिकार से बड़ी बात है, जिन मामलों में दण्ड देना अनिवार्य हो, उनमें इसे देना कर्त्तव्य है। दूसरे शब्दों में, मैं दृढ़ता के साथ कहता हूं कि एक शिक्षक चाहे दण्ड दे या न दे, परन्तु यदि उसकी चेतना और विश्वास यह प्रेरित करते हैं कि उसे सज़ा देना चाहिए, तो इसे देने से इनकार करने का उसे कोई अधिकार

नहीं है। सहज, स्पष्ट और अन्य शैक्षिक तरीक़ों की भांति तर्कपूर्ण ढंग से मान्य एक शैक्षिक उपाय के रूप में दण्ड को घोषित करना चाहिए।

एक अनिवार्य बुराई के रूप में सज़ा के प्रति ईसाइयत के दृष्टिकोण को अस्वीकार करना चाहिए। मेरे ख़्याल से यह धारणा कि सज़ा किसी कारण से उचित बुराई है, तर्कसंगत अथवा सैद्धान्तिक विचारों के सर्वथा विपरीत है। जहां सजा से भलाई होगी, जहां कोई अन्य तरीक़ा नहीं अपनाया जा सकता और शिक्षक महसूस करे कि दण्ड देना उसका कर्त्तव्य है, उन मामलों में बुराई की कोई बात नहीं हो सकती। यह विश्वास कि सज़ा उचित बुराई है, अध्यापक को प्रपंचात्मक आचरण करनेवाले कपटी व्यक्ति के रूप में बदल देता है। पाखण्ड नहीं करना चाहिए। किसी शिक्षक को इस धारणा के प्रति झूठा लगाव नहीं प्रदर्शित करना चाहिए कि चूंकि वह बिना सज़ा दिये अपना काम करता जा रहा है, इसलिए वह संत है।

ऐसी स्थिति में उस व्यक्ति से क्या करने की अपेक्षा की जाती है, जो यह समझता है कि दण्ड देना चाहिए? वह सोचता है और चिन्तित होता है: अमुक शिक्षक बिना सज़ा दिये काम निकाल लेता है और यदि मैं ऐसा न करूं, तो लोग मेरे बारे में क्या कहेंगे? वे कहेंगे कि मैं एक निम्न कोटि का शिक्षक हूं।

मैं ज़ोर देकर कहता हूं कि इस प्रकार का प्रपंच दूर होना चाहिए। जब सज़ा देना ज़रूरी हो और इससे भलाई होने की संभावना हो, तब एक शिक्षक को दण्ड देना ही चाहिए।

परन्तु इसका अभिप्राय यह कदापि नहीं है कि हम सभी और हरेक मामले में दण्ड की उपयुक्तता पर ज़ोर दे रहे हैं।

सज़ा क्या है? मेरा विचार है कि विशेष रूप से दण्ड के क्षेत्र में सोवियत शिक्षाशास्त्र को बहुत-सी नई बातों को खोजने का अवसर सुलभ है। अपने समाज में मनुष्य के प्रति हमारे मन में इतना सम्मान है, इतनी मानवीयता है कि हमें दण्ड के सम्बन्ध में यथासंभव सबसे उपयुक्त कसौटी को निर्धारित करने में समर्थ होना चाहिए। यह उपयुक्त कसौटी यही है: दण्ड से झगड़े का निबटारा और ख़ातमा हो जाना चाहिए तथा उससे नये झगड़े नहीं पैदा होने चाहिए।

पुरानी व्यवस्था के अन्तर्गत सज़ा की बुराई इस बात में निहित थी कि एक झगड़े को दूर करते हुए यह नया बखेड़ा पैदा कर देती थी, जिसका निबटारा करना अनिवार्यतः और भी अधिक जटिल काम हो जाता था।

सोवियत सज़ा किस रूप में अन्य सज़ाओं से भिन्न है? सर्वप्रथम, इसका उद्देश्य कभी भी क्लेश पहुंचाना नहीं होना चाहिए। सामान्य विवेक के अनुसार बात यह है: मैं तुम्हें सज़ा दूंगा और तुम्हें कष्ट होगा तथा दूसरे तुम्हें कष्ट में देखकर स्वयं यह सोचेंगे: हम तुम्हें कष्ट सहते देख रहे हैं और ऐसी ही ग़लती न करने के लिए हमें सावधानी बरतनी चाहिए।

कोई शारीरिक अथवा नैतिक क्लेश नहीं होना चाहिए। तब सज़ा का अर्थ क्या है? यह जानना कि समुदाय आपकी हरकत की भर्त्सना करता है। अपराधी को सज़ा से अपने को कुचला हुआ नहीं महसूस करना चाहिए, बल्कि इससे वह अपनी ग़लती पर विचार करने की स्थिति में होगा और समुदाय से अपने अलगाव पर, चाहे वह किंचित ही क्यों न हो, सोच-विचार करेगा।

और इसी कारण जब युक्तिसंगत हो और जब लोगों का विचार इसके पक्ष में हो, तभी दण्ड देना चाहिए। यदि समुदाय आपके साथ न हो, यदि आपने उसे अपने पक्ष में करने में सफलता नहीं प्राप्त कर ली है, यदि आपके निर्णय का सभी विरोध करें, तो सज़ा ग़लत है, आपके दण्ड देने से भलाई की अपेक्षा नुक़सान अधिक होगा। यदि आप महसूस करें कि समुदाय का समर्थन आपको प्राप्त है, तभी आप सज़ा देने के लिए स्वतंत्र हैं।

यह दण्ड की सारतत्त्व-संबंधी बातें हैं।

और अब मैं इसके रूप के बारे में कुछ कहूंगा।

मैं किसी प्रकार के स्थिर रूपों के विरुद्ध हूं। सम्बन्धित व्यक्ति के लिए सर्वथा उपयुक्त सज़ा बिल्कुल व्यक्तिगत होनी चाहिए, किन्तु इसके बावजूद दण्ड देने के अधिकार को नियंत्रित करनेवाले कुछ निश्चित नियम और रूप होने चाहिए।

मैंने अपने व्यावहारिक कार्य में इस विचार का समर्थन किया कि दण्ड देने का अधिकार या तो पूरे समुदाय को, अर्थात् आम सभा, अथवा समुदाय द्वारा अधिकृत एक व्यक्ति को प्राप्त है। मैं यह सोच भी नहीं सकता कि यदि दस भिन्न-भिन्न व्यक्तियों को दण्ड देने का अधिकार हो, तो एक समुदाय कैसे पुष्ट हो सकता है।

द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में, जहां मैं विद्यार्थियों के फ़ैक्टरी-सम्बन्धी काम, उनके स्कूल और दैनिक जीवन-क्रम का इनचार्ज था, यह अधिकार केवल

मुझे प्राप्त था। यह अपरिहार्य आवश्यकता है। दण्ड का द्विविधाशून्य औचित्य और अक्सर सज़ा न देना भी नितान्त आवश्यक है।

दूसरे, सज़ा की अपनी परम्परा और जो दण्ड देते हैं, उनके लिए नियम होना चाहिए।

द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में इस सम्बन्ध में एक नियम था। प्रत्येक नवागन्तुक को विद्यार्थी कहा जाता था। कुछ समय बाद, जब समुदाय के प्रति उसका "लगाव" सब की दृष्टि में स्पष्ट हो जाता था, तो उसे कम्यूनार्ड की उपाधि प्रदान की जाती थी और बैज दिया जाता था, जिस पर "फ़ेद" (फ़ेलिक्स एद्मुन्दोविच द्ज़ेर्जीन्स्की) अंकित रहता था। इस बैज से कम्यूनार्ड की उसकी हैसियत प्रमाणित होती थी।

मैं एक विद्यार्थी को श्रम दण्ड दे सकता था। उसे आध घंटे का काम फ़ैक्टरी में नहीं, बल्कि रसोईघर अथवा पौधघर में करना पड़ता था। अथवा मैं उसे रविवार के अवकाश से वंचित रखता था या उसके जेबख़र्च का पैसा नहीं देता था: विद्यार्थियों द्वारा अर्जित धन उनके निजी बचत खाते में जमा कर दिया जाता था और वे अपने जेबख़र्च के लिए इस रक़म में से बिना मेरे हस्ताक्षर के कुछ भी नहीं निकाल सकते थे। किसी अपराधी को फ़ैक्टरी से हटाकर और उसे घरेलू काम में लगाकर मैं उसे इस प्रकार सबसे कड़ी सज़ा दिया करता था।

मैं इस प्रकार की सज़ाओं को लागू कर सका और मुझे इन्हें विद्यार्थियों को देने का अधिकार था।

कम्यूनार्डों को ये दण्ड देने का मुझे अधिकार नहीं था। उस समय उन्हें गिरफ़्तार कर लेने की केवल एक सज़ा लागू थी। इसके प्रतिकूल एक विद्यार्थी हिरासत में नहीं रखा जा सकता था।

इस व्यवस्था का बड़ा महत्त्व था। प्रत्येक विद्यार्थी कम्यूनार्ड बन जाने के विशेषाधिकार को यथासंभव शीघ्र प्राप्त करने की कोशिश करता था। उन्हें बन्दी बना लेने के बारे में कोई बाधा नहीं थी। उन्हें छोटे-मोटे अपराधों, साधारण ग़लतियों, यहां तक कि बटन बन्द न करने के लिए भी एक घंटे की गिरफ़्तारी की सज़ा दी जाती थी। इस आदेश को देते समय मुझे बैठे रहने का कोई अधिकार नहीं था। मुझे खड़े होकर यह कहना पड़ता था:

"अमुक व्यक्ति को मैं एक घण्टे की गिरफ़्तारी की सज़ा देता हूं।"

ग्रौर वह ग्रादेश सुनकर कहता :

"जी ! एक घंटे की गिरफ़्तारी।"

यदि मैं चाहता, तो मैं उन्हें दस घंटे तक की गिरफ़्तारी की सज़ा दे सकता था।

रविवार को सम्बन्धित लड़का ड्यूटी पर तैनात कमांडर को ग्रपनी बेल्ट सौंपकर मेरे ग्राफ़िस में ग्राकर कहता :

"मैं सज़ा पाने के लिए ग्रा गया हूं।"

ग्रौर चूंकि वह ग्रपने ग्राप वहां ग्रा जाता, इसलिए मैं उसे क्षमा नहीं कर सकता था, क्योंकि १९३३ में ग्राम सभा ने मुझे क्षमा करने के ग्रधिकार से वंचित कर दिया था। ग्रौर यह सर्वथा ठीक था, क्योंकि यदि मैं किसी को किसी क्षण सज़ा देता ग्रौर दूसरे दिन क्षमा कर देता, तो शायद ही वहां कोई व्यवस्था क़ायम रहती। इस कारण मैं उसे क्षमा नहीं प्रदान कर सकता था ग्रौर कुछ कार्य करते हुए उसे मेरे ग्राफ़िस में रुकना पड़ता था। मेरे सिवा ग्रौर कोई उससे बात नहीं कर सकता था ग्रौर उसके ग्रपराध के बारे में भी कोई बातचीत करने की ग्रनुमति नहीं थी। यह ग्रोछी प्रवृत्ति मानी जाती थी, इस सम्बन्ध में कोई चर्चा करना मेरे लिए बेतुकी बात होती। वह बन्दी था, वह साहस के साथ सज़ा भोग रहा था ग्रौर ऐसे समय ग्रपराध की याद दिलाकर उसे लज्जित करना स्पष्टतः ग्रशिष्ट बात होती।

सामान्यतया हम कम्यून की समस्याग्रों, फ़ैक्टरी के मामलों ग्रादि पर बातचीत किया करते थे। मुझे उसे यह याद दिलाने कि वह बन्दी है ग्रथवा कितनी देर तक वह वहां रहा, इसे जानने के लिए घड़ी देखने का ग्रधिकार नहीं था, क्योंकि ग्रपनी गिरफ़्तारी के समय को सुव्यवस्थित रूप देना स्वयं उसका कर्त्तव्य माना जाता था। यह मेरे लिए सर्वथा ग्रनुकूल था कि यह बात उसके ज़िम्मे होती थी।

यह गिरफ़्तारी किस प्रकार की थी, इसे बिना बताये ग्राप नहीं समझ सकते। उन्हें मुझसे बातचीत करते हुए मेरे ग्राफ़िस में ग्रपनी छुट्टी का पूरा दिन व्यतीत करना पड़ता था।

लड़कियां गिरफ़्तारी की बात सोचकर ही बहुत भयभीत हो जाती थीं–इसका ग्रर्थ था सम्पूर्ण समुदाय के सम्मुख ग्रपमानित होना। इसलिए

"फ़ेद" बैज से विभूषित लड़की-कम्यूनार्ड कभी भी गिरफ़्तार न होने के लिए सावधानी बरतती थीं।

एक रोज़ मैंने एक चुस्त, ख़ूबसूरत लड़की को, जो टुकड़ी की कमांडर थी, दो घंटे के लिए बन्दी बनाया और वह मेरे आफ़िस में पूरे समय बैठे हुए रोती रही: अब वह आम सभा को क्या मुंह दिखायेगी? इस प्रसंग में यह भी बता दूं कि इस समय वह ख़ार्कोव थियेटर में नाटकों में अभिनय करती है।

मैं पहले जिस प्रमेय का उल्लेख कर चुका हूं, उसका प्रयोग करना गिरफ़्तारी का अभिप्राय था: एक व्यक्ति के लिए सर्वाधिक सम्मान के साथ ही उससे सर्वाधिक अपेक्षाएं रखना और हमारी दृष्टि में गिरफ़्तारी एक परमार्थित बात थी।

जब तार भेजकर मुझे तत्काल कीयेव बुलाया गया और एक घंटे के भीतर मुझे कम्यून को छोड़ देना था, तो जिस समुदाय के साथ मैंने आठ साल व्यतीत किये थे, उससे विदा लेने के लिए मेरे पास आध घंटे से अधिक समय नहीं था। निस्सन्देह, मैं उनसे कुछ भी नहीं कह सका, विदाई के उस क्षण में उन्हीं की भांति मेरे लिए भी कुछ कहना कठिन था। लड़कियां रो पड़ीं, सभी को काफ़ी धक्का लगा था, परन्तु फिर भी इसकी अनुकूल परिणति हुई। पियानो पर धूल देखकर मैंने विदाई का अपना भाषण बीच ही में रोककर पूछा:

"आज थियेटर में किस की ड्यूटी है?"

"पहली टुकड़ी ड्यूटी पर है।"

"कमांडर को पांच घंटे की गिरफ़्तारी की सज़ा।"

वह मेरा पुराना साथी था। हमने कम्यून में आठ साल साथ-साथ व्यतीत किये थे। परन्तु पियानो पर धूल क्यों पड़ी रह गई? उसने उधर ध्यान नहीं दिया था और इस कारण उसे पांच घण्टे की गिरफ़्तारी की सज़ा मिली।

मैं वहां से चला गया और जब दो महीने बाद वहां निरीक्षण के लिए पहुंचा, तो उस लड़के ने मेरे आफ़िस में आकर कहा:

"मैं सज़ा पाने के लिए उपस्थित हूं।"

"किसलिए?"

"पियानो पर धूल जमने के कारण।"

"परन्तु इसके पहले तुमने दण्ड क्यों नहीं भोग लिया?"

"मैं यहां आपकी उपस्थिति में इसे प्राप्त करना चाहता था।"

और इसलिए मुझे वहां उसके साथ पांच घण्टे तक बैठना पड़ा।

रूप के सम्बन्ध में इतना ही पर्याप्त है।

यदि समुदाय अपने सामान्य भाव में एकजुट हो और विश्वास हो, तो सजा बहुत ही मौलिक और दिलचस्प चीज हो सकती है, अर्थात् ग्राम सभा ही दण्ड दे।

एक बार ग्राम सभा में कोम्सोमोल के एक सीनियर सदस्य ने प्रशिक्षक की निन्दा की। लड़का सही था, परन्तु उसने जिस भाषा का प्रयोग किया, वह अनुचित थी। और इस कारण ग्राम सभा ने निर्णय किया: "पायनियर किरेन्को (सबसे छोटा लड़का) कोम्सोमोल के इस सदस्य को आचरण-सम्बन्धी अमुक-अमुक नियम समझावे।"

वे यही करना चाहते थे। सभा समाप्त होने के बाद ड्यूटी पर तैनात कमांडर ने किरेन्को और बड़े लड़के को बुलाकर कहा:

"बैठ जाओ और सुनो।"

किरेन्को ने तत्परता से इस काम को निबाहा और बड़े लड़के ने उसी प्रकार ईमानदारी से उसकी बातें सुनीं।

ग्राम सभा की अगली बैठक में किरेन्को ने यह रिपोर्ट प्रस्तुत की:

"पायनियर किरेन्को ग्राम सभा द्वारा सौंपे गए काम को पूरा करने की सूचना देता है।"

"किरेन्को ने जो कुछ तुमसे कहा, क्या तुमने उसे समझ लिया?"

"हां, मैं समझ गया।"

"तब जाओ।"

इस प्रकार यह प्रकरण समाप्त हो गया।

एक अन्य मामला इस प्रकार था: एक कम्यूनार्ड जब एक लड़की-कम्यूनार्ड के साथ बाहर टहल रहा था, तो उसने कुछ व्यक्तियों को लड़ते हुए देखा। उत्तेजित होकर वह उस झगड़े में शामिल हो गया। उसके लिए इसका परिणाम काफ़ी कष्टदायक रहा। ग्राम सभा के प्रस्ताव में कहा गया था:

"अगली छुट्टी के दिन तीन बजकर पांच मिनट पर फ़लां को अपनी हरकत पर ग़ौर करना चाहिए और कमांडर को रिपोर्ट देनी चाहिए।"

उसे अपने कार्य पर विचार करना पड़ा कि क्या उसका व्यवहार ठीक था या नहीं। एक सप्ताह के लिए उसे चिन्तन की काफ़ी सामग्री मिल गई। और आदेशानुसार रिपोर्ट देते हुए वह ठीक निष्कर्ष पर पहुंचा।

वास्तव में इस प्रकार की सज़ा और किसी बात की अपेक्षा अधिक चेतनावर्द्धक है, जिसे देने में समुदाय सहज रूप में अपनी शक्ति प्रदर्शित करता है। किन्तु निस्सन्देह मेरी कार्य-प्रणाली में मुख्य चीज सज़ा नहीं बल्कि निजी ढंग की बातचीत थी।

तीसरा व्याख्यान

व्यक्तिगत व्यवहार विधि

आज मैं आपके साथ व्यक्तिगत प्रभाव, व्यक्तिगत व्यवहार की संशिक्षा पर विचार करना चाहता हूं। मैंने अपने कार्य के प्रारम्भिक काल में सामूहिक प्रभाव, सामूहिक संगठन से व्यक्तिगत संगठन के संक्रमण का ग़लत विचार अपनाया। मेरा ख़्याल था कि एक संगठन के रूप में समुदाय को प्रभावित करना प्रमुख काम था और उस समुदाय के विकास को दुरुस्त करनेवाले के रूप में व्यक्तियों को प्रभावित करना गौण काम था।

ज्योंही मुझे काफ़ी अनुभव प्राप्त हुआ, त्योंही मुझे अगाध विश्वास हो गया और बाद में व्यवहार से इस विश्वास की पुष्टि हुई कि समष्टि से व्यष्टि की ओर प्रत्यक्ष संक्रमण जैसी कोई चीज़ नहीं है। विशेष रूप से एक शैक्षिक उद्देश्य के लिए संगठित प्रारम्भिक समुदाय द्वारा रूपान्तरण होता है।

मेरा ख़्याल है कि भविष्य में प्रारम्भिक समुदाय के सिद्धान्त के प्रति शिक्षाशास्त्री विशेष ध्यान देंगे। प्रारम्भिक समुदाय शब्द का अभिप्राय क्या है?

यह शब्द ऐसे समुदाय के लिए प्रयुक्त हो सकता है, जिसके सदस्यों में सतत सम्बन्ध, दोस्ताना और सैद्धान्तिक सम्पर्क क़ायम रहता है। यह वही बात है, जिसे एक समय हमारे शिक्षाशास्त्रीय सिद्धान्त के अन्तर्गत सामूहिक "सम्पर्क" की संज्ञा प्रदान करने का सुझाव प्रस्तुत किया गया था।

निस्सन्देह, हमारे स्कूलों में ऐसे समुदाय हैं। वे कक्षा के रूप में हैं, और शायद उनकी एकमात्र त्रुटि यह है कि वे एक प्रारम्भिक समुदाय अर्थात् व्यक्ति और स्कूल-समुदाय के बीच सम्पर्क स्थापित करने की भूमिका अदा नहीं करते और वहुधा वे ही अन्तिम समुदाय का रूप ग्रहण कर लेते हैं।

मैंने कुछ स्कूलों में कक्षा को अन्तिम समुदाय के रूप में देखा और कभी-कभी एक स्कूल-समुदाय पूर्ण रूप में दिखाई नहीं दिया।

मुझे अधिक अनुकूल परिस्थितियां सुलभ थीं, क्योंकि मेरे कम्यूनार्ड वहीं रहते और काम करते थे, और इस प्रकार पूरे समुदाय के मामलों में दिलचस्पी लेने तथा इसके हितों के अनुकूल आचरण करने के अनेक विवेकसंगत और व्यावहारिक कारण थे। किन्तु फिर भी स्कूल की कक्षा की भांति मेरा समुदाय एक सहज प्रारम्भिक समुदाय नहीं था। मुझे इसका गठन करना पड़ा। बाद में दससाला स्कूल हो गया था और स्कूल-कक्षा के ढंग के एक प्रारम्भिक समुदाय पर मैं अपना काम आधारित कर सकता था। परन्तु मैंने इस रास्ते को नहीं अपनाया, एक कक्षा बच्चों को उनके दैनिक काम में एकजुट करती है और इससे स्कूल के शेष विद्यार्थियों से वे अपने को अलग कर लेते हैं। उनके लिए अपनी कक्षा के हितों से अपने को बांध लेने के अनेक और बहुत पुष्ट कारण हैं। और इस कारण बाद के वर्षों में मैंने स्कूल-कक्षा के ढांचे के अनुसार अथवा कार्य-टोली के ढंग पर एक प्रारम्भिक समुदाय के गठन का विचार परित्याग दिया। स्कूल-कक्षा और उत्पादन-कार्य के सुदृढ़ सम्पर्कों से संयुक्त प्रारम्भिक समुदायों से गठित कम्यून को संगठित करने के बारे में मेरे प्रयासों के परिणाम खेदजनक रहे। सामान्यतया इस प्रकार का प्रारम्भिक समुदाय सदा सामूहिक हितों से दूर रहने की ओर प्रवृत्त रहता है और अलग-थलग पड़ जाता है। इस दशा में यह एक प्रारम्भिक समुदाय के रूप में अपना महत्त्व खो बैठता है, स्कूल-समुदाय के हितों को नष्ट कर देता है और वास्तव में उच्चतर मंज़िल की ओर संक्रमण को कठिन बना देता है।

मैं अपनी भूलों से—ऐसी भूलों से, जिनसे मेरे शैक्षिक काम पर असर पड़ा—इस निष्कर्ष पर पहुंचा। मुझे इस प्रश्न पर बोलने का अधिकार है, क्योंकि मैं देखता हूं कि अनेक स्कूलों में वही बात हो रही है, जहां प्रारम्भिक समुदायों के हित प्रमुख हैं।

सामुदायिक शिक्षा का लक्ष्य केवल प्रारम्भिक समुदायों द्वारा प्राप्त नहीं हो सकता, क्योंकि इस प्रकार के समुदाय की एकता से, जहां बच्चे एक-दूसरे को दिन भर देखते हैं और मैत्रीपूर्ण सहयोग के साथ रहते हैं, साथियों के प्रति पक्षपात की भावना पैदा होती है और इसके फलस्वरूप ऐसी शिक्षा प्राप्त होती है, जिसे हम पूर्णतया सोवियत शिक्षा नहीं कह

सकते। केवल एक बड़े समुदाय द्वारा, जिसके हित केवल संग-साथ से नहीं, बल्कि गहन सामाजिक मेल से पैदा होते हैं, व्यापक राजनीतिक शिक्षा में संक्रमण हो सकता है, जहां "समुदाय" शब्द का अभिप्राय पूरा समाज होता है।

किशोरों को एक छोटा संकीर्ण समुदाय बनाने की छूट देने का ख़तरा यह है कि इससे उनका व्यापक राजनीतिक शिक्षण नहीं, बल्कि सामूहिक पढ़ाई-लिखाई मात्र होगी।

अन्ततः मैंने इस प्रकार की व्यवस्था की कि प्रारम्भिक समुदाय एक केन्द्र बन गया, जो दूसरे समूहों से अपनी शिक्षा और काम की अभिरुचि प्राप्त करता था। मैंने इसी कारण अन्त में विभिन्न कक्षाओं और विभिन्न कार्यों से सम्बन्धित टोलियों के लड़के-लड़कियों को शामिल कर विद्यार्थियों को टुकड़ियों में बांटने का निर्णय किया।

मैं इसे अच्छी तरह महसूस करता हूं कि इस ढांचे का औचित्य आपको पर्याप्त विश्वसनीय नहीं प्रतीत होगा। विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत करने का मेरे पास समय नहीं है, और इसलिए मैं संक्षेप में कुछ परिस्थितियों का उल्लेख करूंगा। उदाहरणार्थ, उम्र के आधार पर समूह बनाने का प्रश्न था। मैं जानना चाहता था कि यह तरीक़ा कैसे फलदायक होता है, इसलिए मैंने इसे आंकड़ों में कार्यान्वित करके और व्यावहारिक रूप में इसका अध्ययन किया। प्रारम्भ में मैं भी समान आयु के बच्चों के प्रारम्भिक समुदाय गठित करने के पक्ष में था। अंशतः उनकी शिक्षा के हितों के कारण मेरा ऐसा विचार बना।

इससे किशोरों को बड़े लड़कों से पृथक् अधिक स्वाभाविक और ठीक वातावरण में रखना प्रतीत होगा। अपने ही हितों और संगठनों सहित इस उम्र में (११ या १२) उन्हें एक समुदाय में सम्बद्ध होना चाहिए और मेरा ख़्याल था कि यह सबसे अधिक उपयुक्त शिक्षाशास्त्रीय दृष्टिकोण है। मैं शिक्षाशास्त्र-सम्बन्धी साहित्य से भी प्रभावित था, जिन में यह प्रतिपादित किया गया था कि शिक्षा के सम्बन्ध में वयगत समूह एक सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात है।

किन्तु इसके बाद मैंने अनुभव किया कि वास्तव में किशोर अन्य वयगत समूहों से पृथक् कृत्रिम वातावरण में रख दिये गये थे। वे बड़े लड़के-लड़कियों के सतत प्रभाव से वंचित थे, उनसे अनुभव नहीं प्राप्त कर

पाते थे, वे अपने बड़े बन्धुओं से, उन लोगों से, जो अधिक अनुभवी और कार्यकुशल थे और जो कुछ अर्थ में किशोरों के लिए अनुकरणीय आदर्श के समान थे, कोई नैतिक अथवा सुरुचिपूर्ण प्रेरणा नहीं प्राप्त करते थे।

जब मैंने प्रयोग के रूप में, विभिन्न वयगत समूहों को मिलाने का प्रयास किया, तो मैंने महसूस किया कि मैं अपने काम में बहुत अधिक तरक़्क़ी कर रहा हूं। और मैंने इसी तरीक़े को अपनाने का निर्णय किया। अन्तिम सात या आठ साल के दौरान मेरी टुकड़ियों में कुछ सबसे बड़े, सर्वाधिक अनुभवी, सुविज्ञ और राजनीतिक दृष्टि से विकसित कोम्सोमोल के सदस्य और कुछ सबसे छोटे बच्चे शामिल थे। विभिन्न वयगत समूहों को मिलाकर गठित इस प्रकार के समुदाय का बहुत ही अच्छा शैक्षिक प्रभाव पड़ा और इससे भी बढ़कर यह बात थी कि यह युक्तिपूर्ण और चुस्त था, इसे संभालना मेरे लिए आसान था।

एक ही उम्र के लड़के-लड़कियों को मिलाकर गठित समुदाय सदा अपने को अपने ही विशिष्ट हितों के आवरण से आवृत्त कर लेने, मुझसे, अपने पथ-प्रदर्शक, और शेष समुदाय से दूर रहने की ओर प्रवृत्त रहता है। फ़र्ज़ कीजिए, उनमें सभी स्केटिंग में बड़ी अभिरुचि रखते हैं, इस उत्सुकता के कारण स्वभावतः वे सर्वथा अपनी ही सीमा के अन्दर बंध जाते हैं। परन्तु यदि विभिन्न वयगत समूहों से मेरा समुदाय बना है, तो वह जिस प्रकार का जीवन व्यतीत करता है और जिन शौक़ों की ओर प्रवृत्त रहता है, उस प्रसंग में यह अपने बड़े और छोटे दोनों प्रकार के सदस्यों से अधिकाधिक प्रयास अपेक्षित समझते हुए, उनसे बड़ी अपेक्षाएं रखते हुए और फलतः अधिक वांछनीय शैक्षिक प्रभाव पैदा करते हुए एक अधिक गूढ़ आदर्श का अनुसरण करता है।

बाद के वर्षों में मैंने विभिन्न वयगत समूहों के समुदायों का गठन करते समय इस सिद्धान्त का अनुसरण किया कि "कौन किसके साथ मित्रता करना चाहता है।" शुरू में इस साहसपूर्ण उपक्रम से मुझे भय हुआ, परन्तु फिर मैंने अनुभव किया कि यह सर्वाधिक सहज और हितकर व्यवस्था है, बशर्ते कि इस स्वाभाविक प्रारम्भिक समुदाय में स्कूल की विभिन्न कक्षाओं और कार्य-टीमों के किशोर शामिल हों।

पिछले वर्षों में मैं इस अटल निर्णय पर पहुंचा कि यह सर्वोत्कृष्ट तरीक़ा था।

एक टुकड़ी दस या बारह व्यक्तियों की ऐच्छिक यूनियन थी। निस्सन्देह यह समाज धीरे-धीरे गठित हुआ। कम्यून में ऐसे लड़के थे, जिनके साथ कोई भी अपनी इच्छा से एक टुकड़ी में शामिल होना नहीं चाहता था। संयोग से मुझे सबसे बिगड़े हुए लड़कों को पहचानने में सहायता प्राप्त हो गई। पांच सौ बच्चों के हमारे समुदाय में क़रीब पन्द्रह से बीस तक ऐसे लड़के थे, जिन्हें कोई भी टुकड़ी स्वेच्छा से लेने को तैयार नहीं होती। आसानी से न सुधरनेवाली लड़कियों की संख्या बहुत कम थी, कुल १५० में तीन या चार से अधिक नहीं थीं, गोकि सामान्यतया लड़कों की अपेक्षा लड़कियां कम सहायक होती हैं। इस विरोध का कारण यह था कि वास्तव में लड़कियों की अपेक्षा लड़के अधिक सिद्धान्तप्रिय थे, इसलिये वे कभी-कभी अत्युक्ति करके इस या उस व्यक्ति को लेने से इनकार करते थे। वे बताते थे कि वह उनके स्केट को तोड़ देगा, छोटे बच्चों को तंग करेगा अथवा इसी प्रकार का कोई अन्य ग़लत काम करेगा। लड़कियों ने अधिक आशावादी विचार अपनाया, वे अपने बीच किसी सन्देहास्पद व्यक्ति को यह आशा करते हुए कि वे उसे सुधार लेंगी शामिल करना शीघ्र स्वीकार कर लेती थीं।

मैंने ऐसे मामलों में क्या किया? मैंने अवांछित लड़कों को आम सभा के सम्मुख प्रस्तुत किया और कहा:

"यही वे पन्द्रह व्यक्ति हैं, जिन्हें कोई भी टुकड़ी नहीं लेना चाहती। ज़ेम्ल्यानोय् पहली टुकड़ी में शामिल होना चाहता था, परन्तु उसे शामिल करना नामंज़ूर कर दिया गया। उसने दूसरी टुकड़ी में शामिल होने की कोशिश की, परन्तु पुनः उसे अस्वीकार कर दिया गया। उसने पन्द्रहवीं टुकड़ी में शामिल होने का प्रयास किया और फिर वही बात हुई। अब हम क्या करें?"

इस प्रश्न पर बहस शुरू हुई। एक टुकड़ी का प्रतिनिधि खड़ा होता और कहता:

"पहली, दूसरी और पन्द्रहवीं टुकड़ियों ने इसे शामिल करने से क्यों इनकार किया? हम उनसे इसका स्पष्टीकरण चाहते हैं।"

सफ़ाई बहुत संक्षिप्त होती।

"यदि तुम समझते हो कि यह ठीक नहीं, तो अपनी चौदहवीं टुकड़ी में इसे शामिल कर लो। तुम इसकी जवाबदेही ले लो और इस परेशानी को मोल लेने के लिए तुम्हें पूरी छूट है।"

"उससे हमारा कोई सरोकार नहीं है," तत्काल यह उत्तर मिलता। "वह तुम्हारे पास गया। तुमने शेखी बघारी कि तुम उसे सुधार दोगे।"

नतीजा यह निकलता कि कोई टुकड़ी उसे अपनाने को तैयार नहीं होती।

मैंने ऐसी अवस्थाओं को शैक्षिक उद्देश्य के लिये इस्तेमाल करने की कोशिश की। स्पष्टतः जो टुकड़ी लड़के को अपने में शामिल करने से इनकार करती, उसके लिए यह बात अप्रिय और कष्टसाध्य दोनों होती, विशेष रूप से इस कारण भी कि किसी ने उसके विरुद्ध कोई निश्चित आरोप नहीं लगाया और केवल यह कहा: कोई अन्य टुकड़ी उसे स्वीकार कर ले। और समुदाय द्वारा तिरस्कृत वह लड़का वहां खड़ा रहता।

इसके बाद वह लड़का क़सम खाते हुए कहता कि वह अच्छा व्यवहार करेगा और वादा करता कि भविष्य में वह सराहनीय काम करेगा। ख़ैर, इस मसले को किसी न किसी रूप में सुलझाना ही पड़ता। और इसके बाद नेतागण—कोम्सोमोल ब्यूरो के सदस्य और टुकड़ी के कमांडर—यह सुझाव प्रस्तुत करते हुए कि लड़के को किस टुकड़ी में रखा जाय, अपनी बात कहते। सामान्यतया इस सारी बातचीत का कोई नतीजा नहीं निकलता।

वे पन्द्रह टुकड़ियों में से प्रत्येक में एक-एक लड़के को शामिल करने के लिए दबाव डालने की कोशिश करते हुए ज़ेम्ल्यानोय् का प्रश्न छोड़कर इवानोव, रोमान्चेन्को, पेत्रेन्को और पन्द्रह में से अन्य शेष लड़कों के मसले पर ग़ौर करने लगते।

नई प्रक्रिया शुरू होती। प्रत्येक टुकड़ी उन पन्द्रह लड़कों में से सबसे भले लड़के को लेने की कोशिश करती। फिर अवकाश दिया जाता और उसके बाद एक कमांडर कहता:

"मैं अमुक लड़के को अपनी टुकड़ी में शामिल करूंगा।"

अन्य सभी टुकड़ियों में सबसे भले लड़के को अपनाने के बारे में होड़ लग जाती और वही लड़का ज़ेम्ल्यानोय्, जिसे शुरू में कोई अपनी टुकड़ी में शामिल करना नहीं चाहता था, उसे अब सभी ने पसन्द किया, क्योंकि पेत्रेन्को, शापोवालोव और शेष तो उसकी अपेक्षा अधिक ख़राब थे।

मान लीजिए कि पहली टुकड़ी ने उसे पा लिया।

हमने उनसे कहा:

"उसके लिए तुम लोग जिम्मेदार हो। तुम उसे चाहते थे, इस कारण उसकी जवाबदेही तुम्हारे ऊपर है।"

हम फिर दूसरे उम्मीदवार के प्रश्न पर विचार करते। शेष चौदह लड़कों में वह सबसे अच्छा माना जाता और पुनः टुकड़ियों में उसे प्राप्त करने के लिए होड़ लग जाती। और केवल वोस्कोबोइनिकोव और शापोवालोव के बच जाने तक यह होड़ लगी रही। और फिर शेष दो टुकड़ियों ने दो बुरे लड़कों में से अपेक्षाकृत कम बुरे को अपना लेने की कोशिश की।

इस बंटवारे की प्रक्रिया में मैं सभी अवांछनीय लड़कों का अध्ययन भी कर लेता। जहां तक मेरी चिन्ता की बात थी, उन्होंने अपना एक पृथक् ही समुदाय बना रखा था। मैं सदैव उन पर निगाह रखता था और मैं इसे समझता था कि उन पन्द्रह लड़कों का समुदाय मेरा सबसे ख़तरनाक समूह था। उनके विरुद्ध अपराध का कोई अभिलिखित प्रमाण नहीं था, परन्तु फिर भी मेरे लिए यही जान लेना बहुत महत्त्वपूर्ण था कि समुदाय उन्हें अपने बीच स्वीकार करने को इच्छुक नहीं था।

लड़के लड़कियों को यह ज्ञान हो गया था कि पेत्रेन्को सबसे बुरा था और अपनी टुकड़ी में उसे शामिल न करने की उनकी इच्छा का अर्थ यही था कि मुझे उस पर ख़ास निगाह रखनी थी। अन्ततः जिस टुकड़ी ने उसे अपनाया, वह उसके लिए जवाबदेह भी थी, इस बात से मुझे बड़ी सहायता मिली।

हमारे प्रारम्भिक समुदायों का गठन इसी प्रकार हुआ। निस्सन्देह, समुदाय के सर्वोत्कृष्ट उपयोग के लिए कुछ बहुत ही जटिल व्यवस्था करनी पड़ी। टुकड़ी के काम के ढंग और पद्धति में सर्वाधिक एकरूपता क़ायम करने की आवश्यकता होती है।

एक प्रारम्भिक समुदाय, एक टुकड़ी क्या है? गोर्की बस्ती और द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून के अपने व्यावहारिक कार्य में हमने निम्नांकित व्यवस्था अपनाई: हमने, अर्थात् कम्यून के प्रधान की हैसियत से स्वयं मैंने, कम्यून के सभी निकाय—कोम्सोमोल ब्यूरो, कमांडर परिषद् और आम सभा ने हरेक व्यक्ति से कोई सम्बन्ध न रखने की कोशिश की। अर्थात् हमने आधिकारिक रूप से कोई सम्बन्ध न रखने का प्रयास किया। आपके समक्ष इसके औचित्य को सिद्ध करना मेरे लिए बहुत कठिन है। मैंने इसे समानान्तर शैक्षिक प्रभाव का तर्क कहा है। मेरे लिए इसकी व्याख्या प्रस्तुत करना बहुत कठिन है, क्योंकि मैंने इस सम्बन्ध में कभी कुछ नहीं लिखा है और

कभी भी कोई सूत्र पाने की न तो कोशिश की है और न उसे पाया है।

समानान्तर शैक्षिक प्रभाव क्या है?

हमने केवल टुकड़ी से अपना सम्बन्ध रखा। व्यक्ति से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं था। प्रामाणिक सूत्र यही था। व्यावहारिक रूप में हमने व्यक्ति से सम्बन्ध रखा, परन्तु हमने इसी बात पर ज़ोर दिया कि व्यक्ति से हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है।

इसका स्पष्टीकरण यह है। हम नहीं चाहते थे कि प्रत्येक अलग-अलग व्यक्ति यह महसूस करे कि वह सुधारने की वस्तु है। जो तरीक़ा मुझे सूझ पड़ा, वह यह था कि एक बारह अथवा पन्द्रह वर्षीय लड़का वहां सचेष्ट जीवन व्यतीत कर रहा है, चैन से है, इस जीवन से कुछ सुख प्राप्त कर रहा है और अनुभव तथा विचारों को संचित कर रहा है।

जहां तक हमारा सम्बन्ध है, वह सुधारने की वस्तु है, परन्तु जहां तक उसका सम्बन्ध है, वह एक जीवित व्यक्ति है और मेरे लिए इस बात की कोशिश करना तथा उसे यह विश्वास दिलाना हितकर न होगा कि वह एक व्यक्ति नहीं है, वह एक ऐसा व्यक्ति है, जिसके चरित्र का निर्माण हो रहा है, कि शिक्षाशास्त्रीय दृष्टिकोण के अनुसार वह एक जीवित प्राणी नहीं, बल्कि एक पदार्थ है। मैंने उसे यह विश्वास दिलाने की कोशिश की कि मैं एक प्रबोधक से बढ़कर एक शिक्षक हूं, जो उसे लिखने-पढ़ने की शिक्षा दे रहा है; कि मैं उसे एक शिल्प की जानकारी प्राप्त करने में सहायता पहुंचा रहा हूं, कि उत्पादन-प्रक्रिया में उसके योगदान को महत्त्वपूर्ण मानता हूं, कि मैं यह अनुभव करता हूं कि वह एक नागरिक है और यह कि उम्र और अनुभव की दृष्टि से मैं बड़ा साथी हूं, जो उसकी सहायता और सहभागिता से उसकी जीवन-पद्धति को व्यवस्थित कर रहा था। मैंने इस बात की सावधानी बरती कि वह यह महसूस न करे कि सिर्फ़ वह एक विद्यार्थी, शिक्षा के एक पात्र के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, कि उसका कोई सामाजिक अथवा व्यक्तिगत महत्त्व नहीं है। परन्तु वस्तुतः वह मेरे लिए सर्वथा वही था।

टुकड़ी के साथ भी बिल्कुल यही बात थी। हमने इस पर ज़ोर दिया कि एक टुकड़ी बड़े सामाजिक कार्यभार को पूरा करने की ओर उन्मुख एक छोटा सोवियत केन्द्र थी। कोशिश करके कम्यून को यथासंभव उच्चतम स्तर तक पहुंचाना टुकड़ी पर निर्भर था। इसे भूतपूर्व कम्यूनार्डों की मदद

करनी थी, कम्यून में आनेवाले और सहायता की अपेक्षा रखनेवाले एक समय के गुमराहों की सहायता करनी थी।

टुकड़ी एक सामूहिक कार्यकर्ता है और इसके लिए सामाजिक कार्य और जीवन के प्रारम्भिक केन्द्र के रूप में काम करना आवश्यक था।

अपने शिक्षक समूह के साथ हम इस नतीजे पर पहुंचे कि अपने को एक नागरिक, सर्वोपरि एक इन्सान महसूस करने के लिए एक व्यक्ति को बहुत सावधानी के साथ वातावरण के अनुकूल संवारना आवश्यक है। बाद के हमारे काम में यह एक परम्परा बन गई।

पेत्रेन्को एक बार देर से काम करने आया। उसी शाम मुझे इस बात की सूचना दी गई। मैंने उसके कमांडर को बुलाकर कहा:

"तुम्हारी टुकड़ी का एक सदस्य काम पर देर से आया।"

"हां। पेत्रेन्को देर से आया था।"

"ध्यान रखो कि फिर ऐसी बात न हो।"

"पुनः ऐसी बात नहीं होने पायेगी।"

परन्तु पेत्रेन्को पुनः लेट हुआ। मैंने टुकड़ी को बुलवाया।

"दूसरी बार तुम्हारा पेत्रेन्को काम पर देर से आया।"

मैंने पूरी टुकड़ी को झिड़की दी। उन्होंने वादा किया कि फिर ऐसी बात नहीं होने पायेगी। मैंने कहा:

"तुम लोग जा सकते हो।"

मैंने यह जानने के लिए इस पर ध्यान रखा कि क्या होता है। मैं जानता था कि वे पेत्रेन्को को सुधारने की कोशिश करेंगे और अपनी टुकड़ी के एक सदस्य के नाते, सम्पूर्ण समुदाय के एक सदस्य के नाते उससे बड़ी अपेक्षाएं रखेंगे।

कमांडर परिषद् की बैठकों में आम सभा द्वारा निर्वाचित कमांडर उपस्थित होते थे। परन्तु चाहे कमांडर स्वयं अथवा उसकी टुकड़ी का कोई सदस्य आवे, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता था। हमारा नियम इसी प्रकार का था। हम इसे सुनिश्चित कर लेना चाहते थे कि सभी टुकड़ियों के प्रतिनिधि उपस्थित रहें। क्या पहली टुकड़ी उपस्थित है? हां, उपस्थित है, परन्तु किसी अन्य कार्य में व्यस्त कमांडर का प्रतिनिधित्व अमुक व्यक्ति कर रहा है। इस व्यक्ति को अपनी टुकड़ी और अपने कमांडर की ओर से बैठक में उपस्थित होने और बोलने का अधिकार प्राप्त था।

मैं एक दूसरा उदाहरण प्रस्तुत कर रहा हूं: वोल्कोव ने कोई चीज़ चुराई। व्यक्तिगत रूप से उससे इस सम्वन्ध में वातचीत की गई, परन्तु वोल्कोव को नहीं, वल्कि टुकड़ी को ख़राव नम्वर दिया गया। टुकड़ी इस वात के लिए पूर्णतया ज़िम्मेदार थी कि उसके एक सदस्य ने चोरी की।

इस प्रकार की ग्रौर भी वहुत-सी वातें हैं। मान लीजिए कि एक टुकड़ी के वारह सदस्यों में से दस को सर्वोत्कृष्ट ग्रंक प्राप्त हो गये हों। इस दशा में उस टुकड़ी को प्रथम स्थान प्राप्त हो जाता। उसे कुछ विशेष सुविधाएं प्राप्त होती थीं, वोनस, ग्रथवा, शायद ग्रोपेरा थियेटर में कई शो के लिए टिकट दिये जाते थे। प्रतिदिन हमारे पास कुछ टिकट होते थे। ख़ैर, पूरी टुकड़ी जाती: ग्रच्छे नम्वर प्राप्त करनेवाले ग्रौर उनके साथ चन्द वे सदस्य भी, जिन्हें वहुत ख़राव नम्वर मिले होते। टुकड़ी ने जो कुछ उपार्जित किया था, उससे उनको भी लाभ हुग्रा।

यह ग्रनुचित प्रतीत होता, परन्तु वास्तव में यह व्यवस्था प्रभावकारी रही, क्योंकि ख़राव नम्वर पानेवाले विद्यार्थी को वहुत ग्रच्छा नम्वर पानेवाले दस या ग्यारह विद्यार्थियों के साथ थियेटर जाना ग्रच्छा नहीं लगता। उसने यह सुविधा ग्रर्जित नहीं की थी, दूसरों ने जो सुविधा प्राप्त की थी, उससे वह लाभ उठा रहा था ग्रौर इससे वह ग्रव्यक्त नैतिक दायित्व महसूस करता। ग्रगले महीने वह स्वयं वहुत ग्रच्छा नम्वर पाने की कोशिश करता।

कभी-कभी उस प्रकार का लड़का मेरे पास ग्राता ग्रौर कहता:

"मेरा तवादला दूसरी टुकड़ी में कर दीजिए। मुझे छोड़कर हमारे सभी साथियों ने वहुत ग्रच्छे नम्वर प्राप्त किये हैं। वे सभी थियेटर जा रहे हैं ग्रौर कहते हैं कि एक टिकट को फेंक देने की ग्रपेक्षा वे मुझे भी ग्रपने साथ ले लेंगे ग्रौर मैं जाना नहीं चाहता।"

टुकड़ी के ग्राधार पर व्यक्ति के इस विकास से हमें वड़ी सहायता मिली।

ग्रगर वारह में पांच सदस्य ग्रच्छे ग्रथवा स्टैण्डर्ड के ग्रनुकूल होते ग्रौर सात घोंघावसंत टुकड़ी के लिए ऐसे ग्रवरोध होते, जो उसे विल्कुल नीचे गिरा देते, तो इसके लिए पूरी टुकड़ी जवावदेह होती।

हमारे पास कुल ३५ से ४५ टुकड़ियां थीं। हर महीने प्रगति-सम्वन्धी उनके सूचकांक जोड़ दिये जाते थे ग्रौर उसी के ग्रनुरूप टुकड़ियों का

श्रेणीकरण किया जाता था। इसे दिखाने के लिए एक विशेष नक़्शा था। प्रत्येक महीने की दूसरी तारीख़ को सभा हुआ करती थी, जिसमें पिछले महीने के विजेता शिष्टाचार के साथ अपना स्थान ग्रहण करनेवाली टुकड़ी को वैजयन्ती सौंप देते। इसी उद्देश्य के लिए तैयार करवाई गई यह वैजयन्ती अलंकृत और बहुत ख़ूबसूरत थी और सर्वोत्कृष्ट टुकड़ी के शयनागार में रखी जाती थी।

टुकड़ियों में सुव्यवस्था, अनुशासन आदि की प्रतियोगिता होती थी। प्रति ६ दिन पर नतीजों की घोषणा की जाती थी। सबसे अच्छी सात टुकड़ियों को थियेटर देखने के लिए टिकट दिये जाते थे। हमारे पास प्रतिदिन ३१ टिकट होते थे। उनके वितरण का तरीक़ा यह था: सर्वोत्कृष्ट टुकड़ी को ७, उसके बादवाली टुकड़ी को ६, तीसरी को ५ और शेष निचली टुकड़ियों को इसी प्रकार एक-एक कम टिकट दिया जाता था। दूसरे शब्दों में सर्वोत्कृष्ट टुकड़ी को ६ दिन के लिए हर रोज़ ७ टिकट, इसके बादवाली टुकड़ी को ६ टिकट और इसी अनुक्रम से शेष सबसे अच्छी टुकड़ियों को टिकट दिये जाते थे। हमने कभी इसकी कोई चिन्ता नहीं की कि टुकड़ी को ऊपर उठानेवाले अथवा इसे नीचे गिरानेवाले को टिकट मिला। यह काम हमारा नहीं, बल्कि टुकड़ी का था। वे सभी थियेटर देखने जाते। प्रत्येक शाम उन्हें ले जाने के लिए एक बस आती और जिनके पास टिकट होते, वे उसमें बैठ जाते। ड्यूटी पर तैनात कमांडर इसे निश्चित रूप से देख लेता कि उनके पास टिकट हैं, वे ठीक ढंग से कपड़े पहने हुए हैं और जलपान के निमित्त कुछ चीज़ें ख़रीदने के लिए उनके पास एक-एक रूबल है। थियेटर जानेवालों को तीन आवश्यकताओं की पूर्ति करनी पड़ती थी: टिकट, भेष और रूबल और कोई भी उनसे यह नहीं पूछता था कि उनकी टुकड़ी में उनका स्थान पहला था अथवा अन्तिम।

अन्य सभी बातों में भी टुकड़ी का महत्त्व इसी प्रकार का था। सफ़ाई के काम के वितरण को ही लीजिए। वहां सफ़ाई करनेवाले नहीं थे, परन्तु इस बात को दृष्टि में रखते हुए इमारत को बहुत साफ़ और कमरों को चमाचम रखना पड़ता था कि कम्यून में सदैव अपने देश के तथा विदेशी प्रतिनिधि-मण्डल आया करते थे। उदाहरणार्थ, १६३५ में दो सौ इनटूरिस्ट प्रतिनिधि-मण्डल हमारे कम्यून को देखने आये। निस्सन्देह, कम्यून को बहुत ही साफ़-सुथरा रखने के लिए इससे प्रेरणा प्राप्त होती थी, किन्तु सफ़ाई,

फ़र्श, दरवाज़ों के पीतल के हत्थों और शीशों को लकालक करना, सदा फूलदानों में ताज़े फूलों को सजाना और इसी प्रकार की शेष अन्य बातों को करना बड़ा काम था और चूंकि इस कार्य के लिए विशेष रूप से नियुक्त व्यक्ति हमारे पास नहीं थे, इसलिए यह सभी काम स्वयं कम्यूनार्डों को करना पड़ता था। प्रतिदिन सुबह सवा छः बजे से पौने सात बजे तक सभी पांच सौ लड़के-लड़कियों को सफ़ाई करनी पड़ती थी।

इस कार्य को सुचारु रूप से कराने के लिए काफ़ी व्यवस्था करनी पड़ती थी। इसके लिए कुछ अनुभव आवश्यक था। ६ महीने पहले टुकड़ियों के बीच काम का बंटवारा करके कार्य-कुशलता प्राप्त की जाती थी। इसमें कोई रद्दोबदल की गुंजाइश नहीं होती थी। एक टुकड़ी को बाल्टी, झाड़ू और फ़र्श साफ़ करने का बुरुश, दूसरी को फ़र्श को चमकाने, तीसरी को शौचालय को साफ़ करने, चौथी को सभा-कक्ष को साफ़ तथा पालिश करने की आवश्यक चीज़ें दी जाती थीं, आदि। काम का बंटवारा करते समय टुकड़ी की स्थिति को दृष्टि में रखा जाता था। उदाहरणार्थ, सर्वोत्कृष्ट टुकड़ी को शौचालय साफ़ करने का काम दिया जाता था, जो बारह मिनट में अपना काम कर देती थी और सबसे निम्न कोटि की टुकड़ी को सभा-कक्ष साफ़ करने का काम दिया जाता था, जो ठीक ढंग से इसे करने में काफ़ी समय लगाती थी और यही समझिए कि कठोर परिश्रम से इस टुकड़ी के सभी सदस्य पसीने से तर-बतर हो जाते थे। सामान्यतया निम्नतम कोटि की टुकड़ी को सबसे आसान, परन्तु सर्वाधिक श्रमसाध्य काम दिया जाता था और, ग़ौर कीजिए, यदि काम ठीक ढंग से नहीं होता, तो केवल कमांडर को सज़ा दी जाती थी। अपनी टुकड़ी की अक्षमता के कारण उसे बन्दी बना लिया जाता था और हम यह पूछताछ करने के बखेड़े में नहीं पड़ते थे कि वस्तुतः रेडियेटर झाड़ना कौन भूल गया था।

सभी मामलों में टुकड़ी ही वह समुदाय थी, जिसके घनिष्ठतम सम्पर्क में कम्यून के प्रधान के नाते मैं रहता था। परन्तु मेरे लिए टुकड़ी की मनःस्थिति का अध्ययन करना बहुत ही कठिन काम था। इसी प्रसंग में टुकड़ी से सम्बद्ध अनुशिक्षक का व्यक्तित्त्व प्रमुख हो जाता था। परन्तु मैं इस सम्बन्ध में बाद में कुछ कहूंगा।

मैं प्रारम्भिक समुदाय के महत्त्व के बारे में काफ़ी देर तक बोल सकता हूं, परन्तु मेरे पास समय नहीं है। एक और चीज़ है, जिसके बारे में मैं

कुछ कहना चाहता हूं। हमें स्कूल में प्रारम्भिक समुदाय को विकसित करने के लिए कम अवसर सुलभ है। वहां कुछ अन्य तरीक़ों का इस्तेमाल किया जाना चाहिये। परन्तु इसके बावजूद मेरा यह दृढ़ विचार है कि एक प्रारम्भिक समुदाय को यह नहीं चाहिए कि वह स्कूल समुदाय को पृष्ठभूमि में ढकेल दे अथवा उसका स्थान ग्रहण कर ले और मेरी दूसरी प्रतिपत्ति यह है कि प्रारम्भिक समुदाय के माध्यम से ही मुख्यतः व्यक्ति के साथ सम्पर्क क़ायम रखना चाहिए, सामान्यतया यही मेरा प्रमेय है और जहां तक तफ़सील का सम्बन्ध है, कम्यून को इस पर एक दृष्टिकोण और स्कूल को उससे भिन्न दृष्टिकोण अपनाना चाहिए।

आधिकारिक रूप से हम केवल प्रारम्भिक समुदाय के माध्यम से ही व्यक्ति के सम्पर्क में आते थे। यही हमारा तरीक़ा था। परन्तु वास्तव में विद्यार्थी सबसे पहले हमारे ध्यान का केन्द्र बन जाता था।

मेरे सहयोगियों और मैंने अलग-अलग विद्यार्थियों, अलग-अलग व्यक्तियों के साथ कैसे काम की व्यवस्था की?

एक विद्यार्थी के साथ काम करने के लिए उसे अच्छी तरह जानना और सुधारना ज़रूरी होता है। अगर मैं अपनी परिकल्पना में उन व्यक्तियों को समुदाय की सीमा के बाहर बहुत-से मटर के दानों की तरह बिखरा हुआ महसूस करता, यदि मैं इस सामुदायिक कसौटी के बिना उनके सन्निकट होने की कोशिश करता, तो मैं कभी भी उन्हें संभाल नहीं पाता।

मेरे पास पांच सौ विभिन्न व्यक्ति थे। ख़ास परिस्थिति थी। पहले साल मैंने सामान्यतः वही भूल की, जो नौसिखिया से होती है। मैंने उन व्यक्तियों पर ध्यान दिया, जो समुदाय के लिए अनुपयुक्त थे। भूल से मैंने सर्वाधिक ख़तरनाक व्यक्तियों पर ही ध्यान दिया और मैं उन्हीं को ठीक करने में व्यस्त रहा। निस्सन्देह, मेरा ध्यान चोरों, बदमाशों, समुदाय के विरोधियों और, जो भाग जाना चाहते थे, उनकी ओर – दूसरे शब्दों में जिन्हें समुदाय किसी प्रकार त्याग देता, छोड़ देता, उनकी ओर लगा रहा। सचमुच मैंने विशेष रूप से उन पर निगाह रखी। इस दृढ़ विश्वास के साथ मैंने यह किया कि मैं एक बाल-शिक्षक हूं और यह कि मैं विभिन्न व्यक्तियों को संभालना जानता हूं। मैंने बारी-बारी से उन्हें बुलाया, बातें कीं, समझाया, इत्यादि।

बाद के वर्षों में मैंने अपने काम का ढंग बदल दिया। मैंने महसूस

कर लिया कि सबसे ख़तरनाक व्यक्ति वे नहीं हैं, जिनकी ओर मेरा ध्यान आकर्षित हो जाता है, बल्कि वे हैं, जो मुझसे अपने वास्तविक रूप को छिपाते हैं।

कैसे मैंने यह सोचा? उस समय तक मैं पन्द्रह समूहों को राह पर ला चुका था, उन्हें प्रशिक्षण प्रदान कर चुका था और बहुत निकट से उनके जीवन-क्रम का अध्ययन करते हुए मैंने देखा कि जिनको मैंने ख़तरनाक और बुरा समझा था, उनमें से अधिकांश अच्छा काम कर रहे थे, सोवियत जन की भांति उचित मर्यादा के भीतर नया जीवन अपना रहे थे और यद्यपि वे कभी-कभी ग़लतियां कर बैठते थे, परन्तु शिक्षा के प्रभाव से मैंने उन्हें काफ़ी संतोषप्रद पाया। कुछ लड़के, जो मुझसे छिपे रहते थे, समुदाय में तुच्छ-से पेश आते थे, जीवन के प्रति कूपमण्डूक दृष्टिकोण अपनाये रहते थे: वे बहुत जल्द शादी कर लेते थे, एक अपना "रमणीय नीड़" बना लेते थे, विभिन्न उपायों से हल्के-फुल्के काम पा जाते थे, कोम्सोमोल से इस्तीफ़ा दे देते थे, समाज से सारा सम्पर्क ख़त्म कर देते थे और यह ज़ाहिर किये बिना कि "वे क्या हैं" अथवा "अपना भेद खोले बिना" अपने को विचित्र प्राणी बना लेते थे। कुछ मामलों में मुझे धीमा, परन्तु गहरा पतन भी देखने में आया है। जिनकी आकांक्षाएं एक घर बना लेने और सुअर के बच्चों को खिलाने तक सीमित हो जाती थीं, जो सभाओं में जाना और समाचारपत्रों को पढ़ना बन्द कर देते थे, उनका एक दिन छोटी मुनाफ़ाख़ोरी में फंस जाने की काफ़ी आशंका रहती थी।

मेरा विश्वास पक्का हो गया कि जो मुझसे अपने को छिपाये रखते थे और दूर रहते थे, वे ही सर्वाधिक ख़तरनाक व्यक्ति थे और उन पर विशेष ध्यान रखना ज़रूरी था।

प्रसंगतः, स्वयं कम्यूनार्डों ने ही मुझे इस बारे में सोचने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने कुछ मामलों में बिल्कुल स्पष्ट रूप से मुझे विश्वास दिलाया कि जो दिन भर रटते रहते हैं (यदि आग भी लग जाये, तो संभवतः वे रटते अथवा अपने रेडियो को ठीक करते रहेंगे), सभाओं में कभी नहीं बोलते, कभी अपना विचार नहीं प्रकट करते, वे ही सबसे बुरे, सबसे ख़तरनाक थे, क्योंकि वे अपने को दूर रखने, चुपचाप अपने जीवन-क्रम का अनुसरण करने और अविकल तथा अप्रभावित रूप में जीवन का सुख उठाने में पूरे चालाक और होशियार थे।

जब मैंने अपने काम में कुछ प्रगति की, जब मैं चोरी और गुंडागर्दी के सदमे को दूर कर सका, तो मैंने महसूस किया कि दो अथवा तीन बदमाशों और चोरों को सही रास्ते पर लाना नहीं, बल्कि एक सुनिश्चित प्रकार के नागरिक को विकसित करना, एक जुझारू, सक्रिय, कार्यक्षम व्यक्ति को संवारना मेरे शैक्षिक काम का लक्ष्य है और जिन्हें ठीक रास्ते पर लाना आवश्यक है, उनमें से केवल किसी एक व्यक्ति को सुधारने से नहीं, बल्कि जब मैं पूरे समुदाय को सुधार दूं, तभी यह ठोस लक्ष्य प्राप्त हो सकता है।

कुछ शिक्षक स्कूल में भी यही ग़लती करते हैं। ऐसे अध्यापक हैं, जो "सामान्य" विद्यार्थियों को अपने आप अपना काम करते रहने की छूट देकर, दुःसाध्य अथवा पिछड़े हुए विद्यार्थियों पर ध्यान केन्द्रित करना अपना कर्त्तव्य समझते हैं। परन्तु प्रश्न यह है: वे क्या काम कर रहे हैं और इससे वे किस उद्देश्य को प्राप्त करेंगे?

कम्यूनार्डों ने मुझे अपने लिए विशिष्ट शब्दावली तैयार करने में भी सहायता पहुंचाई। मैंने नहीं, बल्कि कमांडर परिषद् ने पूरे कम्यून की जानकारी के लिए इसे रजिस्टर में अंकित कर समुदाय का नियमित विश्लेषण किया। मैंने स्वतः कम्यूनार्डों को दो समूहों में विभक्त किया: (१) सक्रिय कम्यूनार्डों का समूह और (२) रिज़र्व समूह।

ज़ाहिर है कि सक्रिय कम्यूनार्डों का समूह वह है, जिसके सदस्य कम्यून का नेतृत्व करते हैं। वे संवेदनशीलता, तीव्र उत्साह, विश्वास और अपेक्षाओं के साथ प्रत्येक प्रश्न का उत्तर देते हैं। वे सहज अर्थ में कम्यून का नेतृत्व करते हैं। परन्तु किसी आपत्काल, ख़तरे के पैदा होने की स्थिति में अथवा एक बड़े आन्दोलन को शुरू करते समय, उन्हें सदा अपने रिज़र्व समूह से सहायता पाने की आशा रहती है, जिन्हें अभी सक्रिय नहीं, कमांडर नहीं कहा जाता, किन्तु जो शीघ्र ही सहायता प्रदान करते हैं। यही रिज़र्व समूह है, जो अन्ततः सक्रिय समूह का स्थान ग्रहण करता है।

उसके बाद ऐसे लड़के-लड़कियों का समूह था, जिसे मैंने अच्छे काम में सहायक हो सकनेवाले निष्क्रिय समूह के रूप में अंकित किया था। उनके विकास के लिए समय अपेक्षित था, परन्तु फ़िलहाल वे हॉबी मण्डलियों में जाते थे, खेलकूद में भाग लेते थे, भित्ति समाचारपत्र में लिखते थे और अपने वरिष्ठ साथियों का अनुसरण करते थे।

कुछ ऐसे व्यक्ति थे, जिन्हें मैं ह्रासशील कामकाजी व्यक्ति कहता था। वे हमारे टुकड़ी के कमांडर, कमीशनों और कोम्सोमोल ब्यूरो के सदस्य थे, परन्तु उनकी आंखों की अभिव्यक्ति और चाल-ढाल से—हमें इस बारे में तथ्यों की कोई आवश्यकता नहीं थी—मुझे और कम्यून के शेष सभी सदस्यों को यह स्पष्ट रूप से ज्ञात हो गया था कि वे धूर्तता और चालाकी का खेल खेल रहे हैं। यहां खुद गुप्त रूप से कोई बुरा काम करते हुए, वहां किसी को बदनाम करते हुए, उलटी पट्टी पढ़ाते हुए, किसी छोटे लड़के से अपनी मशीन का पुर्जा साफ़ कराते हुए वह चालाकी का खेल खेल रहे थे और यह व्यापार चलता रहा; जब उन्होंने अपनी विशेष स्थिति का दुरुपयोग करना, काम से जी चुराना और धृष्ट लेहजे का इस्तेमाल करना शुरू किया, तो पतन आरम्भ हो गया। कभी-कभी इस ह्रास ने बहुत ही अनिष्टकारी स्वरूप ग्रहण कर लिया। उनके मुंह से शराब की गन्ध आती थी और शराबखोरों के साथ हम बहुत सख़्ती बरतते थे। कम्यून का यह नियम था: पहली बार नशे में होने पर ही निष्कासन।

मैं लड़के से जवाब-तलब करता।

वह कहता: "मैंने शहर में एक गिलास बीयर पी ली थी।"

"एक गिलास बीयर पीना अपराध नहीं है, मगर मुझे सन्देह है कि वह बीयर नहीं थी।"

पतनशील कामकाजियों के बारे में इतना ही पर्याप्त है। हमने आधिकारिक रूप से इस श्रेणी के व्यक्तियों की सूची नहीं बनाई, परन्तु कोम्सोमोल के सेक्रेटरी और कोम्सोमोल ब्यूरो के दो या तीन सदस्य जानते थे कि कुछ अंश में पतन शुरू हो गया था।

और अन्त में एक ऐसा समूह था, जिसे कुछ कम्यूनार्ड "निकृष्ट व्यक्तियों की टोली" कहते थे। उन पर कड़ी निगाह रखनी पड़ती थी और सावधान रहना पड़ता था कि जेब न काट लें। वे कुछ भी कर सकते थे: वे घुसकर तिजोरी से धन लूट सकते थे अथवा फ़ैक्टरी में अनुचित ढंग से जाकर फालतू पुर्जों को चुरा सकते थे। साधारणतया वे बड़ी उम्र के नवागन्तुक होते थे। हमारे कम्यून में ऐसे पन्द्रह या बीस लड़के थे। यदि वे कोई भी ग़लत काम नहीं करते, तो भी सभी जानते थे कि वे "निकृष्ट टोली" के हैं और अगर उन पर निगाह नहीं रखी गई, तो निश्चय ही वे कोई बुरा काम कर बैठेंगे।

ग्रौर ग्रब हम "दलदल" शब्द के बारे में कुछ कहेंगे, जिसे हमने फ़ांसीसी क्रान्ति से ग्रपनाया था। पचास ग्रथवा इससे कुछ कम या ग्रधिक व्यक्तियों के समूह के साथ यह शब्द प्रयुक्त होता था, जो किसी प्रकार लड़खड़ाते हुए काम करता रहता था, बिना मन के ग्रपना निर्धारित काम पूरा करता था ग्रौर यह मालूम नहीं हो पाता था कि उनका मक़सद क्या था, उनका दिल ग्रौर दिमाग़ किस ग्रोर लगा रहता था।

इस समूह को प्रगति करते हुए देखना सर्वाधिक ग्रानन्ददायक ग्रौर सुखकर बात थी। मान लीजिए, पेत्रोव ग्रथवा कोई ग्रन्य इस "दलदल" में था : हम उससे यही कहते कि वह "दलदल" में फंसा हुग्रा है, कि वह कुछ नहीं कर रहा है, किसी चीज़ में उसकी दिलचस्पी नहीं है, कि वह निस्तेज, स्फूर्तिहीन ग्रौर सभी बातों के प्रति उदासीन है। ग्रौर तब टुकड़ी उसे जगाने की कोशिश करती। शीघ्र ही उसे ग्राप पहलक़दमी प्रकट करते हुए, किसी चीज़ में दिलचस्पी लेते हुए ग्रौर पुनः पहलक़दमी प्रदर्शित करते हुए देखते ग्रौर वह रिज़र्व ग्रथवा ग्रच्छे काम में सहायक निष्क्रिय समूह में तरक़्क़ी पहुंच जाता।

हमारा सम्पूर्ण कार्यभार "दलदल" ग्रौर "निकृष्ट" वर्गों को समाप्त करना था।

हमने "निकृष्ट टोली" के विरुद्ध सीधा प्रहार शुरू किया। इसमें कोई रहस्यात्मकता नहीं थी। यह उनके विरुद्ध खुला हमला था। हर छोटे-मोटे ग्रपराध के लिए "निकृष्ट टोली" के सदस्य को डांटा-डपटा जाता था ग्रौर उसे ग्राम सभा के सामने पेश किया जाता था। इस काम को करने के लिए हमें दृढ़ता ग्रौर सख़्ती का व्यवहार करना पड़ता था।

ग्रधिक दुःसाध्य वर्गों ग्रर्थात् "दलदल टोली" ग्रौर ह्रासशील कामकाजियों के सम्बन्ध में व्यक्तिगत उपागम ग्रौर विविध प्रकार के ग्रन्य उपाय ग्रपेक्षित थे।

ग्रब हम व्यक्तिगत उपागम की चर्चा करेंगे। इस प्रसंग में ग्रनुशिक्षकों ग्रौर शिक्षकों का समुदाय सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका ग्रदा करता है। पूर्णतया ठीक-ठीक शब्दों में इस कार्यभार की व्याख्या प्रस्तुत करना बहुत कठिन है। हमारे शिक्षाशास्त्र की शायद यह सबसे बड़ी समस्या है। हमारे शिक्षाशास्त्रीय साहित्य में ग्रधिकांश मामलों में "ग्रनुशिक्षक" शब्द का प्रयोग एकवचन में हुग्रा है : "ग्रनुशिक्षक को इस प्रकार ग्रौर उस प्रकार का होना

चाहिए", "अनुशिक्षक को यह अथवा वह करना चाहिए" अथवा "अनुशिक्षक को इस ढंग से बोलना चाहिए"।

मैं इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता कि शिक्षाशास्त्र केवल एक अनुशिक्षक पर ही कैसे भरोसा कर सकता है। निस्सन्देह, विद्यार्थियों को संभालने में सक्षम और सूक्ष्म दृष्टि, धैर्य, विवेक, अनुभव से युक्त ऐसे योग्य अनुशिक्षक के बिना, दूसरे शब्दों में एक अच्छे अनुशिक्षक के बिना काम करना बहुत कठिन होगा, परन्तु जब हमें तीन करोड़ और पचास लाख बच्चों तथा किशोरों को शिक्षा प्रदान करनी है, तो क्या हमें भाग्य के भरोसे सब कुछ बाज़ी पर लगा देना उचित होगा कि ऐसे अनुशिक्षक सुलभ होंगे ?

भाग्य के भरोसे सब कुछ छोड़ देने का अभिप्राय इसे स्वीकार कर लेना होगा कि एक अच्छा अनुशिक्षक अच्छी शिक्षा और एक गया-बीता अनुशिक्षक मामूली शिक्षा प्रदान करेगा। क्या किसी ने योग्य और अयोग्य अनुशिक्षकों की संख्या गिनने की कोशिश की है? निस्सन्देह, अनुशिक्षक को स्वयं पर्याप्त शिक्षित होना चाहिए। उसे किस प्रकार की शिक्षा प्राप्त होनी चाहिए, किस प्रकार का व्यक्ति होना चाहिए, उसके लक्ष्य और अभिरुचियां क्या होनी चाहिए? किसी ने ऐसे अनुशिक्षकों की कभी गणना नहीं की है, जो इन अपेक्षाओं की पूर्ति नहीं करते।

और इसके बावजूद हम केवल एकमात्र अनुशिक्षक के भरोसे सब कुछ छोड़ देते हैं।

चूंकि अपने जीवन-क्रम में मुझे अनिवार्यत: शिक्षण के उद्देश्यों और समस्याओं से सम्बन्ध रहा है, इसलिए मैं जानता हूं कि अपर्याप्त रूप से पढ़े हुए अनुशिक्षक के साथ काम करने का दुष्परिणाम क्या होता है और किस प्रकार इससे काम को नुक़सान पहुंचता है। मेरे लिए वह समय और प्रयास को बर्बाद करने के समान था, क्योंकि इस प्रकार के व्यक्ति से हमारे जैसे कम्यून में किसी भी प्रकार की उपयोगी शिक्षा प्रदान करने की आशा करना बड़ी मूर्खता थी। बाद में मैं इस नतीजे पर पहुंचा कि जिसे स्वयं ख़राब शिक्षा मिली हो, ऐसे अनुशिक्षक की अपेक्षा बिल्कुल किसी अनुशिक्षक का न होना बेहतर है। मैंने सोचा कि चालीस अयोग्य और अधूरी शिक्षा प्राप्त अनुशिक्षकों की अपेक्षा चार योग्य अनुशिक्षकों को रखना बेहतर है। मैंने स्वयं अपनी आंखों से देखा है कि वे कैसा काम

करते हैं। उनके काम से किस प्रकार के नतीजों की आशा की जा सकती है? समुदाय के विघटन के अलावा और किसी बात की आशा नहीं की जा सकती।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि अनुशिक्षक का चयन बुनियादी महत्त्व की बात है। यह चयन किस प्रकार करना चाहिए? कतिपय कारणों से इस प्रश्न पर कम ध्यान दिया जाता है। हमारे बीच यह मत प्रचलित है कि कोई भी व्यक्ति यदि उसे अनुशिक्षक के पद पर नियुक्त कर दिया जाये और अनुशिक्षक की तनख़्वाह दी जाये, तो अनुशिक्षक हो सकता है। किन्तु इस धारणा के बावजूद यह सर्वाधिक कठिन काम है, जिसके लिए एक व्यक्ति से न केवल अधिकतम प्रयास, बल्कि चरित्र की दृढ़ता और असाधारण योग्यता अपेक्षित है।

वास्तव में जिस ढांचे को खड़ा करने में मैंने वर्षों लगाये थे, उसे जितना एक अयोग्य अनुशिक्षक ने ख़राब किया, उतना किसी अन्य ने नहीं। और इस कारण बाद के वर्षों में मैंने उनके बिना काम करने अथवा उन्हीं अनुशिक्षकों का उपयोग करने की, जो सचमुच योग्य थे, अपनी दृढ़ नीति बना ली। निस्सन्देह, इससे मेरा काम बढ़ गया।

इसके बाद मैंने अनुशिक्षकों को रखने का विचार बिल्कुल त्याग दिया। सामान्यतया मैं स्कूल के शिक्षकों की सहायता ले लेता था, परन्तु सर्वप्रथम मुझे उन्हें प्रशिक्षित करना पड़ता था। मेरा ख़्याल है कि एक व्यक्ति को किशोरों को पढ़ाने का काम सिखाना उतना ही आसान है, जितना उदाहरण के रूप में उसे गणित की शिक्षा देना अथवा पढ़ना या लेथ को चलाना, और फलतः मैंने उन्हें शिक्षा दी।

आख़िर यह सब कुछ मैंने कैसे किया? सर्वप्रथम एक अनुशिक्षक के चरित्र-निर्माण, व्यवहार, विशेष ज्ञान और उसके प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी पड़ती है। ऐसा न होने पर वह अच्छा अनुशिक्षक नहीं हो सकता और उपयोगी काम नहीं कर सकता। अपनी वाणी का इस्तेमाल कैसे किया जाय, किशोरों से कैसे बातचीत की जाय और उनसे क्या और कब कहा जाय, इन्हें उसे जानना चाहिए। प्रशिक्षण अनिवार्य है। जो अनुशिक्षक, अपने चेहरे की अभिव्यक्ति अथवा अपने मनोभाव को नियंत्रित नहीं कर सकता, वह किसी काम का नहीं होता। कैसे चला जाये, कैसे मज़ाक़ किया जाये, कैसे प्रसन्न अथवा नाराज़ प्रतीत हुआ जाये, इसे उसे जानना

चाहिए और उसे लड़कों को संभालने में सक्षम होना चाहिए। उसे ऐसा व्यवहार करना चाहिए कि उसकी प्रत्येक क्रिया शिक्षाप्रद हो और वह क्या करे अथवा न करे, इसे ठीक-ठीक उसे सदा जानना चाहिए। यदि वह इसे नहीं जानता, तो वह दूसरों को शिक्षा कैसे दे सकता है?

मुझे विश्वास है कि शिक्षकों के ट्रेनिंग कालेज भविष्य में वाणी-प्रशिक्षण, मनःस्थिति और चेहरे की अभिव्यक्ति-नियंत्रण जैसे अनिवार्य विषयों की शिक्षा देने का काम शुरू करेंगे, ऐसा न होने पर मैं सोच भी नहीं सकता कि एक अनुशिक्षक कैसे अपना कार्यभार संभालेगा। अनुशिक्षकों को केवल चित्ताकर्षक ढंग से गाने अथवा बोलने के लिए नहीं, बल्कि सर्वाधिक सुस्पष्टता, प्रभाव और अनुपेक्षणीयता के साथ अपने विचारों एवं मनोभावों को अभिव्यक्त करने के लिए अपनी वाणी को साधना आवश्यक है। यह सभी शिक्षा-विधि की बातें हैं।

उदाहरणार्थ, किस आवाज़ में डांट-फटकार बताई जाये, किस हद तक आपको अपना गुस्सा अथवा आक्रोश प्रकट करना चाहिए, आपको इसे ज़ाहिर करने का क्या अधिकार है, और यदि आप क्रोध प्रकट करते हैं, तो किस प्रकार, इसे आपको जानना चाहिए। वस्तुतः यह सब कुछ शिक्षा है। एक विद्यार्थी आपके मनोभावों और विचारों को इस कारण नहीं समझता कि वह जानता है कि आपके हृदय की भावनाएं क्या हैं, बल्कि इस कारण समझता है कि वह एकाग्रचित्त होकर आपकी ओर देखता और आपकी बातें सुनता है। एक नाटक को देखते समय हम रंगमंच पर उतरनेवाले अभिनेताओं की सराहना करते हैं और उनके मनोहारी अभिनय से हमें सुरुचिपूर्ण आनन्द प्राप्त होता है। ख़ैर, यहां विद्यार्थी भी ध्यान से देखता है, परन्तु वह जिन अभिनेताओं को देखता है, वे शिक्षक हैं और उनका प्रभाव शिक्षाप्रद होना चाहिए।

मैं इस विषय पर और अधिक विस्तार से कुछ नहीं कहना चाहता। एक अनुशिक्षक के लिए सत्यनिष्ठा और जागरूकता के साथ अपने काम में जुट जाना महत्त्वपूर्ण बात है।

दूसरे, किसी भी अनुशिक्षक को सब कुछ एकाकी, अपनी ही ज़िम्मेदारी और अपने ही दायित्व पर करने का अधिकार नहीं है। अनुशिक्षकों का समुदाय बनना ही चाहिए, उन्हें एक ही योजना के अन्तर्गत काम करते तथा विद्यार्थियों के प्रति एक समान लहजा और दृष्टिकोण अपनाते

हुए एकजुट होना है। ऐसा न होने पर वास्तव में कोई शैक्षिक प्रक्रिया हो ही नहीं सकती। इसलिए अपने-अपने मनोनुकूल, जैसा जो उचित समझता है, उसके अनुसार काम करनेवाले दस अच्छे अनुशिक्षकों की अपेक्षा एक ही विचार, सिद्धान्त और कार्य-विधि से अनुप्राणित एवं संयुक्त पांच मामूली अनुशिक्षकों का होना बेहतर है।

इस प्रसंग में कई विभिन्न निरूपण हो सकते हैं। मैं समझता हूं कि आप यह जानते हैं कि एक प्रिय शिक्षक कौन होता है। अब मान लीजिए कि मैं स्कूल का एक शिक्षक हूं और सोचने लगूं कि मैं हरेक विद्यार्थी के लिए प्रिय हूं। स्वयं कोई ध्यान दिए बिना मैं किसी नीति का अनुसरण करना शुरू कर दूं। मुझे पसन्द किया जाता है और इस कारण मैं चाहता हूं कि विद्यार्थियों का प्रेम मुझे प्राप्त रहे। मैं उनसे ख़ूब सम्मान प्राप्त करने की कोशिश करता हूं। मैं एक प्रिय शिक्षक बन जाता हूं और शेष शिक्षक किसी के सम्मान के पात्र नहीं बनते।

यह किस प्रकार की शैक्षिक प्रक्रिया है? शिक्षक ने अपने को समुदाय से अलग कर लिया है। उसे ख़ुद इस पर गर्व हो जाता है कि उसे इतना अधिक पसंद किया जाता है कि अपने मनोनुकूल किसी भी ढंग से वह काम कर सकता है।

मैं अपने सहायकों का सम्मान करता था—उनमें कुछ अपने काम में सर्वथा निपुण थे—परन्तु मैं उन्हें यह यक़ीन दिलाने की कोशिश करता था कि प्रिय अध्यापक होना उनकी महत्त्वाकांक्षा नहीं होनी चाहिए। व्यक्तिगत रूप से मैंने कभी भी बच्चों का प्रेम प्राप्त करने की कोशिश नहीं की और मेरे विचार से शिक्षक द्वारा अपनी ख़ुशी के लिए उत्प्रेरित यह प्रेम एक अपराध है। हो सकता है कि कुछ कम्यूनार्ड मुझे विशेष रूप से सम्मान प्रदान करते रहे हों, परन्तु चूंकि मेरा मुख्य कार्यभार मेरे चार्ज में रखे गए पांच सौ लड़के-लड़कियों को नागरिक और सहज व्यक्ति बनाना था, इसलिए मैंने इसे उचित नहीं समझा कि स्वयं अपने लिए उनमें भावुक प्रेम की भावना प्रोत्साहित करके इस काम को अधिक जटिल बना दूं।

इस चोंचले, सर्वप्रियता के लिए इस प्रयास, अपने प्रति प्रेम पर इस घमण्ड से शिक्षकों और शिक्षा के काम दोनों का नुक़सान होता है। मैंने स्वयं अपने और अपने साथियों को समझा रखा है कि हमारे जीवन में इस प्रकार की किसी चीज़ की कोई गुंजाइश नहीं होनी चाहिये।

अपनी ओर से कोई प्रयास किये बिना उनमें क्रमशः अपने लिए सम्मान की भावना विकसित होने दीजिए! परन्तु यदि एक शिक्षक इस सम्मान को ही अन्तिम ध्येय मान बैठता है, तो इससे केवल अहित होगा। अगर वह इस प्रेम को प्राप्त करने का प्रयास नहीं करता, तो वह यथार्थ ढंग से विद्यार्थियों से काम लेनेवाला तथा अपने छात्र-छात्राओं के और स्वयं अपने प्रति ईमानदार हो सकता है।

अपने सामान्य विचारों और विश्वासों के आधार पर एकता के सूत्र में आबद्ध, पारस्परिक रूप से सहायक, ईर्ष्या से मुक्त, और निजी रूप से विद्यार्थियों का प्रिय बनने की लालसा से मुक्त शिक्षकों के समुदाय द्वारा ही सही शिक्षा दी जा सकती है। इसी कारण अपने समाचारपत्रों में प्रकाशित इस संवाद को मैं हृदय से स्वागत करता हूं कि सार्वजनिक शिक्षा की जन-कमिसारियत हेड-मास्टरों तथा शिक्षा निदेशकों के अधिकारों को बढ़ाने के प्रश्न पर विचार कर रही है, जो शिक्षक वर्ग के काम में सामंजस्य स्थापित करेंगे।

कुछ समय पहले 'सोवेत्स्की पिसातेल' (सोवियत लेखक) प्रकाशन गृह ने मेरे पास एक पाण्डुलिपि देखने के लिए भेजी। इसका लेखक मास्को का एक शिक्षक है। लेखक ने पुस्तक को लिखने में "मैं" का प्रयोग किया है, इसमें एक स्कूल की अध्यापिका, स्टाफ़ और विद्यार्थियों का वृत्तान्त प्रस्तुत किया गया है और एक शैक्षिक वर्ष की अवधि में हुई बातों का उल्लेख है।

प्रकाशन गृह में इस पुस्तक के बारे में तीव्र मतभेद था। कुछ ने इसे घटिया पुस्तक बताया, जबकि कुछ दूसरों का ख़्याल था कि यह असामान्य पुस्तक है: मुझे निर्णायक का काम सौंपा गया।

यदि मैं इस कहानी के प्रकाशन की सिफ़ारिश करता, तो मैं केवल एक निर्दिष्ट उद्देश्य के लिए ही ऐसा करता। इसमें स्कूल की अध्यापिका का इतना अरुचिकर व्यक्तित्व चित्रित है कि वस्तुतः इसके पढ़ने से लोगों को बड़ा लाभ होता और वे यह अनुभव कर लेते कि स्कूल की अध्यापिका किस प्रकार की नहीं होनी चाहिए। परन्तु लेखक के मन में उसके लिए बड़ी प्रशंसा की भावना है।

इस प्रपंची अध्यापिका का एकमात्र यत्न विद्यार्थियों का "सम्मान" प्राप्त करना है। सभी बच्चों के मां-बाप भयानक हैं, उसके मन में उनके

लिए केवल नफ़रत है, वह सभी बच्चों के मां-बाप ग्रौर परिवारों को "बुद्धिहीन, नीरस" कहती है ग्रौर स्वयं ग्रपने को बहुत ही योग्य ग्रौर श्रेष्ठ बाल-ग्रध्यापिका समझती है। उसके साथ काम करनेवाली ग्रन्य ग्रध्यापिकाएं ग्रौर शिक्षक उसकी दृष्टि में निकम्मे हैं: एक इतनी ग्रहंमन्यता के कारण स्पष्टतः किसी बात को नहीं समझ पाता, दूसरा किसी चीज़ में कोई दिलचस्पी नहीं लेता, तीसरा चालबाजी करनेवाला है ग्रौर चौथा बिल्कुल काहिल है; हेड-मास्टर ग्रालसी ग्रौर विवेकशून्य है। केवल वही पारंगत ग्रौर सभी त्रुटियों से रहित है।

इससे भी ख़राब बात यह है कि यह सब कुछ बहुत ही लचर लहजे में लिखा गया है। पुस्तक में गहरी उसासें भरी गई हैं, सम्मान प्राप्त करने की लालसा प्रकट की गई है, प्रेम प्राप्त करने की उत्सुकता प्रकट की गई है ग्रौर विद्यार्थियों का वर्णन बहुत ही ग्रप्रिय ढंग से किया गया है। ग्रौर इसके ग्रलावा एक दूसरी खलनेवाली बात यह है कि यौनभाव-सम्बन्धी प्रश्नों पर विशेष रूप से ग्रनुपयुक्त ध्यान दिया गया है।

मेरी समझ से कथानक का सारांश इस प्रकार है: एक लड़के ने एक विशेष भाव से एक लड़की की ग्रोर देखा, लड़की ने उसे एक छोटा पत्र लिखा ग्रौर उस ग्रसाधारण बाल-ग्रध्यापिका ने प्रेम के जाल में फंसने के इन प्रयासों को बहुत बुद्धिमानी से ध्वस्त कर दिया ग्रौर सब की कृतज्ञता प्राप्त की।

इस प्रकार के प्रपंची शिक्षक, जो ग्रन्य शिक्षकों से संबंध रखे बिना ग्रपने विद्यार्थियों ग्रौर समाज के साथ नख़रे करते हैं, किसी को शिक्षित नहीं बना सकते। स्कूल के शिक्षकों को ज़िम्मेदार एवं गंभीर ग्रध्यापक बनाने का एकमात्र तरीक़ा उन्हें एक समुदाय में ग्राबद्ध करना, प्रमुख व्यक्ति–हेड-मास्टर के इर्द-गिर्द एकजुट करना है। यह भी एक गंभीर समस्या है, जिस पर हमारे बाल-शिक्षकों को ग्रधिक ध्यान देना चाहिए।

ग्रगर एक शिक्षक से इतनी ग्रधिक ग्रपेक्षाएं रखनी हैं, तो जो व्यक्ति उन्हें एक समुदाय में एकजुट करता है, उससे इसकी ग्रपेक्षा ग्रौर भी ग्रधिक ग्रपेक्षाएं रखनी चाहिए।

शिक्षकों का समुदाय कितने समय तक एकसाथ कार्य करता है, यह भी एक महत्त्वपूर्ण शर्त है, ग्रौर मेरा ख़्याल है कि हमारे बाल-शिक्षक इस प्रश्न पर पर्याप्त गंभीरता के साथ ध्यान नहीं देते। यदि ग्रौसतन पांच साल

तक कम्यूनार्ड हमारे साथ रहते हैं, तो शिक्षक को भी कम से कम पांच साल तक कम्यून में काम करना चाहिए। इसे नियम बना देना चाहिए, क्योंकि घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध एक यथार्थ समुदाय में, जिसकी जीवन-पद्धति नियत है और जो समुचित जीवन-क्रम का अनुसरण करता है, नवागन्तुक चाहे विद्यार्थी हो या शिक्षक सदा नवागन्तुक ही रहता है। और यह सोचना गलत है कि शिक्षक, जो हाल ही में स्टाफ़ में शामिल हुआ है, विद्यार्थियों को कुछ भी प्रदान कर सकेगा। शिक्षक की सफलता इस पर निर्भर होती है कि वह कितने समय से काम कर रहा है और समुदाय को नये रूप में ढालने की दिशा में उसने कितना परिश्रम और प्रयास किया है: यदि शिक्षकों का समुदाय विद्यार्थियों के समुदाय की अपेक्षा नया है, तो यथार्थतः यह प्रभावहीन होगा। इसका अभिप्राय यह कदापि नहीं है कि शिक्षकों के समुदाय में केवल वृद्ध जनों को लेना चाहिए। बाल-शिक्षकों को पुराने और नये शिक्षकों के प्रभाव की विशेषताओं का अध्ययन करके इस प्रसंग में संतुलित दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। शिक्षक वर्ग को एकजुट करना कोई संयोग की अथवा आकस्मिक बात नहीं हो सकती, इस कार्य को विवेक के साथ करना पड़ता है। एक निश्चित संख्या में पुराने, अनुभवी शिक्षकों का होना ज़रूरी है और इस समुदाय में एक ऐसी नवयुवती को शामिल करना सर्वथा अनिवार्य है, जो अपनी शिक्षा पूरी करके कालेज से हाल ही में निकली और जिसने अभी तक कभी भी कोई स्वतंत्र क़दम नहीं उठाया है। यह शिक्षाशास्त्र का एक रहस्य है: जब कालेज की शिक्षा सद्यः पूरी करके एक नवयुवती शिक्षकों तथा विद्यार्थियों के पुराने समुदाय में आती है, तो निश्चित रूप से एक सूक्ष्म प्रक्रिया शुरू होती है, जो शिक्षा को सफल बनाती है। नवयुवती पुराने शिक्षकों और पुराने विद्यार्थियों से बहुत कुछ सीखेगी और इससे उसके काम के प्रति उनमें दायित्व की भावना पैदा होगी।

स्टाफ़ में कितने पुरुष और कितनी महिलाएं हों, इस प्रश्न पर बहुत ही गंभीरता से विचार करने की आवश्यकता है। पुरुषों की अधिकता से अवांछनीय वातावरण पैदा होता है। और महिलाओं की संख्या अधिक हो जाने से भी एक प्रकार से एकांगी विकास होता है।

मेरा यह ख़्याल है कि शिक्षक की आकृति भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। निस्सन्देह यदि सभी शिक्षक देखने में सुन्दर हों, तो यह सबसे अच्छी बात

होगी, परन्तु हर सूरत में स्टाफ़ में कम से कम एक सुरूपवान युवक और एक ख़ूबसूरत नवयुवती तो होनी ही चाहिए।

मैंने अपने स्टाफ़ के सदस्यों के चयन में इसी आदर्श को अपनाया। फ़र्ज़ कीजिए मेरे समुदाय में बाईस शिक्षक थे और एक स्थान ख़ाली था। यदि ये सभी बाईस शिक्षक मेरे समान साधारण आकृति के होते, तो मैं उक्त ख़ाली स्थान को भरने के लिए एक सुन्दर व्यक्ति को चुनता। सुरुचिपूर्ण दृष्टिकोण से भी विद्यार्थियों को अपने शिक्षकों की सराहना करनी चाहिए। उन्हें उनके व्यक्तित्व पर भी कुछ मुग्ध होने दीजिए। यह लैंगिक नहीं, बल्कि सुरुचिपूर्ण, सुखद दृष्टिगत मोहकता होगी।

कितने शिक्षक खुशदिल और कितने उदास होने चाहिए, इस प्रश्न का निर्णय करना भी आवश्यक है। मैं केवल रूखे व्यक्तियों से गठित समुदाय की बात सोच भी नहीं सकता। कम से कम एक ख़ुशमिज़ाज, कम से कम एक हंसमुख शिक्षक तो होना ही चाहिए। शिक्षक वर्ग के गठन को नियंत्रित करनेवाले नियमों के सम्बन्ध में भावी शिक्षाशास्त्र में एक पुस्तक का होना ज़रूरी है।

मेरे स्टाफ़ में तेर्स्की* नाम का एक शिक्षक था। यह सोचकर मैं डर जाता था कि कहीं कोई उसे प्रलोभित करके मुझसे अलग न कर दे। वह आश्चर्यजनक रूप से एक ख़ुशमिज़ाज व्यक्ति था। उसने हम सभी को— विद्यार्थी समुदाय को और स्वयं मुझे—अपनी उल्लासपूर्ण ख़ुशमिज़ाजी से अनुप्राणित कर रखा था। उसमें संगठन-शक्ति का अभाव था, परन्तु मुझे उसे एक सच्चा, एक श्रेष्ठ शिक्षक बनाने में सफलता मिली। वह कभी-कभी विलक्षण चीज़ें कर बैठता था। एक बार जब हम लोग ऑपेरा सुनने जा रहे थे, तो उसे अपने एक साल के बच्चे को गोद में लिये हुए देखकर मैं आश्चर्य में पड़ गया। मैंने उससे पूछा: "तुम नन्हे बच्चे को अपने साथ क्यों ले

---

*वीक्तोर तेर्स्की—रूसी सोवियत संघात्मक समाजवादी जनतंत्र के एक प्रतिष्ठित शिक्षक, जिन्होंने अ० से० माकारेन्को के साथ गोर्की बस्ती और द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून दोनों स्थानों में काम किया था। वह 'अ० से० माकारेन्को की शिक्षा-पद्धति में शुगल और खेलकूद' और 'बुद्धि-चातुर्य के अनुरूप स्कूली खेलकूद' नामक पुस्तकों के लेखक हैं। ये पुस्तकें सोवियत शिक्षकों को बहुत पसंद हैं। माकारेन्को ने अपने उपन्यासों में उनका नाम पेर्स्की रखा है।

चल रहे हो?" उसने उत्तर दिया: "यह एक साल का है, उसे अच्छे संगीत का अभी से अभ्यस्त होना चाहिए।" और मैंने इस पर कहा: "जब तुम्हारे साथ कम्यूनार्ड न हों, तो तुम उसे ले जाया करो।"

विकसित होकर वह एक सराहनीय शिक्षक बन गया। वह चाहे जो कुछ भी करे, सदैव खुश रहता था, और वह खेलकूद, चित्र द्वारा विचारोत्तेजक शब्द-प्रकाश, पहेली और अन्य बातों की नई-नई युक्तियां सोचने में दक्ष था। शब्द-प्रकाश को ही लीजिए, पहेली-सम्बन्धी चित्र भित्ति पत्र के आधे भाग में आ जाता था। उस व्यक्ति की प्रतिभा से मुझे आश्चर्य होता था: कोई भी इतनी पहेलियां कैसे सोच सकता है? चित्रों और खाकों सहित, छोटे तथा काफ़ी बड़े और परिहासमय तथा युक्तिपूर्ण सभी प्रकार के प्रश्न होते थे। वह स्वयं सभी पहेलियों, मनोविनोद की सामग्रियों को नहीं सोचता था, १५० अथवा लगभग इतने ही व्यक्ति पहेलियों को सोचा करते थे, एक समुचित सम्पादकीय मण्डल था, जो पत्रिकाओं से विनोदपूर्ण सामग्री जमा करता था अथवा स्वयं हास्य एवं विनोद-सम्बन्धी सामग्री लिखा करता था। पहेली को हल करने के प्रसंग में भी एक व्यवस्था थी। उदाहरणार्थ, कोई पहेली इस ढंग की होती थी, जिसे ठीक-ठीक हल करनेवाले को एक हज़ार प्वाइंट प्राप्त होते थे। यदि एक ही व्यक्ति इसे हल करता, तो उसे एक हज़ार प्वाइंट मिलता था और इस पहेली को तैयार करनेवाले को भी इतने ही प्वाइंट प्राप्त होते थे। स्पष्टतः पहेली के आसान होने के कारण अगर सौ व्यक्ति उसे हल करते थे, तो उनमें से प्रत्येक को दस-दस प्वाइंट प्राप्त होते थे।

अपने उत्साह से उपक्रम की भावना पैदा कर तेर्स्की सभी कम्यूनार्डों को इन खेलों में आकृष्ट कर लेता था।

उदाहरणार्थ, एक बार यह पहेली हल करने के लिए दी गई: रविवार को कम्यून से उत्तर-पूर्वी दिशा में ४ किलोमीटर की दूरी पर मुझे ढूंढ़ निकालने की कोशिश करो। मेरी दायीं जेब में एक विचित्र चीज होगी। ढूंढ़ निकालनेवाला एक हज़ार प्वाइंट प्राप्त करेगा।

फलतः रविवार को अपने कम्पास और दोपहर का खाना अपने साथ लिए हुए कम्यूनार्ड एक साथ तेर्स्की का पता लगाने के लिए रवाना हो गए। मुझे खाना रोक देना पड़ा, क्योंकि वे उस समय तक कम्यून की उत्तर-पूर्वी दिशा में तेर्स्की की तलाश कर रहे थे।

उसने जो-जो दिलचस्प काम किए, उन सबको गिनाना सर्वथा असंभव है। दूसरी दफ़ा उसने उन्हें चुनौती दी : अमुक तिथि को अमुक समय पर तुम लोगों को अपने उत्पादन-मैनेजर सोलोमोन बोरीसोविच कोगन के जूते का फ़ीता खोलना होगा। जो व्यक्ति इसे करने में सफल होगा, उसे इतने प्वाइंट मिलेंगे।

सोलोमोन बोरीसोविच एक सम्पन्न, सम्मानित व्यक्ति था, वह मोटा होता जा रहा था। उसने नोटिस को पढ़ लिया था और वह गुस्से में था। तीन बजे कम्यूनार्डों ने उसे घेर लिया। उसने उनसे पूछा, "क्या बात है, क्या तुम लोग मुझ पर प्रहार करने जा रहे हो? नहीं, यह कोई तरीक़ा नहीं है।"

उसका कहना ठीक था, यह कोई तरीक़ा नहीं था। वास्तव में युक्ति का प्रयोग करना था। और एक लड़के ने होशियारी से उसके जूते का फ़ीता खोल देने में सफलता प्राप्त कर ली।

तेर्स्की में स्फूर्ति कूट-कूट कर भरी हुई थी, और किशोरों को सदैव व्यस्त रखने का उसका अपना ही तरीक़ा था।

एक दिन उसने सम्पूर्ण समुदाय को सूचित किया :

"वास्तव में शाश्वत गति को उपलब्ध करना संभव है। मुझे यक़ीन है कि हम एक ऐसा यंत्र बना सकते हैं, जो सतत गतिशील रहेगा।"

उसने इतने विश्वास के साथ अपनी बात कही और अपनी भूमिका इतनी अच्छी तरह निभाई कि इंजीनियर और प्रशिक्षक भी इस विचार से प्रभावित हो गए और सभी इस यंत्र को तैयार करने के काम में जुट गए।

मैंने तेर्स्की से पूछा :

"इसमें दूर की क्या सूझ है? सभी जानते हैं कि इस प्रकार का कोई यंत्र नहीं बनाया जा सकता।"

"कोई चिन्ता मत कीजिए, उन्हें कोशिश करने दीजिए," उसने उत्तर दिया। "हो सकता है कि उनमें से कोई इसे तैयार कर ले।"

और मैं स्वयं प्रायः यह विश्वास करने लगा कि शाश्वत गति संभाव्य है।

दूसरी ओर स्टाफ़ में कोई ऐसा भी व्यक्ति होना चाहिए, जो कभी भी न हंसता हो, जो बहुत सख़्त हो, जो कभी भी किसी कसूर को क्षमा न करता हो और जिसकी आज्ञा की कभी अवहेलना न की जा सके।

कभी-कभी मैंने कुछ परिस्थितियों का काफ़ी ग्रानंद उठाया। कालेज से सद्य: ग्राई एक लड़की, एक नवयुवती शिक्षक ड्यूटी पर होती। विद्यार्थियों का पूरा समुदाय सजग रहता, क्योंकि सदैव कुछ इस प्रकार के लड़के रहते थे, जो उसे बेवक़ूफ़ बनाने की कोशिश करते ग्रौर संभवत: उसे सहायता की जरूरत होती।

"चूंकि मेरे पास जूते नहीं थे, इसलिए मैं काम पर देरी से ग्राया," एक विद्यार्थी इस प्रकार का बहाना बनाता।

इसे न समझते हुए कि क्या करना चाहिए वह परेशान हो जाती। ग्रौर तत्काल दूसरे उसकी ग्रालोचना करने लगते: "ख़बरदार, हम ग्रच्छी तरह जानते हैं कि तुम झूठ बोल रहे हो।"

इस प्रकार की चीज़ से सम्पूर्ण समुदाय एकता के सूत्र में ग्राबद्ध ग्रौर पुष्ट होता।

दूसरे दिन, एक सख़्त शिक्षक ड्यूटी पर होता। वह सुबह ठीक छ: बजे उपस्थित हो जाता ग्रौर किसी को निश्चित समय से ग्रधिक न सोने देता, वह केवल दरवाज़ा खोलकर ग्रन्दर दाख़िल हो जाता ग्रौर उसकी गंभीर मुद्रा से सभी यह समझ जाते कि इस व्यक्ति से उनकी एक भी चाल नहीं चलेगी।

ग्रपने व्यावहारिक काम में मैं इस सिद्धान्त का पालन करता रहा कि किसी भी बाल-शिक्षक, ग्रनुशिक्षक ग्रथवा ग्रध्यापक को दण्ड देने का ग्रधिकार नहीं होना चाहिए ग्रौर मैंने किसी को यह ग्रधिकार, यहां तक कि डांटने-फटकारने तक का ग्रधिकार नहीं दिया। प्रथमत: यह बहुत कठिन कार्य है। दूसरे, मेरा यह पक्का विचार था कि एक ही व्यक्ति को दण्ड देने का ग्रधिकार होना चाहिए, ताकि न तो कोई गड़बड़ी होगी ग्रौर न कोई किसी दूसरे के रास्ते में ग्रायेगा। मैं इसे स्वीकार करता हूं कि इससे बाल-शिक्षकों का काम ग्रौर भी कठिन हो जाता था, क्योंकि उन्हें विवश होकर विद्यार्थियों पर केवल ग्रपने प्रभाव पर निर्भर रहना पड़ता था।

ग्रधिकार के प्रसंग में ग्रनेक बाल-शिक्षकों को यह विश्वास है कि या तो यह भगवान का वरदान है—एक व्यक्ति दबदबा गालिब करने के गुण के साथ पैदा होता है ग्रौर सभी उसकी ग्रोर देखकर यह समझ जाते हैं कि उसमें यह सहज गुण है—ग्रथवा यह एक ऐसी विशेषता है, जिसे कृत्रिम ढंग से ग्रर्जित करना पड़ता है। इसी कारण लोग ग्रक्सर यह कहते हैं:

"आपको विद्यार्थियों के सामने शिक्षक को नहीं डांटना चाहिए था। आप उसके अधिकार को ख़त्म कर रहे हैं।"

मेरा ख़्याल है कि दायित्व से अधिकार प्रादुर्भूत होता है। यदि एक व्यक्ति को दायित्व का पालन करना पड़ता है और वह सम्मान के साथ अपनी ज़िम्मेदारी निभाता है, तो उसे अधिकार प्राप्त हो जाता है। इसी ढंग से, इसी प्रकार आचरण करते हुए, उसे अपना प्रभाव जमाना चाहिए।

बाल-शिक्षक को प्रारम्भिक समुदाय से घनिष्ठतम सम्पर्क क़ायम करने, इसके सर्वोत्कृष्ट मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने और एक पुराने साथी की भांति इसका पथ-प्रदर्शन करने का प्रयास करना चाहिए। शैक्षणिक साधना सर्वथा एक जटिल और लम्बी प्रक्रिया है। उदाहरणार्थ, यदि कोई विद्यार्थी अनुशासन भंग करता, अपनी ख़राब आदतों को प्रकट करता, तो इस अवस्था में मैं सदा इस पर ज़ोर देता था कि शिक्षक को सबसे पहले टुकड़ी को उसकी हरकत की छानबीन करने देना चाहिए। शिक्षक का यह भी काम है कि वह टुकड़ी के कार्यकलाप को प्रोत्साहन प्रदान करे, व्यक्ति के प्रति अधिक सख़्त होने के लिए समुदाय को प्रोत्साहित करे।

मैं अलग-अलग शिक्षक के काम के तरीक़ों के बारे में अब और अधिक विस्तार के साथ कुछ नहीं कहना चाहता, क्योंकि इसमें बहुत अधिक समय लग जायेगा, इसलिये मैं आपको केवल यह बताऊंगा कि स्वयं मैंने एक अनुशिक्षक के रूप में विभिन्न व्यक्तियों के साथ जैसे व्यवहार किया।

एक व्यक्ति के साथ अपने व्यवहार में मैंने उसके सामने ही सब कुछ कहने-सुनने का तरीक़ा पसन्द किया और दूसरों को भी यही ढंग अपनाने का सुझाव दिया। उदाहरणार्थ, यदि कोई लड़का कोई बुरा, घृणास्पद काम करता, तो मैं सीधे उससे कह देता :

"तुम्हारी हरकत निन्दनीय थी।"

जिस प्रसिद्ध शैक्षणिक युक्ति के बारे में बहुत कुछ लिखा जा रहा है, वह वास्तव में आपके विचार की यथार्थता ही होनी चाहिए : मैं कुछ भी नहीं छिपाऊंगा, मैं चिकनी-चुपड़ी बातें नहीं करूंगा, मैं जो उचित समझता हूं, वही कहता हूं। यही सर्वाधिक सहज, सरल, आसान और प्रभावकारी ढंग है, परन्तु वस्तुतः सदा बोलना उचित नहीं होता।

मेरा ख़्याल है कि बातचीत से सबसे कम मदद मिलती है। जब मैं अनुभव करता कि मेरी बातचीत से कोई लाभ न होगा, तो मैं चुप हो जाता था।

फ़र्ज कीजिए, एक लड़के ने एक लड़की का अनादर किया। मुझे इस सम्बन्ध में सभी बातें ज्ञात हो गईं। क्या उसे समझाने के लिए मुझे उससे बातचीत करनी चाहिए थी? इस सम्बन्ध में मेरे लिए महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि मेरे उससे बातचीत किये बिना वह अपनी भूल अच्छी तरह समझ ले। फलतः मैंने उसे एक छोटा पत्र लिखा और मुहरबन्द लिफ़ाफ़े में उसे उसके पास भेज दिया।

मुझे आपको अपने इन "संदेशवाहकों" के बारे में भी कुछ बताना है। वे दस या इसके लगभग तेज़ निगाहवाले चुस्त लड़के थे। वे सदा यह जानते थे कि कौन कहां होगा। ऐसे "संदेशवाहक" महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते थे। मैं उस मुहरबन्द लिफ़ाफ़े को, जिसमें मेरा पत्र होता, उनमें से एक के हवाले कर देता: "कामरेड येव्स्तीग्नेयेव, आज रात में ११ बजे मेरे कार्यालय में आने का कष्ट करो।"

लड़के को यह अच्छी तरह ज्ञात होता कि मेरा पत्र किस बारे में है, उसे ज्ञात होता कि क्या ग़लत बात हुई है और मैं येव्स्तीग्नेयेव को क्यों बुला रहा हूं, संक्षेप में, उसको सभी भीतरी बातों की जानकारी होती, परन्तु वह मुझे यह भांपने नहीं देता कि उसे सब कुछ मालूम है। मैं उससे केवल यही कहता:

"यह पत्र येव्स्तीग्नेयेव के पास पहुंचा दो।"

और मैं इसके अलावा एक भी शब्द नहीं कहता। मैं जानता था कि क्या होगा। वह डायनिंग रूम में जाता और उससे कहता:

"तुम्हारे लिए एक पत्र है।"

"क्या बात है?"

"अन्तोन सेम्योनोविच तुमसे बातचीत करना चाहते हैं।"

"क्यों?"

"तो मैं तुम्हें बता दूं। याद करो कि कल तुमने अमुक लड़की का अनादर किया था!"

और यह "संदेशवाहक" साढ़े दस बजे उसे लेने पहुंच जाता।

"क्या तुम तैयार हो?"

"मैं तैयार हूं।"

"तुम्हारी प्रतीक्षा की जा रही है।"

बाज़ वक़्त वह येव्स्तीग्नेयेव ११ बजे तक इस स्थिति को सहन नहीं कर पाता और तीसरे पहर तीन बजे ही मेरे कार्यालय में पहुंच जाता।

"अन्तोन सेम्योनोविच! क्या आपने मुझे बुलाया था।"

"अभी नहीं, रात के ११ बजे।"

वह अपनी टुकड़ी में वापस चला जाता और सभी उस पर प्रश्नों की बौछार लगा देते:

"क्या बात है? क्या डांट पड़ी है? किस लिए?"

और रात में ११ बजने तक वे टुकड़ी में उसे बहुत खरी-खोटी सुनाते। निश्चित समय पर वह मेरे कार्यालय में आता और उस वक़्त उसका चेहरा पीला तथा दिन भर की बेचैनी के कारण वह अधीर दिखाई पड़ता।

मैं उससे पूछता:

"क्या तुमने सब कुछ समझ लिया है?"

"मैं समझ गया हूं।"

"तब जाओ।"

इसके अलावा और कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं थी।

दूसरे मामलों में मैंने सर्वथा भिन्न तरीक़े से काम किया। मैं सन्देशवाहक से कहता:

"उसे फ़ौरन मेरे पास आ जाने के लिए कहो।"

और जब वह मेरे पास आता, तो मैं उसके बारे में क्या सोचता हूं, सब कुछ उसे साफ़-साफ़ बता देता। परन्तु यदि वह मुझ में विश्वास न करनेवाला दुःसाध्य व्यक्ति होता, मुझसे शत्रुता का भाव रखता और मुझे कुछ सन्देह की दृष्टि से देखता, तो मैं उससे बातचीत करने की परेशानी मोल न लेता। इसके बजाय मैं दोषी लड़के के साथ ही सीनियर लड़कों को बुलवा लेता और सर्वाधिक औपचारिक, मधुर लहजे में उसे सम्बोधित करता। मैंने क्या कहा यह नहीं, बल्कि दूसरों ने उसे किस दृष्टि से देखा, यह मेरे लिए महत्त्वपूर्ण बात थी। वह काफ़ी साहस के साथ मेरी ओर तो अपनी नज़र उठा सका, परन्तु अपने साथियों की ओर शर्म के मारे न देख सका।

मैं कहता: "तुम्हारे साथी अब तुम्हें सभी चीज़ें समझायेंगे।"

मैंने उन्हें जो शिक्षा दी है, वे उससे सब कुछ बताते और वह सोचता कि यह उनका अपना ही विचार है।

बाज़ वक़्त विशेष तरीक़ा अपनाना पड़ता था। ऐसे भी मामले होते थे, जब मुझे पूरी टुकड़ी को बुलाना पड़ता था, परन्तु यह बात साफ़-साफ़

ज़ाहिर न हो, कि मैं एक व्यक्ति को सही रास्ते पर लाने के लिए पूरी टुकड़ी को बुला रहा हूं, मैं उन्हें अपने साथ चाय पीने के लिए निमंत्रित करता था। मैं उन्हें चाय, केक और लेमनेड देता था। सामान्यतया प्रति सप्ताह मैं एक टुकड़ी को चाय पर निमंत्रित किया करता था। और साधारणतया कोई भी इसे नहीं जानता था कि माजरा क्या है और वे बहुत ही घबराहट में रहते थे। चाय पीते, हंसी-मज़ाक़ करते और बातचीत करते हुए वे आश्चर्य में पड़े रहते कि आख़िर दोषी कौन है। कभी-कभी मैं उनको इसका कोई संकेत भी नहीं देता। और यदि बातचीत के दौरान अपराधी स्वयं अपनी ग़लती ज़ाहिर कर देता, तो वे तत्काल उसका मज़ाक़ उड़ाना शुरू कर देते। चाय पीने के बाद वे प्रसन्न मुद्रा में अपने शयनागार में चले जाते और अच्छा काम करने की ओर प्रवृत्त हो जाते।

वे कहते :

"सब कुछ ठीक था, लेकिन तुम ग़लती कर बैठे तथा तुमने हम सबको अपमानित किया।"

एक सप्ताह बाद मैं इसी टुकड़ी को फिर चाय पीने के लिए निमंत्रित करता। वे समझते कि यह परीक्षा की घड़ी है, कि मैं जानना चाहता हूं कि क्या किया गया है। और वे स्वयं मुझे बताते कि उन्होंने अपराधी से कैसे बातचीत की, कैसे अच्छा आचरण करने के लिए उसे वचनबद्ध किया और उन्होंने कैसे किसी को उस पर निगाह रखने के लिए तैनात किया है।

"परेशान न हों, सब कुछ ठीक हो जायेगा।"

कभी-कभी मैं स्कूल की एक कक्षा को अपनी चाय-पार्टियों में निमंत्रित करता था।

चूंकि किसी को यह जानकारी नहीं रहती थी कि अगली चाय-पार्टी कब होगी और किसे निमंत्रित किया जायेगा, इसलिए सभी विद्यार्थी इस बात को सोचकर कि पता नहीं कब किसको चाय पर बुला लिया जाये, अपने कपड़े साफ़ रखते थे और सदा इसके लिए तैयार रहते थे (वे इस अवसर पर यूडीकोलन का भी इस्तेमाल किया करते थे)। वे इससे चिन्तित रहते थे कि हो सकता है कि जब उनकी टुकड़ी में सब कुछ व्यवस्थित न हो, तभी अचानक उन्हें चाय-पार्टी के लिए निमंत्रण प्राप्त हो जाये।

मुझे एक मामला याद है : चाय-पार्टी अभी शुरू ही हुई थी कि एक ऐसा दुर्व्यवहार प्रकाश में आ गया कि ड्यूटी पर तैनात कमांडर ने सुझाव दिया

है कि सभी व्यक्ति खाना और चायपान बन्द कर दें। यह दण्ड सर्वथा उपयुक्त था। पूरी टुकड़ी को इससे ठेस पहुंची थी और दूसरे दिन सभी ने एक-दूसरे को यह कहकर चिढ़ाया: "चाय-पार्टी तो बहुत मजेदार रही!"

व्यक्तिगत समुपचार के ये सभी तरीक़े हैं। यदि स्वयं विद्यार्थियों की ओर से पहलक़दमी हो, तो ये तरीक़े विशेष रूप से प्रभावकारी सिद्ध होते हैं। सामान्यतया लड़का या लड़की मेरे पास आती और कहती:

"मुझे आपसे अलग कुछ बातें करनी हैं, यह गुप्त बात है।"

यह सबसे हितकारी और सर्वोत्कृष्ट तरीक़ा है।

परन्तु कुछ मामलों में मैंने मुंह के सामने ही भर्त्सना करने की जगह पार्शिवक ढंग अपनाने की कोशिश की। जब पूरा समुदाय एक व्यक्ति के ख़िलाफ़ होता, तो मैं यह तरीक़ा अपनाने का प्रयास करता। इस दशा में दोषी को बुलाकर उसे बुरा-भला कहना उचित नहीं होता, क्योंकि किसी भी पक्ष से उस व्यक्ति को संरक्षण नहीं प्राप्त होता। समुदाय उसके विरुद्ध है और यदि मैं भी उसके ख़िलाफ़ हो जाऊं, तो वह बिल्कुल निराश हो सकता है।

हमारे समुदाय में लेना नाम की एक सुन्दर, अच्छी लड़की थी, परन्तु वह पथभ्रष्ट हो चुकी थी। शुरू में उसकी वजह से हमें काफ़ी परेशानियों का सामना करना पड़ा, परन्तु हमारे समुदाय में एक साल रहने के बाद उसमें सुधार होने लगा। और उसके बाद उसकी सबसे अच्छी सहेली को पता लगा कि किसी ने उसके बक्स से पचास रूबल चुरा लिये हैं। सबने कहा कि लेना ने ही चोरी की है। मैंने उन्हें उसकी चीज़ों की तलाशी लेने की अनुमति दे दी। उन्होंने तलाशी ली। तलाशी बेकार रही। मैंने सुझाव दिया कि इस मामले को ख़त्म समझा जाये।

परन्तु कुछ दिनों बाद वाचनालय में खिड़कियों को बन्द करने के लिए जो चीज़ थी, उसमें ठूंसकर और पर्दे से छिपाकर रखे गए ये नोट मिल गए। कुछ किशोरों को एक खिड़की से दूसरी खिड़की तक लेना को चक्कर काटते और उसे अपने हाथ में कोई चीज़ लिये हुए देख लेने की बात याद थी।

कमांडर परिषद् ने उसे बुलाकर पूछा:

"तुमने रूबल चुराये थे?"

मैंने इसे महसूस कर लिया कि उन्होंने ईमानदारी से इसमें यक़ीन किया। उन्होंने चोरी के अपराध में उसे निकाल बाहर करने की मांग की। मैं इसे भी समझ गया कि वहां एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं था, यहां तक कि लड़कियां भी नहीं, जो सामान्यतया अपनी सहेलियों का पक्ष लिया करती थीं, जो उसके पक्ष में होना पसंद करता। यहां तक कि उन्होंने भी उसे निकाल बाहर करने पर जोर दिया और मैं समझ गया कि वास्तव में वही चोर थी। इस बारे में कोई सन्देह नहीं था।

यह एक उसी प्रकार का मामला था, जिसमें पाशविक तरीक़ा अपनाना पड़ता था।

मैंने उनसे कहा: "नहीं, तुम्हारे पास इसका कोई प्रमाण नहीं है कि लेना ने ही रूबल चुराये थे। मैं उसे निकाल बाहर करने की अनुमति नहीं दे सकता।"

उन्होंने आश्चर्य और क्रोध में आकर मुझे विस्फारित नेत्रों से देखा। और तब मैंने कहा:

"मुझे यक़ीन है कि लेना ने चोरी नहीं की।"

और जब उन्होंने मेरे सम्मुख यह सिद्ध करने की कोशिश की कि लेना ही चोर है, तो मैंने इसे प्रमाणित करने के लिए बहुत ही प्रयास किया कि उसने चोरी नहीं की।

उन्होंने मुझसे पूछा:

"आप किस आधार पर इतने विश्वास के साथ ऐसा कहते हैं?"

"मैंने उसकी आंखों को देखकर—उसकी भावनाओं का अध्ययन कर यह जानकारी प्राप्त की है।"

मैं अक्सर लोगों की निगाहों से अनुमान लगाया करता था और वे इसे जानते थे।

दूसरे दिन लेना मेरे पास आई।

"मेरी ओर से अभियोग का प्रतिवाद करने के लिए आपको धन्यवाद, मेरे साथ इस प्रकार का व्यवहार करना उनकी नीचता थी।"

"तुम कैसे यह कह सकती हो? तुम जानती हो कि तुम्हीं ने रूबल चुराये थे।"

मेरा यह तरीक़ा इतना अप्रत्याशित था कि उसका प्रतिरोध समाप्त हो गया। वह बिलख-बिलखकर रोने लगी और उसने सभी बातें स्वीकार

कर लीं। परन्तु यह एक ऐसी गोपनीय बात थी, जिसे केवल हम दोनों जानते थे कि अच्छी तरह इसे समझते हुए कि चोर वही है, मैंने उसे बचाने के लिए ग्राम सभा में असत्य भाषण किया था। इस गुप्त बात से वह पूर्णतया मेरे प्रभाव में आ गई और यथार्थतः शिक्षा प्राप्त करने योग्य बन गई।

मैंने झूटी बात कही। परन्तु मैंने यह अनुभव कर लिया था कि समुदाय ने बहुत निष्ठुर रुख़ अपना लिया था। संभवतः वे उसे निकाल बाहर करते और इस स्थिति को टालने के लिए मुझे यह युक्ति अपनानी पड़ी। मैं इस प्रकार के पाश्विक उपायों के विरुद्ध हूं। ऐसा करना ख़तरनाक है, परन्तु इस मामले में लड़की ने इस तथ्य को महसूस किया कि मैंने उसे बचाने के लिए ग्राम सभा को धोखा दिया था, वह अब इसे जानती थी कि इस गोपनीय बात को हम दोनों ही जानते हैं और इससे शिक्षा के एक पात्र के रूप में वह पूर्णतया विकासमान बन गई। इस प्रकार के पाश्विक उपाय काफी विषम और ख़तरनाक होते हैं। और केवल परले सिरे के मामलों में यह जोखिम उठाना चाहिए।

चौथा व्याख्यान

कामकाजी प्रशिक्षण, समुदाय में सम्बन्ध, कार्य-पद्धति और वातावरण

कार्य-पद्धति और वातावरण-सम्बन्धी अन्तिम परिच्छेद की चर्चा करने के पहले मैं कामकाजी प्रशिक्षण के बारे में अल्प समय में ही कुछ कहना चाहता हूं।

जैसा कि आपको स्मरण होगा, क्रान्ति के बाद शुरू के वर्षों में हमारे स्कूल को श्रम-सम्बन्धी स्कूल की संज्ञा प्रदान की गई थी और हम सभी शिक्षण प्रणाली से उतना नहीं, जितना स्वयं "श्रम" शब्द और श्रम-सिद्धान्त से प्रभावित थे, जिसके प्रति हमारा विशेष आकर्षण था। इसमें कोई सन्देह नहीं कि परम्परागत स्कूल की अपेक्षा बस्ती से औद्योगिक प्रशिक्षण को लागू करने के लिए अधिकाधिक अवसर सुलभ हुए, परन्तु गोर्की बस्ती और द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में अपने कार्य-काल के १६ वर्षों में श्रम की शैक्षिक भूमिका और श्रमिक प्रक्रियाओं के संगठन के प्रति अपनी मनोवृत्ति के विकास और यहां तक कि स्वयं श्रम-प्रक्रिया की अपनी समझदारी में मुझे कठिन मार्ग से गुज़रना पड़ा।

१९२० में मैं १९३५–१९३६ के उस संगठन की कल्पना भी कभी नहीं कर सकता था, जो श्रम पर जोर देने के साथ द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में उपलब्ध हो गया था।

मैं विश्वास के साथ नहीं कह सकता कि श्रम-संगठन और इसके विकास के जिस पथ का मैंने अनुसरण किया, वह सही रास्ता था या नहीं, क्योंकि इस क्षेत्र में स्वतंत्रतापूर्वक कार्य करने में मैं असमर्थ था और अपने दृष्टिबिन्दुओं, परिवर्तनों और तरीक़ों को लागू करते हुए अस्थाई रूप से मेरे सम्पर्क में आनेवाले लोगों के अनेक विचारों और दृष्टिकोण के अनुरूप कार्य करना पड़ा। पूरे सोलह वर्षों तक मैं उनके विचारों के अनुकूल कार्य

करने और जिस परिस्थिति में मैं था, उसके अनुरूप अपने को ढालने के लिए विवश था। गोर्की वस्ती में अन्य किसी बात की अपेक्षा अभावजन्य परिस्थितियों के अनुरूप मुझे कार्य करना और आवश्यकतावश, ग़रीबी की स्थितियों में श्रम को लागू करना पड़ा। द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में मुझे अपने को अपने वरिष्ठ अधिकारियों के मनोनुकूल ढालने और यहां तक कि उनके द्वारा शुरू की गई प्रवृत्तियों के ख़िलाफ़ संघर्ष भी करना पड़ा।

मेरा विचार है कि मेरे समुदाय के इतिहास में ऐसे काल रहे हैं, जिन्हें सर्वथा आदर्श समय कहने का मुझे कुछ हक़ हासिल है। द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में १९३० अथवा १९३१ में ऐसा समय था।

मैं उस अवधि को आदर्श काल क्यों कहता हूं? उस समय तक मेरे सभी कम्यूनार्ड एक वास्तविक फ़ैक्टरी में काम कर रहे थे, अर्थात् अपनी औद्योगिक और वित्तीय योजनाओं तथा एक वास्ताविक कारख़ाने के सभी रूपों के साथ कार्यक्षम संगठन सहित यह एक उद्यम था: उत्पादन नियोजन विभाग, रेट-व्यवस्थापन कार्यालय, सभी कामों में कुशल परस्परावलम्बन और तैयार पुर्ज़ों की संख्या, उत्पादन-दर और मानक का नियमित रूप से रखा जानेवाला लेखा।

उस समय अपने व्यय और कम्यूनार्डों पर होनेवाले ख़र्चे को पूरा करके हमारी फ़ैक्टरी को आय होने लगी थी और वह परिसम्पत्ति जमा करने लगी थी। मेरे कहने का अर्थ यह है कि यह यथार्थ रूप में एक फ़ैक्टरी थी। परन्तु कम्यूनार्डों को पगार नहीं मिलती थी। निस्सन्देह यह एक विवादास्पद प्रश्न है और आज भी यह विवाद का विषय बना हुआ है। मुझे किसी ऐसी संस्था की जानकारी नहीं है, जहां कभी भी इस प्रकार का प्रयोग किया गया हो।

उस समय मैं पगार देने के विरुद्ध था। मैं सबको इस बात में भरोसा दिलाने के सरल साधन द्वारा श्रम उपज को बढ़ाने में विश्वास करता था कि ऐसा करना समुदाय के हित में है, मैं एक अभियान के उत्साह में नहीं, अमुक सप्ताह अथवा अमुक महीने के फ़ौरी ध्येय को प्राप्त करने के उत्साह में नहीं, बल्कि सतत श्रम-सम्बन्धी उत्साह, समुदाय के दृष्टिकोण के लिए निश्चल, अविरत उत्साह में विश्वास करता था, जो बाल-शिक्षक से मानसिक, शारीरिक और सैद्धान्तिक दृढ़ता की अपेक्षा रखते हुए वृहत् कार्यभार को पूरा करने के लिए विद्यार्थियों को प्रेरणा प्रदान करता है...

मैं इस प्रकार के उत्साह को सर्वाधिक शैक्षिक महत्त्व का उत्साह मानता था और मुझे गहरा विश्वास था कि पगार से नैतिक कल्याण का यह चित्र अनिवार्यतः ख़राब होगा और कुछ हद तक भंग हो जायेगा।

मैं यह नहीं कहूंगा कि पगार देने की प्रथा लागू करने से किसी प्रकार की अतिरिक्त उपलब्धियां हासिल हुई और इस कारण मैं अपने दृष्टिकोण का समर्थन करता रहा। मैंने इस बात की ओर संकेत किया कि जब कम्यूनार्ड बिना पगार के काम करते थे, तो योजना में निर्धारित काम से अधिक कार्य करते हुए, कार्य-दिवस के अपने निश्चित काम की अपेक्षा अधिक काम करते हुए उनसे जो आशा की जाती थी, उसके अनुरूप सब कुछ करते थे, और यह कि अपने जीवन के भौतिक पक्ष के बारे में उन्हें कोई शिकायत नहीं थी।

परन्तु मैं ऐसे प्रबल विरोधियों से घिरा हुआ था, जो मेरी शैक्षणिक महत्त्वाकांक्षाओं में कोई कम अभिरुचि नहीं रखते थे, परन्तु जिन्हें यह दृढ़ विश्वास था कि पगार देने से कार्य-क्षमता बढ़ेगी और विद्यार्थियों को प्रोत्साहन प्राप्त होगा और इनके दृष्टिकोण का मेरे वरिष्ठ अधिकारियों ने इतने सक्रिय रूप से समर्थन किया कि इस प्रवृत्ति के ख़िलाफ़ लड़ने के लिए न तो मुझे अवसर प्राप्त हुआ और न मुझ में शक्ति ही थी और फलतः मेरे काम का आख़िरी समय पगार देने की स्थितियों में गुज़रा।

इसलिए अब मैं उसे त्याग सकता हूं, जिसे शायद मैं श्रम-शिक्षा की नकारात्मक परिस्थितियां कहना पसन्द करूं। मेरे कहने का अर्थ है उत्पादन की कमी, सामुदायिक श्रम का अभाव और उसकी जगह पृथक् प्रयास, जिसके द्वारा श्रम-शिक्षा प्रदान करने की कल्पना की जाती है।

अभी मैं कम्यूनार्डों के उद्योग में लग जाने के बिना ही उनकी श्रम-शिक्षा के बारे में कोई विचार व्यक्त नहीं कर सकता। मेरा अनुमान है कि श्रम के जरिये, जिसका स्वरूप उत्पादनकारी नहीं होता, लोगों को शिक्षित करना संभव है। गोर्की बस्ती के अस्तित्व में आने के बाद इसके शुरू के वर्षों में, अपेक्षाकृत अल्प अवधि में ही मुझे इसका अनुभव प्राप्त हो गया था, जब औद्योगिक क्षेत्र और औद्योगिक उपकरणों के अभाव के कारण मेरे सामने औद्योगिक स्वसेवा और उत्पादन प्रक्रिया से मिलती-जुलती प्रक्रिया से संतुष्ट होने के अलावा कोई चारा नहीं था... हर सूरत में मुझे पूरा यक़ीन है कि जिस श्रम का लक्ष्य मूल्योत्पादन नहीं है, वह शिक्षा का

सकारात्मक तत्त्व नहीं है और इसलिए जिस श्रम को औद्योगिक प्रशिक्षण कहा जाता है, उसे परिश्रम द्वारा अर्जित मूल्यों की धारणा पर आधारित होना चाहिए।

गोर्की बस्ती में केवल आवश्यकतावश मैं जल्दी में उत्पादन के लिए विवश हो गया। यह कृषि उपज थी। बाल-कम्यूनों की परिस्थितियों में खेती प्रायः एक घाटे का धन्धा होती है। परन्तु दो वर्षों में ही मुझे सफलता प्राप्त हो गई। हमारे फ़ार्म को—इस पर भी ध्यान दीजिए कि गल्ला पैदा करनेवाला नहीं, बल्कि पशुधन फ़ार्म को—लाभकर फ़ार्म बनाने का श्रेय कृपिशास्त्री नि० ए० फ़ेरे की उल्लेखनीय योग्यता और ज्ञान को है। हमारे फ़ार्म में मुख्यतः सूअर-पालन का काम होता था। अन्ततः हमारे फ़ार्म में दो सौ सुअरियां और सूअर तथा उनके कई सौ बच्चे हो गये थे। इस फ़ार्म में बहुत ही आधुनिक साज़-सामान था। विशेष रूप से निर्मित बाड़े शयनागारों की भांति साफ़-सुथरे रखे जाते थे, नियमित रूप से फ़र्श को धोया जाता था—पानी बहने की नालियां, मोरी, पाइप और अन्य भी सभी आवश्यक चीज़ों की व्यवस्था की गई थी तथा ताज़ी हवा पहुंचाई जाती थी। वहां ज़रा भी कोई दुर्गन्ध नहीं थी और सूअरों को पालनेवाले बहुत ठाठबाट से रहते थे। आधुनिकतम साधनों से युक्त और सूअरों के खाने की अच्छी व्यवस्था हो जाने की स्थिति में हमें इस फ़ार्म से काफ़ी आय हुई और हमने न्यूनाधिक भरा-पूरा जीवन व्यतीत किया। अच्छा खाना और अच्छे कपड़े के अलावा हम स्कूल के लिए आवश्यक सभी चीज़ें ख़रीद सके, पुस्तकालय को बढ़ा सके और रंगमंच का निर्माण और इसे सज्जित कर सके। सूअर-पालन के धन्धे के ज़रिये अर्जित धन से हमने अपने हवा-बाजों के आर्केस्ट्रा के लिए वाद्ययंत्र और फ़िल्म-कैमरा ख़रीदे—ये ऐसी चीज़ें थीं, जिन्हें हम इस सदी के तीसरे दशक में अपने बजट में सुलभ धन-राशि से कभी भी नहीं ख़रीद सकते थे।

इसके अतिरिक्त हमने अपने भूतपूर्व छात्रों, जिनकी संख्या बढ़ती जा रही थी, अपने उन विद्यार्थियों को, जो उच्चतर स्कूलों में पढ़ रहे थे और आर्थिक कठिनाई में थे, और उनको भी सहायता प्रदान की, जिन्होंने विवाह कर लिया था और अपना घर बसाना शरू कर दिया था। यात्राओं पर जाना और मेहमानों की ख़ातिरदारी करना भी बहुत ख़र्चीली चीज़ें हैं। हम अक्सर थियेटर जाया करते थे और हम जीवन की सभी अच्छी

चीजों का आनन्द उठाते थे, जिसका अधिकारी एक मेहनतकश सोवियत नागरिक है।

जीवन के लिए जरूरी उन सभी अच्छी चीजों से, जिनका मैंने उल्लेख किया है, उत्पादिता को बढ़ाने में इतनी विश्वस्त प्रेरणा प्राप्त हुई कि मैंने उस समय पगार के बारे में कुछ सोचा भी नहीं।

निस्सन्देह मैंने विद्यार्थियों को जेबखर्च देने की जरूरत महसूस की और यदि पूर्ण रूप से विचार किया जाये, तो मैं जेबखर्च देने के औचित्य में बहुत यक़ीन करता हूं... जब एक व्यक्ति लौकिक जीवन में प्रविष्ट करता है, तो उसे अपने निजी बजट के भीतर रहने का अनुभव प्राप्त होना चाहिए, अपना द्रव्य सर्वोत्कृष्ट ढंग से कैसे खर्च किया जाये, इसका ज्ञान भी उसे होना चाहिए। उसे सद्यः बोर्डिंग स्कूल से आई युवा कुमारी की भांति दुनिया में क़दम नहीं रखना चाहिये, जिसे इस बात की जरा भी जानकारी नहीं होती कि द्रव्य क्या है। परन्तु उस समय सार्वजनिक शिक्षा की उक्रइनी जन-कमिसारियत ने यह विश्वास करते हुए कि इस ढंग से मैं उन्हें धनलोलुप होने की शिक्षा दूंगा, बस्ती में रहनेवालों को कुछ भी जेबखर्च देने के विरुद्ध निश्चित दृष्टिकोण अपना लिया और इस कारण मैं केवल एक ही ढंग से विद्यार्थी को जेबखर्च दे पाता था और वह तरीक़ा यह था कि मैं जेबखर्च देने से पहले उससे यह तय करा लेता था कि इस बारे में वह किसी से कुछ नहीं कहेगा...

किन्तु यह जेबखर्च विद्यार्थियों के उत्पादन के आधार पर नहीं, बल्कि सामान्यतया समुदाय के प्रति उनकी सेवा के आधार पर उन्हें दिया जाता था।

जब मैं द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में काम करने आया, तो यहां भी मैंने अपने को उसी स्थिति में पाया, अन्तर केवल यह था कि यहां खेतीबारी का नहीं, बल्कि दस्तकारी का काम होता था। इस कम्यून में कम्यूनार्ड इस पर और भी अधिक निर्भर थे कि वे कितना पैदा कर सकते हैं। प्रेषित तखमीने के अनुसार गोर्की बस्ती को राजकीय धन-राशि प्राप्त होती थी, परन्तु द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून को एक पैसा भी नहीं मिलता था और मेरा ख़्याल है कि अपने पूरे अस्तित्व-काल में इसने राज्य से कुछ भी नहीं लिया। और इस कारण किसी अतिरिक्त आराम की चीजें ख़रीदने की बात तो छोड़िए, इतने खाने की व्यवस्था करना भी, ताकि हम सब भूखे न रहें, पूर्णतया इस पर निर्भर था कि समुदाय कितना पैदा करने में समर्थ था।

दज़ेर्जीन्स्की कम्यून में जिन परिस्थितियों में मुझे काम शुरू करना पड़ा, वे बहुत ही विषम थीं, गोर्की बस्ती की अपेक्षा और भी अधिक कठिन थीं, क्योंकि उसे आखिरकार राज्य से सहायता प्राप्त होती थी। दज़ेर्जीन्स्की कम्यून का गठन बृहत् पैमाने पर हुआ। शुरू में कुछ हद तक इसकी व्यवस्था दयालुता के आधार पर हुई। फ़ेलिक्स एद्मुन्दोविच दज़ेर्जीन्स्की के स्मारक के रूप में भवन का निर्माण हुआ। यह एक बहुत ही ख़ूबसूरत इमारत थी, सोवियत संघ के सुविख्यात वास्तुकार की एक बहुत ही भव्य कृति थी, जिसकी परिकल्पना, अग्रभाग की डिज़ाइन, अलंकरण, खिड़कियों के आकार अथवा इसके किसी भाग में आज भी कोई त्रुटि नहीं पाई जा सकती। भव्य शयनागार थे, शानदार हाल था, अच्छे स्नानागार और स्कूल के कमरे बड़े तथा ख़ूबसूरत थे। कम्यूनार्ड महंगे ऊनी सूट पहनते थे और भावी पहनावे के लिए कपड़े की पर्याप्त व्यवस्था की जाती थी। परन्तु वहां एक भी अच्छी मशीन नहीं लगाई गई थी। फल एवं तरकारियों का कोई बाग़ नहीं था, ज़मीन का कोई टुकड़ा हमें उपलब्ध नहीं था और राज्य से कोई सहायता प्राप्त नहीं होती थी। यह आशा की जाती थी कि सभी चीज़ें अपने आप ठीक हो जायेंगी।

शुरू में उक्रइनी चेका के आदमियों ने अपनी तनख़्वाह से जो कुछ दान दिया, उसी पर कम्यून ने निर्वाह किया। वे अपने वेतन का ०.५ प्रतिशत दान में देते थे, जो कुल मिलाकर क़रीब दो हज़ार रूबल होता था। और स्कूल को शामिल कर चालू व्यय के लिए हमें प्रति मास चार-पांच हज़ार रूबलों की ज़रूरत पड़ती थी। दो अथवा तीन हज़ार रूबलों की जो कमी पड़ती थी, उसे कहीं से मैं प्राप्त नहीं कर सकता था, क्योंकि वहां काम करने के लिए कोई स्थान नहीं था। हमारे पास सिर्फ़ तीन वर्कशाप थे—मोचीख़ाना, बढ़ईख़ाना और सिलाई का वर्कशाप—जिनपर शुरू से ही सार्वजनिक शिक्षा की जन-कमिसारियत ने आशा लगा रखी थी। जैसा कि आप जानते हैं, ये तीनों वर्कशाप शैक्षिक श्रम-प्रक्रिया का आधार समझे जाते थे। मोचीख़ाने में कुछ जोड़े लकड़ी के कलबूत, कई तिपाइयां, कुछ सुतारियां और हथौड़े थे, परन्तु न तो एक भी मशीन थी और न चमड़े का कोई टुकड़ा ही। ख़्याल यह था कि हम ऐसे मोचियों को प्रशिक्षित करेंगे, जो हाथ से बने जूते तैयार करेंगे; दूसरे शब्दों में हम ऐसे दस्तकारों को प्रशिक्षित करेंगे, जिनकी अब सर्वथा कोई उपयोगिता नहीं है।

वढ़ईख़ाने में कई रन्दे सुलभ थे, अर्थात् कुल मिलाकर केवल यही यंत्र वहां था और हमसे यह आशा की जाती थी कि हाथ से काम करनेवाले अच्छे वढ़इयों को हम प्रशिक्षित करेंगे।

सिलाई वर्कशाप भी क्रान्ति-पूर्व स्टैण्डर्ड के अनुरूप था, ख़्याल यह था कि हम सुयोग्य गृहणियों को तैयार करेंगे, जो पट्टियों का गोटा लगा लेंगी, फटे हुए कपड़े में पैवन्द लगा लेंगी अथवा सादे ब्लाउज़ सी लेंगी।

इसके पहले गोर्की वस्ती में इस प्रकार के वर्कशाप से मेरा दिल खट्टा हो चुका था और यहां मैं अपेक्षाकृत अधिक दुःखी हुआ। मेरी समझ में यह वात नहीं आई कि आख़िरकार वहां इस प्रकार के वर्कशाप की व्यवस्था का क्या उद्देश्य था। और इस कारण मेरी कमांडर परिषद् और मैंने अपनी ज़रूरत के लिए कुछ यंत्रों को रखकर एक सप्ताह के भीतर इन्हें बन्द कर दिया।

शुरू के तीन साल तक द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून को भीषण अभाव झेलना पड़ा। ऐसे भी समय आये, जब केवल सूखी रोटी को छोड़कर हमारे पास खाने को कुछ भी नहीं होता था। आप इस तथ्य से हमारी भीषण ग़रीवी का अन्दाज़ लगा सकते हैं कि वहां शुरू के आठ महीनों में मुझे तनख़्वाह नहीं मिली और इस कम्यून के शेष सदस्यों की भांति मुझे भी केवल सूखी रोटी पर गुज़र करना पड़ा... ऐसे भी क्षण आये, जब कम्यून में एक पैसा भी नहीं होता था और तव हम "भीख मांगने" को विवश हो जाते थे। और क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि वावजूद इसके कि हमने इस अभाव को काफ़ी कष्टदायक और अरुचिकर समझा, यह श्रम के विकास में अपूर्व प्रोत्साहन सिद्ध हुआ। चेका के आदमियों ने न तो तख़मीने के आधार पर हमें रखने और न हमारे विद्यार्थियों पर होनेवाले व्यय के लिए जन-कमिसारियत से रुपये लेने की वात कहना स्वीकार किया – और मैं इसके लिए उनका वहुत कृतज्ञ हूं। उनके लिए आर्थिक सहायता मांगना वास्तव में शर्म की वात होती: कहा जाता कि उन्होंने कम्यून का गठन तो कर लिया, परन्तु वे कम्यूनार्डों के भोजन की कोई व्यवस्था नहीं कर पाये। और इस कारण हमने स्वयं कुछ रुपये अर्जित करने में अपना पूरा प्रयास लगा दिया – हम धन कमाने की स्पष्ट इच्छा से उत्प्रेरित हुए।

उस पहले साल हमने वढ़ईख़ाने में कुर्सियां, वक्स और अन्य चीजें

तैयार करते हुए काफी परिश्रम किया। इन चीजों के ग्राहक भी थे। हमारी कारीगरी काफी खराब थी, ग्राहक असंतुष्ट थे और सामान्यतया हमें नुकसान उठाना पड़ता था। हम जो मूल्य मांगते थे, उनसे किसी प्रकार सामग्रियों, बिजली, कीलों और सरेस पर होनेवाला खर्च निकल आता था और हम स्वयं मुफ्त काम करते थे।

एक सुखद संयोग से हमें सहायता प्राप्त हो गई। हमने सोलोमोन बोरीसोविच कोगन को अपने उत्पादन-विभाग के मैनेजर के पद पर काम करने के लिए अनुरोध किया। जहां तक शिक्षण का सम्बन्ध था, वह सर्वथा सिद्धान्तहीन व्यक्ति था, परन्तु था बहुत ही कर्मठ। इस कामरेड के प्रति मैं बहुत ही कृतज्ञ हूं और महसूस करता हूं कि प्रशिक्षण-सम्बन्धी अपने सिद्धान्तशून्य रुख के बावजूद उसने जो सर्वथा नये शैक्षणिक सिद्धान्त लागू किए, उनके लिए किसी समय मुझे उसके प्रति अपनी विशेष कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिए।

उसने मुझसे जो पहली ही बात कही, वह मुझे विलक्षण प्रतीत हुई। वह तोंदियल, भारी-भरकम और बहुत ही उद्योगी व्यक्ति था।

"आखिर यह भी क्या बात है? क्या डेढ़ सौ कम्यूनार्ड, तीन सौ हाथ अपने लिये एक कटोरा शोरबे के लिए भी पैसे अर्जित नहीं कर सकते? यह कैसे हो सकता है? उन्हें जीविकोपार्जन का तरीका जानना ही होगा, इससे भिन्न कोई बात नहीं हो सकती।"

यही वह सिद्धान्त था, जिसकी उपयुक्तता में मैं पहले सन्देह किया करता था। एक महीने के भीतर ही कोगन ने सिद्ध कर दिया कि उसका कथन ठीक था। यह सच है कि मुझे उसकी बात मानकर अपने कई शैक्षणिक विचारों को छोड़ना पड़ा।

वास्तव में उसने जोखिम का काम शुरू किया। निर्माण-संस्थान के कार्यालय में जाकर उसने कहा कि वह फ़र्नीचर के लिए आर्डर ले सकेगा।

इस प्रकार का प्रस्ताव करने के लिए उसके पास सर्वथा कोई आधार नहीं था। हम फ़र्नीचर बनाना नहीं जानते थे और हमारे पास कोई साज-सामान, कोई यंत्र और कोई सामग्री नहीं थी। हमारे पास केवल सोलोमोन बोरीसोविच कोगन और डेढ़ सौ कम्यूनार्ड थे।

सौभाग्य से संस्थान के लोग विश्वास-प्रवण एवं सरल थे और उन्होंने सोलोमोन बोरीसोविच का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

कोगन ने कहा :

"तब आपको क्या-क्या चीजें चाहिए, उनका आर्डर दीजिए।"

आर्डर दे दिया गया—व्याख्यान कक्षों के लिए विभिन्न प्रकार की कई हज़ार चीज़ें, इतनी मेजें, इतनी कुर्सियां, किताबों को रखने की इतनी अलमारियां, इत्यादि। जब मैंने दो लाख रूबल के आर्डर देखे, तो मेरी पहली प्रतिक्रिया यह थी कि डाक्टर को फ़ोन करके बुलाऊं अथवा कम-से-कम यह देखूं कि कोगन को कितना बुख़ार है।

मैंने उससे पूछा :

"इसे कैसे पूरा पाओगे?"

उसने उत्तर दिया :

"हम प्रबन्ध कर लेंगे।"

"परन्तु फिर भी हम कैसे काम शुरू करेंगे? हमें रुपयों की जरूरत पड़ेगी और तुम जानते ही हो कि हमारे पास कुछ नहीं है।"

उसने कहा :

"यह तो सामान्य बात है। एक व्यक्ति सदा जो पहली बात कहता है, वह यही कि 'परन्तु रुपये तो हैं नहीं'। और उसके बाद उसे कहीं से यह प्राप्त हो जाता है और हम भी कुछ रुपये प्राप्त कर लेंगे।"

"परन्तु कहां से? कौन हमें रुपये देगा?"

"क्या इस दुनिया में हमें रुपये देनेवाले कोई भोले-भाले व्यक्ति नहीं हैं?"

और क्या आप सोच सकते हैं कि उसे रुपये मिल गए। धृष्टता के लिए क्षमा करें, उसे उसी संस्थान में एक भोला-भाला आदमी मिल गया, जिसने कोगन का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

कोगन ने उस आदमी से पूछा :

"हम जो फ़र्नीचर तैयार करेंगे, उसे कहां रखेंगे। आप तो अभी केवल अपनी इमारत की नींव डालने के लिए खुदाई करवा रहे हैं। फ़र्नीचर शीघ्र ही तैयार हो जायेगा, प्रश्न यह है कि उसे कहां जमा किया जाये!"

उस व्यक्ति ने कहा था :

"सचमुच इसे जमा करने के लिए कोई जगह नहीं है।"

"ख़ैर, कोई बात नहीं, हम इसे अपने ही यहां रख लेंगे।"

"क्या इसके लिए तुम्हारे पास जगह है?"

"जगह तो नहीं है, परन्तु हम एक गोदाम बनवा सकते हैं। हमें इसके लिए ५० हज़ार रूबल की ज़रूरत होगी।"

"ठीक है, ये हैं पचास हज़ार रूबल," उस व्यक्ति ने कहा था।

खैर, हमें पचास हज़ार रूबल प्राप्त हो गए और हमने इस धन से यंत्र और सामग्री ख़रीदी। कोगन ने संस्थान से पेशगी भुगतान के रूप में कुछ और रुपए प्राप्त कर लिए और कुर्सियां तैयार कराने का काम शुरू कर दिया, जो कतई हमारे ग्राहक के लिए नहीं, बल्कि बाज़ार में शीघ्र बेचने के लिए तैयार की जा रही थीं। वे साधारण कुर्सियां थीं। शुरू में वे बेढंगी और इस्तेमाल लायक़ बिल्कुल नहीं थीं, परन्तु कोगन ने कहा कि कम्यूनार्ड कुर्सी बनाना सीख जायेंगे और इस बीच वे कुर्सियों की पटिया तैयार कर सकते हैं। और उसने श्रम-विभाजन की प्रथा लागू की। मुझे इसके बारे में बहुत सन्देह था।

उसने श्रम का विभाजन इस प्रकार किया: एक लड़का लकड़ी पर रन्दा करके उसे चौरस करता, दूसरा उसे चीरकर पटिया बनाता, तीसरा काट-छांटकर ठीक करता, चौथा पालिश करता, पांचवां जांच करता, इत्यादि। किन्तु यह उन्हें धन्धा सिखाना नहीं था और उन्होंने कहना शुरू किया कि वे कुछ भी नहीं सीख रहे हैं। आम सभा में सब की राय यह थी कि जो काम वे कर रहे थे, वह उपयोगी था, उन्हें कम्यून की भलाई के लिए इसे करना ही था, परन्तु इसके साथ ही इससे उन्हें लाभ पहुंचना चाहिए और इस हुनर को सीखना चाहिए, जबकि केवल पटिया करने से वे कुछ भी नहीं सीख रहे हैं।

सोलोमोन बोरीसोविच कोगन ने सिद्ध कर दिया कि वह वास्तव में अपना काम जानता है। उसने एक कुर्सी तैयार करने के काम को दस हिस्सों में बांट दिया और प्रत्येक कम्यूनार्ड को अलग-अलग एक ही ख़ास काम करना पड़ता था। फलतः हम बहुत बड़ी संख्या में कुर्सियां तैयार करने लगे।

शीघ्र ही हमारा प्रांगण कुर्सियों से भर गया, जिनके सम्बन्ध में यह भी ज़रूर कहना चाहिये कि वे बहुत ही साधारण क़िस्म की थीं। शुरू में कोगन अधिकांशतः आख़िरी पालिश आदि पर भरोसा करता था, जिसे वह बाद में किया करता था: गोंद और बुरादों से उसने जोड़ने का विशेष मसाला तैयार किया और इससे कुर्सियों में जोड़ की जगहों पर जहां-तहां

सुराख़ रह जाते थे, उन्हें भर देता और तब लकड़ी पर पालिश कर दिया करता था, इत्यादि। किसी प्रकार उसने ५० हज़ार रूबल की प्रारम्भिक पूंजी का सदुपयोग किया और छः महीने में हमारे पास दो लाख रूबल हो गए। उसके बाद उसने अधिक यंत्र और सामग्री खरीदी और वह थियेटर-भवन का फ़र्नीचर तैयार करने लगा।

बाद में सप्लाई मैनेजर के पद पर नियुक्त होने के बाद—यह ऐसा काम था, जिसमें वह अपने ज्ञान और प्रतिभा का सर्वोत्कृष्ट उपयोग कर सका—सोलोमोन बोरीसोविच हमारे बीच कम दृष्टिगोचर होता था। उसका स्थान ग्रहण करने के लिए एक नया इंजीनियर आ गया, परन्तु फिर भी मेरा यह विश्वास बना रहा कि कोगन का श्रम-विभाजन उपयोगी था। पहली दृष्टि में यह अवसादकारी दृश्य प्रतीत होता है, परन्तु कुछ समय तक ध्यान देने पर आप महसूस करेंगे कि इसमें कोई विकटता नहीं है। प्रत्येक लड़का और लड़की कुछ समय तक एक ही प्रकार का काम करती है—आप सोचेंगे कि यह शायद ही कोई हुनर सीखना है—परन्तु कुछ साल बाद जब विद्यार्थी कई विभिन्न प्रकार के कार्यों को करने का अभ्यास प्राप्त कर लेता है और उस अवस्था में पहुंच जाता है, जब यह विश्वास किया जाता है कि वह आख़िरी तथा सर्वाधिक मुश्किल काम जैसे जोड़ने का काम ठीक ढंग से कर लेगा, तो यथार्थतः वह एक बहुत ही कुशलता प्राप्त ज्वाइनर हो जाता है और इस प्रकार के कुशल मज़दूर की ज़रूरत केवल कुटीर उद्योग में नहीं, बल्कि बड़े पैमाने के सामाजिक उत्पादन में भी पड़ती है।

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यदि मैं बढ़ईगिरी तक ही काम को सीमित रखता, तो मेरे कम्यूनार्ड केवल बढ़ईगिरी की फ़ैक्टरियों में, और ध्यान दीजिए कि केवल उन फ़ैक्टरियों में, जहां कई हिस्सों में काम का विभाजन हुआ हो, काम करने के लिए उपयुक्त होते। परन्तु हमारा धन्धा इतना सफल रहा, मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि श्रम-उत्पादिता बढ़ाने में हमें इतनी सफलता मिली कि हमारे साथ कोगन के एक साल काम करने के बाद ही हम चेका के आदमियों को उनकी कृपा के लिए धन्यवाद दे सके और कम्यून के लिए अपनी तनख़्वाह से अब दान न देने की बात उनसे कह सके। दूसरे साल के अन्त में बैंक में हमारे छः लाख रूबल जमा हो गये थे।

फ़र्नीचर बनाने से हमें इतनी सफलता मिली। और अब हमारी हैसियत बैंक में हमारे छः लाख रूबल जमा हो जाने से दया पर आश्रित रहनेवाली एक संस्था की नहीं, बल्कि एक स्थिर उद्यम चलानेवाली संस्था की हो गई थी, जिस पर यक़ीन किया जा सकता था।

बैंक ने हमें फ़ैक्टरी बनाने के लिए ऋण दिया। १६३१ में हमने अपनी पहली फ़ैक्टरी खड़ी की। सूक्ष्म ड्रिल, जिसे हम उस समय तक विदेश से मंगाते थे, तैयार करनेवाली धातुकर्मक उद्योग-सम्बन्धी यह एक व्यवस्थित फ़ैक्टरी थी। प्रत्येक ड्रिल का अपना मोटर, १५० पुर्ज़े और बहुत-से गियर-पहिये होते थे, जिनके लिये मिलिंग और गियर-कटिंग दोनों प्रकार की मशीनों की जरूरत थी, जुड़ाई और ढलाई का काम बहुत ही जटिल था, परन्तु इसके बावजूद श्रम-विभाजन के अनुभव पर भरोसा रखते हुए हमारे कम्यूनार्ड बहुत ही कम समय में धातुकर्म प्रक्रियाओं की पूर्ण जानकारी प्राप्त करने में सक्षम हो गए। एक ही पुर्ज़े को तैयार करने में संलग्न तथा इस प्रक्रिया में दक्षता प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील एक व्यक्ति का मनोभाव भी इस सम्बन्ध में उपयोगी सिद्ध हुआ। उन बहुत ही जटिल मशीनों को चलाने का ज्ञान प्राप्त करने में उन्हें छः हफ़्ते से अधिक समय नहीं लगा और आपरेटर तेरह अथवा चौदह वर्ष के लड़के-लड़कियां थीं।

इस उद्यम में हमें इतनी सफलता मिली कि हमने एक दूसरी फ़ैक्टरी, फ़ोटोकैमरा तैयार करनेवाली फ़ैक्टरी को खड़ा करना शुरू कर दिया। इस बहुत ही जटिल फ़ैक्टरी में कम्यून-निर्मित उपकरण थे। वर्तमान फ़ैक्टरी कम्यून की अपनी ही है। यहां आप ऐसी मशीनों को देख सकते हैं, जो सभी फ़ैक्टरियों में नहीं होतीं। माइक्रान तक सूक्ष्म पुर्ज़ों की अपेक्षा करनेवाली यह उत्पादन-प्रक्रिया बहुत ही जटिल है, अर्थात् इस उद्यम में विशेष यंत्रों के एक पूरे सेट और सत्यापन की बहुत ही कुशल तकनीक की आवश्यकता पड़ती है।

मुझे पूरा विश्वास है कि यदि हमने श्रम-विभाजन करके कुर्सियां तैयार करने का अपना काम शुरू न किया होता, तो हम इस प्रक्रिया में दक्षता प्राप्त नहीं कर पाते। मैंने अनुभव किया कि किस चीज़ को तैयार करके आप अपना काम शुरू करते हैं, यह महत्त्वपूर्ण नहीं है, वास्तव में ख़ास बात है किसी उत्पादन का औचित्य, जो इन नवीनतम आधार-सामग्रियों पर आधारित है: श्रम-विभाजन और योजना।

जिस व्यक्ति का उद्योग से कोई सम्बन्ध नहीं है, उसके लिए यह समझना कठिन होगा कि उत्पादन-योजना क्या है। इसमें केवल यही बात निश्चित नहीं की जाती कि इतनी मेजें और कुर्सियां जरूर तैयार करनी हैं। यह कोटा और सम्बन्धों की सम्मिलित क्रिया है। यह विभिन्न भागों, विभिन्न पुर्जों, एक मशीन से दूसरी मशीन तक की गति की द्योतक सम्मिलित क्रिया है। योजना में उपकरण, सामग्री की क़िस्म, इसकी डिलीवरी, यंत्रों की निकासी, कटर को तेज़ करने, स्टाक की पुन:पूर्ति तथा अन्तिम, परन्तु किसी भी दृष्टि से नगण्य नहीं, तकनीकी नियंत्रण की व्यवस्था की जाती है, जिसका अर्थ एक अच्छी फ़ैक्टरी में उपायों, कोटा और परिस्थितियों का जोड़ भी है। मानवीय क्रिया-कलाप को विनियमित करनेवाली उत्पादन-सम्बन्धी योजना सर्वाधिक जटिल साधन है। और इस साधन की जटिलताओं की जानकारी प्रदान करने के लिए ही अपने नागरिकों को प्रशिक्षित करना चाहिए, क्योंकि वे कुटीर उद्योग में नहीं, बल्कि तकनीकी कार्य-क्षमता के सर्वोच्च स्तर पर संगठित बड़े पैमाने के राजकीय उद्योग में लगे हुए हैं।

यह कहना आवश्यक है कि अब चूंकि हम इन दो व्यवस्थित फ़ैक्टरियों को चला रहे थे, इसलिए सिलाई वर्कशाप और मोचीखाने और यहां तक कि फ़र्नीचर तैयार करनेवाली शाप को भी, जहां हाथ से चीजें तैयार की जाती थीं क़ायम रखने की बात सोची भी नहीं जा सकती थी...

क्रमश: हमारा श्रम-प्रशिक्षण औद्योगिक प्रशिक्षण में विकसित हो गया और इस दिशा में मुझे अपनी आशा से बहुत अधिक सफलता मिली। और तो भी, कम्यून में अपने कार्य-काल के अन्तिम वर्षों में तेरह अथवा चौदह वर्ष के लड़के को मिलिंग मशीनों को चलाते हुए देखकर मुझे कोई आश्चर्य नहीं होता था, हालांकि इसके लिए सामग्री और कटर दोनों के गुण के परिपक्व ज्ञान की, ख़ाकों को पढ़ने की योग्यता की आवश्यकता है और इसके अतिरिक्त गणित का ज्ञान और प्रत्युत्पन्नमति अपेक्षित है।

निपुण मिलिंग मशीन आपरेटर होने के नाते चौदह अथवा पन्द्रह वर्ष के लड़के के एक समूह का इनचार्ज होने के अलावा सोलह अथवा सत्रह वर्ष का लड़का शाप मैनेजर भी होता था। यह सच है कि यह शाप अपेक्षाकृत अधिक आसान कामवाली होती थी, परन्तु १६ वर्ष की उम्र में उसे जटिल कामवाली शाप का इनचार्ज बनाया जाता था। मेरे एक समय के

"संदेशवाहक" वोलोद्या कोज़िर का जीवन-क्रम इसी प्रकार का था, जिसका काम पहले ढूंढ़कर किसी को मेरे सामने प्रस्तुत करना था।

इस रास्ते को पार करने में एक प्रौढ़ व्यक्ति को दस साल तक लग जाते, परन्तु एक लड़के अथवा लड़की को इसे पार करने में एक या दो साल से अधिक नहीं लगता। मैंने उनके लिए जो पथ चुना था, वह कठिन था, और शुरू में यह अविश्वसनीय प्रतीत हुआ कि वे इतनी तीव्र प्रगति करेंगे। जहां तक लड़कियों का सम्बन्ध है, मुझे यह कहना है : वे लड़कों की भांति शीघ्र ही स्ताख़ानोवपंथी स्तर पर पहुंच जाती हैं, लेकिन धातुकर्म में नहीं, वल्कि जुड़ाई, फ़िटिंग और अन्य हल्के शारीरिक काम, विशेष रूप से लेन्सों के उत्पादन में, अर्थात् जिस काम में सुनिश्चितता और सफ़ाई पर ज़ोर दिया जाता है, वे उन कार्यों में लड़कों से बेहतर थीं। डिज़ाइन करने में लड़कों की प्रतिभा उनकी विशेषता थी और जटिल प्रक्रियाओं में सूक्ष्मता तथा कुशलता लड़कियों की ख़ूबी थी। लेन्सों का उत्पादन उनका विशेष कार्य-क्षेत्र था, क्योंकि लड़के इस काम को पूरा करने में असमर्थ थे। सूक्ष्मतम पुर्ज़ों को फ़िट करने की प्रक्रिया में गति की सुनिश्चितता और तीव्र दृष्टि के अलावा पटल पर पुर्ज़े ठीक क्रम से रखने की आवश्यकता है। और इस प्रक्रिया तथा उत्पादन के संगठन में लड़कियां लड़कों को बहुत पछाड़ देतीं।

सामान्यतया हमारे लड़के त्याग की भावना से काम करनेवाले धातुकर्मी थे। इसके विपरीत लड़कियों में धातुकर्म से भावनाएं नहीं जागृत होती थीं। लोहा, तांबा, निकल को देखने और उनके स्पर्श से ही सदा एक लड़के के हृदय का स्पन्दन हो जाता था। इसके प्रतिकूल लड़कियों ने मिलिंग मशीनों और विशेष रूप से ऐसी मशीनों से अपने को दूर रखने की कोशिशें कीं, जहां उन्हें अपने कपड़े पर तेल और मैल लग जाने की आशंका बनी रहती थी।

हमारी छात्राओं ने ढलाईघर में काम करने की कभी कोशिश नहीं की।

ख़ैर, वे इस प्रकार के काम थे, जिन्हें मेरे समुदाय ने अपने अन्तिम साल में करना शुरू किया था।

यदि आप इस काम पर शैक्षणिक प्रक्रिया की परम्परागत समझदारी के दृष्टिकोण से विचार करेंगे, अर्थात् विद्यार्थी यहां है और उसका शिक्षक वहां है, तो शायद यह व्यवस्था ग़लत ढंग की लगे, परन्तु अगर आप

समुदाय के दृष्टिकोण से विचार करें और कुछ समय तक इसका अवलोकन करें, तो इसे आप बहुत रुचिकर पायेंगे।

सम्मिलित उत्पादन प्रक्रियाओं सहित कोई भी फ़ैक्टरी सभी रुचियों और रुझानों के व्यक्तियों के संतोष के लिए व्यापक अवसर प्रदान करती है।

'फ़ेद' जैसी फ़ैक्टरी में हमारे पास एक बड़ा डिज़ाइन कक्ष था, जहां दर्जनों नक्शा-नवीस काम में लगे रहते थे, इसके अतिरिक्त नियोजन विभाग, नियंत्रण विभाग, यंत्र-निर्माण शाप और एक व्यावसायिक विभाग था और इससे प्रत्येक विद्यार्थी को अपनी आकांक्षा की पूर्ति का साधन मिल जाता था। डिज़ाइन कार्यालय एकमात्र कम्यूनार्डों को काम पर लगाता था (डिज़ाइनर और नक्शा-नवीस)। जाहिर है कि केवल वे ही इस विभाग में काम करने जाते थे, जिन्हें इस काम में दिलचस्पी थी और जिन में इसके लिए प्रतिभा थी।

यंत्र-निर्माण शाप में उच्चतम योग्यता प्राप्त की जाती थी। सभी अन्य वर्कशापों और विभागों में काम कर लेने के बाद एक लड़के के औद्योगिक प्रशिक्षण में यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बात थी।

मैं इसे समझता हूं कि प्रत्येक अलग-अलग दृष्टि से एक व्यक्ति के चरित्र-निर्माण में उत्पादन की यह प्रक्रिया बहुत ही उपयोगी है। मेरे प्रशिक्षित कम्यूनार्ड, जो या तो विभिन्न संस्थानों में अध्ययन कर रहे हैं अथवा अपनी उच्च शिक्षा पूरी कर चुके हैं, अक्सर शहर से आकर मुझसे मिलते हैं। उनमें इतिहासज्ञ, भूगर्भशास्त्री, डाक्टर, इंजीनियर, डिज़ाइनर आदि हैं। परन्तु उन सब की अपनी एक समान विशिष्टता है—विचारों, आदतों, दृष्टिकोणों आदि की व्यापकता और बहुरूपता।

कुछ समय पहले उनमें से एक मुझ से मिलने आया, जो शल्यचिकित्सक है। मुझे याद है कि वह कम्यून में भारी ग्राइंडिंग मशीन को चलाते हुए एक ग्राइंडर के रूप में काम करता था, जिस में एक पुर्जे को बहुत ही सूक्ष्म आकार, एक मिलीमीटर के सौवें भाग तक सूक्ष्मता का आकार प्रदान किया जाता था। फ़ोरमैन उससे कहता :

"देखो, यहां से एक मिलीमीटर का सौवां भाग हटा लो।"

लड़का पुर्जे को चक में रख देता और किसी चीज़ का मिलान अथवा किसी मापक यंत्र का इस्तेमाल किये बिना वहां से एक मिलीमीटर का सौवां भाग हटा लेता।

10—2916

उसकी आंखें, हाथ और मशीनी औज़ार इतने अभ्यस्त तालमेल से काम करते कि उसके कार्य को जांचने की कोई ज़रूरत न होती। मशीनी औज़ार के बारे में उसका ज्ञान परिपक्व था। उत्कृष्ट ग्राइंडर अब एक शल्यचिकित्सक है और अब भी मैं उसके जीवन-दर्शन में सूक्ष्मता के प्रति उसके बड़े सम्मान की भावना को अनुभव करता हूं। अन्य भूतपूर्व कम्यूनार्डों का अवलोकन करते समय मैं उनमें उन मनोभावों और प्रवृत्तियों की अभिव्यक्ति पा सकता हूं, जो उन्होंने हमारे विभिन्न संगठनात्मक और औद्योगिक कामों के ज़रिये अर्जित की थीं।

एक ऐसे समुदाय को, जिसकी अपनी फ़ैक्टरी हो और इसके लिए जवाबदेह हो, संगठन का अभ्यास हो जाता है, जो सोवियत संघ के एक नागरिक के लिए शायद सबसे ज्यादा ज़रूरी है। प्रत्येक ग्राम सभा, कमांडरों के प्रत्येक उत्पादन-सम्बन्धी सम्मेलन, सामूहिक एवं निर्माणशालाओं की बैठकों अथवा सर्वथा प्रतिदिन की बातचीत में व्यवस्था करने की इस योग्यता का प्रयोग किया जाता है और अनिवार्यतः समुदाय प्रत्येक मज़दूर और प्रत्येक कम्यूनार्ड से दायित्वपूर्ण रुख अपनाने की अपेक्षा रखने का आदी हो जाता है। अगर आपको उत्पादन की सभी जटिलताओं को दृष्टि में रखना पड़ता है, तो उसी प्रकार आपको उत्पादन के प्रति एक व्यक्ति के मनोभावों की जटिलताओं को भी ध्यान में रखना चाहिए। ग्राम सभा में, जिस में यांत्रिक शाप, आप्टिकल शाप, मशीनों के पुर्ज़े बनानेवाली शाप और औज़ार-निर्माण शाप के प्रशिक्षार्थी उपस्थित रहते थे, उसमें फ़र्ज़ कीजिए कुछ पुर्ज़ों की न्यून सप्लाई का प्रश्न कोई उठा देता। मशीनों के पुर्ज़े जोड़ जानेवाले विभाग के लड़के मंच पर बोलने आ जाते और जिनका इस विषय से कोई सम्बन्ध नहीं था, उन्हें यह कहने के लिए निमंत्रित करते कि उनका इस सम्बन्ध में क्या विचार है। वे खड़े हो जाते और अपने सुझाव प्रस्तुत करते, मेरे कहने का अर्थ यह है कि वे यह समझते थे कि किन पुर्ज़ों की कम सप्लाई की गई है और उन्होंने संगठक के रूप में भाषण किए।

उन्होंने वर्कशाप में काम के दौरान अपनी संगठन-सम्बन्धी योग्यता का और भी अधिक इस्तेमाल किया। मिलिंग मशीनों को अपने चार्ज में लेते समय भी अच्छा संगठक और प्रबन्धक होना ज़रूरी है।

मैं महसूस करता हूं कि इस प्रकार के उत्पादन की व्यवस्था करना

ग्रासान काम नहीं है, परन्तु ग्राख़िरकार हम केवल ग्रासान चीजों की ही बात नहीं कर सकते। मुझे इस उत्पादन की व्यवस्था करने में कठोर श्रमसाध्य ग्रभावग्रस्त ग्रौर संघर्षपूर्ण सोलह साल लग गए। ख़ैर, मुझे विश्वास है कि यदि गंभीर उत्पादन-कार्य में लगने का किसी बाल-समुदाय का इरादा हो, तो उसे भी दस साल से कम समय नहीं लगेगा ग्रौर इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इसे विकसित करने के लिए संघर्ष करनेवाली पहली पीढ़ियां ग्रपने श्रम-फल का पूरा सुख उठाये बिना प्रशिक्षण प्राप्त करेंगी। हां, ग्रगली पीढ़ियों को इससे ज़रूर सुख प्राप्त होगा।

ग्रापको यह नहीं सोचना चाहिए कि पहली पीढ़ियों को यह बात ग्रखरेगी। जहां तक चरित्र-निर्माण ग्रौर काम के ग्रनुभव दोनों का सम्बन्ध है, बर्षों पूर्व निर्धारित ध्येय को प्राप्त करने का प्रयास ग्रन्ततः ग्रपने ग्राप में बहुत महत्त्वपूर्ण है। शायद इस सभी प्रक्रिया में मुख्य बात सामूहिक प्रयास, यह प्रगतिशील रुख ग्रौर सुनिश्चित ध्येय के प्रति ग्रग्रसर होना है।

मैं इस ख़्याल से प्रसन्न हूं कि मेरा समुदाय उन लक्ष्यों को सदा स्पष्टतः निर्धारित करता था, जिन्हें वह प्राप्त करना चाहता था, कि वह ग्रासानी से व्यवधान को पार नहीं करता था, बल्कि उसे रास्ते में कठिनाइयों, यहां तक कि ग़रीबी ग्रौर समुदाय के भीतर विवाद का भी सामना करना पड़ता था। ग्रौर यदि एक समुदाय सचमुच सुनिश्चित ध्येय की ग्रोर ग्रग्रसर हो, ग्रगर सजगता के साथ इन्हीं शब्दों का प्रयोग किया जाये, तो पगार का प्रश्न कम बुनियादी महत्त्व की बात हो जाता है। एक मेहनतकश समुदाय में, जहां श्रम उपलब्धियां स्पष्ट हैं, जहां कल्याण स्वतः स्पष्ट है, जहां मुनाफ़े की हर रक़म भावी संभावनाग्रों का द्वार उन्मुक्त करती है, वहां लोगों को ग्रपनी निजी ग्राय की प्रेरणा प्राप्त करना ग्रावश्यक नहीं होता।

बाद में पगार देने की प्रथा लागू की गई, परन्तु तो भी मैंने सामुदायिक भावना को क़ायम रखने ग्रौर किशोरों को पगार देने से जो नुक़सान पहुंच सकता था, उसे दूर करने का यत्न किया। वयस्क व्यक्ति के मामले में, जिसका ग्रपना परिवार हो ग्रौर उसके प्रति जिसकी ज़िम्मेदारी हो, पगार देने की बात भिन्न है। परन्तु किशोरों के एक समुदाय के प्रसंग में उनके लिए पोशाक ग्रादि की व्यवस्था करने में मैं कुछ भी उठा न रखूंगा। मैं उनके लिए, उनके वस्त्र, भोजन, निवास ग्रौर पढ़ाई के लिए

ज़िम्मेदार हूं। इस स्थिति में पगार किसी भी रूप में एक तरह का अतिरिक्त संतोष है और एक अच्छे समुदाय में वे बिना पगार के भी अतिरिक्त संतोष प्राप्त कर सकते हैं। उन्हें अपना पगार मुझे दे देने तथा मेरी अनुमति से इसे व्यय करने के प्रयास में मैं सफल हो गया। आम सभा ने इस आशय का प्रस्ताव पास किया। और कम्यूनार्ड ख़र्च के लिए नक़दी पगार पाने की अपेक्षा अपने बचत खाते में भविष्य के लिए अपने रुपए को जमा करने में अधिक उत्सुक थे।

पिछले समय हमने प्रत्येक कम्यूनार्ड के लिए कमांडर परिषद् कोष में अपने पगार का दस प्रतिशत दान देने का नियम बना दिया। यह कोई छोटी बात नहीं थी: प्रत्येक व्यक्ति के मासिक पगार से दस प्रतिशत ख़ासी रक़म होती थी।

और इस प्रकार हमने बहुत शीघ्र एक कोष का निर्माण कर लिया। यह किसी की निजी सम्पत्ति नहीं थी, इसे व्यय करने का अधिकार कमांडर परिषद् को था। सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्ति और भूतपूर्व कम्यूनार्डों को सहायता प्रदान करने के काम में मुख्यतः इस द्रव्य का उपयोग किया जाता था।

आप कल्पना भी नहीं कर सकते कि कमांडर परिषद् द्वारा इस प्रकार के निर्णय की घोषणा सुनकर कितनी ख़ुशी प्राप्त होती थी: "इवान वोल्चेन्को में संगीत-सम्बन्धी अच्छी प्रतिभा है, उसे संगीत विद्यालय में भेजना चाहिए और संगीत की शिक्षा प्राप्त कर लेने तक हम प्रतिमाह उसे १०० रूबल अतिरिक्त देंगे।"

द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में इस प्रकार के दर्जनों वज़ीफ़े प्रदान किये जाते थे। जिस साल मैं वहां से हटा, सौ लड़के-लड़कियों को अतिरिक्त मासिक वज़ीफ़े मिलते थे। यदि किसी के मां-बाप और सम्बन्धी हों, तो राज्य द्वारा प्रदत्त निर्वाह-वज़ीफ़ा पर्याप्त होता था। यदि एक व्यक्ति केवल अपने पर ही निर्भर हो, तो यह काफ़ी नहीं है। कम्यूनार्डों के लिए विद्यार्थियों को इस आधार पर पचास से सौ रूबल तक का वज़ीफ़ा देना कि वे अपना कार्य किस प्रकार कर रहे हैं और वे किस साल में हैं, अच्छा और मानवीय कार्य था।

इस कोष से उन भूतपूर्व कम्यूनार्डों को भी द्रव्य भेजा जाता था, जो ज़रूरतमन्द होते थे, बशर्ते कि इसका कारण आलस्य नहीं, हो। जब तक सभी प्रशिक्षित व्यक्ति अपने आप दुनिया में क़दम रखने

के लिए सर्वथा कुशल नहीं हो जाते थे, तब तक इस प्रकार के कोष की बदौलत कम्यून उनके भविष्य को क्रमबद्ध रख पाता था।

कम्यूनार्ड इस द्रव्य को अर्जित करते थे। मैं उनके साथ जितने साल रहा, एक बार भी मैंने खुले या किसी संकेत से एक भी कम्यूनार्ड को अपने पगार का दस प्रतिशत उक्त कोष में देने पर कुढ़ते हुए नहीं सुना। मैं आपको यह भी बता दूं कि इस कोष से प्रत्येक कम्यूनार्ड के लिए बिस्तर, कम्बल, ओवरकोट, ६ क़मीजें और एक सूट खरीदा जाता था, संक्षेप में घर से बाहर निकलते समय हर मां अपने बेटे के लिए जो कुछ खरीदती है, वे ही चीजें कम्यूनार्ड के लिए खरीदी जाती थीं।

इस प्रकार का कोष, जिसके द्वारा कम्यूनार्डों के जीवन का दिशा-निर्देश हो सकता है, हमारे ऐसे हज़ारों शैक्षणिक प्रमेयों से अच्छा है, जिनकी व्यावहारिक उपयोगिता की अभी परख होनी है।

उनके पगार का शेष ६० प्रतिशत बचत बैंक में सामान्यतया जमा कर दिया जाता था और प्रशिक्षण के समय तक प्रत्येक कम्यूनार्ड के पास एक हज़ार रूबल तक हो जाने की आशा रहती थी। कम्यून में वे नक़द रुपया नहीं पा सकते थे और बिना मेरे हस्ताक्षर के वे बैंक से कुछ भी नहीं निकाल सकते थे। ऐसे भी कम्यूनार्ड थे, जो हमारे साथ रहते हुए पांच या छः साल में अपना प्रशिक्षण पूरा करने तक दो–ढाई हज़ार रूबल तक बचाकर प्राप्त करते थे। उनके पगार का छोटा अंश जेबख़र्च के रूप में उन्हें दे दिया जाता था। हम हर साल यात्रा पर जाया करते थे। मैं इन यात्राओं को बहुत महत्त्वपूर्ण मानता था, जो साधारण यात्राएं नहीं, बल्कि अपने आप में बहुत बड़ा कार्य था। द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून के कम्यूनार्डों ने इस प्रकार की छः यात्राएं कीं। हम उनकी योजना इस प्रकार बनाते थे: पहले हम ट्रेन से जाते थे, उसके बाद कम-से-कम ८० से १०० किलोमीटर की यात्रा पैदल करते थे, खेमे गाड़ देते थे और वहां कुछ समय तक रहते थे और फिर उतनी ही दूर पैदल पीछे वापस लौटते थे और तब ट्रेन से शेष दूरी तै करके कम्यून वापस आते थे। पतझड़ में हम यह तय करते थे कि किस रास्ते से यात्रा करेंगे। अगली गरमी के मौसम के लिए इसी प्रकार की संभावना का होना बहुत महत्त्वपूर्ण होता था। जब आप भी गरमी की छुट्टी व्यतीत करने की योजना बनायेंगे, इसके बारे में सोचेंगे और इसके लिए

तैयारियां करेंगे, तो आपके सम्मुख भी ठीक इसी प्रकार की सुखद संभावना प्रस्तुत होगी। हमारा समुदाय इसी प्रकार अपनी तैयारी करता था। जब गरमी की छुट्टी के लिए हमारी फ़ैक्टरी बन्द होती थी, तो हम ठीक-ठीक यह जानते थे कि कैसे और कहां अपने अवकाश का समय व्यतीत करेंगे।

मैंने उन यात्राओं को बहुत ही उपयोगी पाया। मैंने शैक्षिक वर्ष के दौरान विभिन्न विद्यार्थियों तथा समुदाय को एकजुट कर सकने के आधार के रूप में भावी यात्रा का इस्तेमाल किया, मेरे कहने से वे इसके लिए द्रव्य बचाते थे और सांस्कृतिक कार्य आदि सहित विविध प्रकार की तैयारियां करते थे। उदाहरणार्थ, हमने जाड़े का एक पूरा मौसम अपनी काकेशिया – व्लादीकाव्काज़, त्बीलिसी, बातूमी – यात्रा की योजना बनाने में व्यतीत किया। यहां तक कि हमने अपने एक चर को सब कुछ पता लगाने के लिए भेजा, ताकि हम पहले से ही जान लें कि हमें कहां विश्राम और भोजन करना है। उक्त चर एक कम्यूनार्ड था। बाद के वर्षों में हम अपनी यात्राओं की विस्तृत योजना इस तरह तैयार करते थे कि उदाहरणतः हमें ज्ञात रहता था कि हम पांच सौ व्यक्ति ख़ार्कोव से बाहर जाने पर ठीक-ठीक किस मील के पत्थर के पास कम्यूनार्ड इवानोव कम्यूनार्ड पेत्रोव को आगे ले जाने के लिए तुरही पकड़ायेगा। इवानोव अकेले ४०० किलोमीटर लम्बे फ़ौजी जार्जियाई मार्ग पर इसे नहीं ले जा सकता था, हां जब उसे बजाना पड़ता था, तो वह उसे बजाता था, परन्तु दूसरे कम्यूनार्डों में प्रत्येक इसे दस किलोमीटर तक ढोता था। उनमें से प्रत्येक इसे ठीक-ठीक जानता था कि किस मील के पत्थर के पास उसे यह बाजा दूसरे को देना है और आगे ढोनेवाला व्यक्ति कौन है।

इस प्रकार की छोटी-मोटी बातों की योजना पहले से बनानी पड़ती थी, ताकि यात्रा में थकान न महसूस हो। और जहां तक अधिक आवश्यक बातों का सम्बन्ध है – कहां ट्रेन पकड़ी जाये, कहां रात व्यतीत की जाये, ताकि ठहरने के लिए कोई इमारत सुलभ हो, पास ही में पानी की व्यवस्था हो और ऐसे लोग सुलभ हों, जिनसे हम बातचीत कर सकें तथा मुलाक़ात हो सके – किसी को हर बार पहले से जाना पड़ता था और सभी बातों का पता लगाना पड़ता था।

हमारी यात्रा का सबसे लम्बा पथ – ख़ार्कोव, निज़्नी नोव्गोरोद, स्तालिनग्राद, सोची, ओदेसा, ख़ार्कोव था। इस यात्रा में छः सप्ताह लगे

ग्रौर इसमें काफ़ी सोच-विचार की ग्रावश्यकता थी। हम १५ दिन तक वोल्गा के जल-पथ से जहाज़ द्वारा सफ़र करते रहे ग्रौर प्रतिदिन कप्तान कम्यूनार्डों से पूछा करता था :

"क्या हम ग्रागे बढ़ें या रुक जायें ?"

"पूरी तेजी से ग्रागे कामा तक ग्रौर फिर पीछे ग्रोका वापस ग्राना है।"

उसने हम लोगों की ग्रनुमति से ही वोद्का भी पी। वह घोर शराबी था ग्रौर जब समारा के निकट जलपोत उथले पानी में फंस गया, तो उसके बाद हमें उसे ग्राम सभा के सम्मुख पेश करना पड़ा। निस्सन्देह, यह सब कुछ बड़े हास-परिहास की बातें थीं, परन्तु फिर भी हमने उससे यात्रा समाप्त होने तक न पीने का ग्रनुरोध किया।

प्रत्येक कम्यूनार्ड यात्रा के दौरान सुलभ होनेवाली चीज़ों को ख़रीदने के लिए ग्रपने जेबख़र्च से कुछ-कुछ बचाकर रुपये जमा रखता था। सामान्यतया यात्रा के दौरान कुछ ख़ास चीज़ें नहीं ख़रीदी जा सकती थीं ग्रौर लड़के-लड़कियां बटुग्रा, हैंडबैग ख़रीदते थे, लेमनेड पीते थे ग्रौर मिठाइयां खाते थे—ये सभी चीज़ें ख़ार्कोव में सुलभ थीं। परन्तु ख़ार्कोव की मिठाइयों की तुलना में उल्यानोव्स्क की उसी प्रकार की मिठाइयां ग्रधिक ग्रच्छी थीं।

वे किफ़ायत के साथ ख़र्च करने के लिए मेरे पास ग्रपने रूबल जमा कर देते थे। ग्रौर मैं यात्राग्रों में सदा काफ़ी द्रव्य, पचास ग्रथवा साठ हज़ार रूबल लेकर जाया करता था।

तो ग्राप ग़ौर कीजिए कि इन तरीक़ों से द्रव्य के लिए, पगार के लिए लालच की भावना कम करने में सहायता प्राप्त होती थी, जिससे वे सभी कारण पैदा हो जाते हैं, जो शैक्षिक प्रक्रिया को कठिन ग्रौर ग्रप्रिय बना देते हैं।

मैं ग्रापको यह बताना भूल ही गया था कि स्कूल ग्रौर उद्योग के सम्बन्धों के प्रश्न पर मैं किसी भी प्रकार के सम्पर्क के सदा ख़िलाफ़ रहा हूं ग्रौर इस कारण मुझे कोई कम परेशान नहीं किया गया। मैं ग्राज भी इसके विरुद्ध हूं, ग्रौर यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि किसी इलाक़े ग्रथवा बस्ती में एक दस-साला स्कूल हो, जो सार्वजनिक शिक्षा की जन-कमिसारियत की सभी ग्रपेक्षाग्रों की पूर्ति करता हो—ग्रौर ये ग्रपेक्षाएं दिन-

प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं—तो उत्पादन से इसका सम्बन्ध आवश्यक नहीं है, और यहां तक कि इस प्रकार के किसी सम्बन्ध का न होना ही उपयोगी होता है।

मुझे पक्का यक़ीन है कि स्कूल और उत्पादन के बीच सम्बन्ध क़ायम करने के बारे में जो उपदेश दिये जाते हैं, वह मिश्रित प्रणाली में बचा-खुचा विश्वास है, जिसे मैंने सदा नापसन्द किया, क्योंकि यह मेरा पक्का विचार है कि सम्बन्धों के स्वतंत्र गठन की निर्दिष्ट भूमिका को क़ायम रखना चाहिए और इस स्वतंत्र गठन से व्यक्तित्व उदार एवं अनुपम हो जाता है, जबकि जहां भी साझेदारी के सम्बन्ध के ज़रिये अधिकाधिक क्रियाशीलता की भावना पैदा करने की कोशिश की जाती है, तो केवल स्फूर्तिशून्य और अरुचिकर व्यक्तित्व का ही निर्माण हो पाता है।

इसलिए मैं अपने व्यावहारिक कार्य में अपने इस सिद्धान्त से एक ही बार डिग सका—प्रत्येक कक्षा के लिए एक सप्ताह में आलेखन के केवल दो घंटे का समय देना। शेष अन्य बातों में किसी भी दूसरे स्कूल की भांति हमारे स्कूल का संचालन शिक्षक परिषद् द्वारा होता था और उत्पादन से इसका कोई भी सम्बन्ध नहीं था। ज्ञान, विद्या और शिक्षण के प्रत्येक क्षेत्र में हमारे अपने नियम, अपेक्षाएं और लक्ष्य थे और सभी अवस्थाओं में इन आवश्यकताओं को पूरा करना पड़ता था।

फलतः सर्वथा उपयुक्त और स्वाभाविक सम्बन्ध क़ायम हुए। विद्यार्थी को उत्पादन, उसकी व्यवस्था और प्रक्रिया की अच्छी जानकारी हासिल हो जाती थी और इसके अलावा माध्यमिक शिक्षा पाकर वह एक शिक्षित व्यक्ति हो जाता था।

और जब सैद्धान्तिक विचार के प्रतिनिधियों ने इस पर आपत्ति की, तो मैंने उनसे कह दिया कि माध्यमिक शिक्षा और मिलिंग-मशीन आपरेटर की सर्वोच्च योग्यता में अनुपम सामंजस्य है और इसके साथ अन्य कोई योग्यता जोड़ने की आवश्यकता नहीं है। अन्ततः यह कोई शिकायत की बात नहीं है कि एक व्यक्ति मशीन को चलाना जानता है।

मेरा विश्वास है कि यदि पूर्ण रूप से विचार किया जाये, तो केवल पूर्ण माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने की स्थिति में ही चरित्र को नये सांचे में ढाला और बाल-अपचारी को सही रास्ते पर लाया जा सकता है। जैसा कि मैंने कहा है, दस-साला स्कूल की पूरी शिक्षा प्राप्त करने पर जो

विश्वास प्राप्त होता है, वह अधूरी माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने पर हासिल नहीं हो सकता।

हमारे शैक्षिक समुदाय में किस बुनियादी क़िस्म और चरित्र के व्यक्तियों का गठन होना चाहिए, अब मैं इस विषय पर कुछ कहूंगा। मेरे विचार से हम शिक्षकों को इस विषय पर अधिक चिन्तन करना चाहिए। मुझे पूरा विश्वास है कि सोवियत व्यक्तित्व को ख़ामियत पूंजीवादी समाज के व्यक्तित्व के लक्षणों से बुनियादी रूप में भिन्न है, इसलिए अनिवार्यत: हमारी शिक्षा भी भिन्न होनी चाहिए।

पूंजीवादी समाज में शिक्षा अलग व्यक्ति को जीवन-संघर्ष के अनुकूल बनाने तक सीमित है। और सर्वथा स्वाभाविक रूप से इस संघर्ष के उपयुक्त गुणों को व्यक्ति में विकसित करने की आवश्यकता होती है: चालाकी, कूटनीतिज्ञता, निजी स्वार्थों की पूर्ति के लिए संघर्ष करने की योग्यता, केवल अपने लिए प्रयास करने की क्षमता आदि।

और यह बिल्कुल स्वाभाविक है कि किसी भी पूंजीवादी स्कूल की भांति हमारे पुराने स्कूलों में भी पूंजीवादी समाज के लिए अनिवार्य पराश्रयता की यह भावना विकसित की जाती थी। उस समाज में पराश्रयता की शृंखला हमारे समाज के परस्परावलम्बन की शृंखला से सर्वथा भिन्न है।

आप अपनी पढ़ाई के दिनों की याद कीजिए। वस्तुत: किसी ने भी हम से स्पष्ट शब्दों में यह नहीं कहा कि हम धनी वर्ग और अधिकारियों पर आश्रित रहेंगे, परन्तु हमारी पुरानी शिक्षा का सारतत्त्व इसी विचार से परिपूरित था। और यहां तक कि जब हमसे कहा जाता था कि धनिकों को चाहिये कि वे ग़रीबों की सहायता करें, तो अच्छा प्रतीत होनेवाले वस्तुत: उस भव्य विचार में भी इस पराश्रयता का कुछ संकेत निहित रहता था, जो ग़रीब और धनी के बीच क़ायम है। यह विचार कि एक धनी व्यक्ति मेरी, एक ग़रीब व्यक्ति की सहायता करेगा, इसका द्योतक है कि उसके पास दौलत है, यदि वह चाहे, तो मेरी सहायता कर सकता है, जबकि मैं केवल उसकी मदद, उसके दान, एक धनी व्यक्ति की सहायता पर आश्रित रह सकता था। और मैं एक ग़रीब व्यक्ति केवल उसकी दया का पात्र था। इस प्रकार पराश्रयता की इस व्यवस्था की भावना से, जिसका हमें अपने जीवन में सामना करना पड़ता था, बहुत

प्रभावित कर दिया गया था। हैसियत, धन, दयालुता और निर्ममता पर निर्भरता – यह थी पराश्रयता की वह शृंखला, जिसके लिए लोगों को प्रशिक्षित किया जाता था।

हम भी अपने विद्यार्थियों को निर्भरता की निश्चित शृंखला के लिए तैयार करते हैं। यह सोचना भारी भ्रम है कि एक बार पूंजीवादी समाज की पराश्रयता की शृंखला, अर्थात् शोषण और भौतिक सुविधाओं के असम वितरण से मुक्त होने के बाद, एक विद्यार्थी किसी भी निर्भरता की शृंखला से पूर्णतया मुक्त हो जाता है। सोवियत समाज में निर्भरता की शृंखला भिन्न प्रकार की है, इस समाज के सदस्यों के परस्परावलम्बन से वे न केवल संयुक्त हो जाते हैं, बल्कि संगठित जीवन व्यतीत करते हैं और एक सुनिश्चित ध्येय को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। और हमारे इस संगठन में ऐसी प्रक्रियाएं एवं तत्त्व हैं, जो सोवियत जन की नैतिकता और उसके आचरण को निर्धारित करते हैं।

सोवियत समाज में रहनेवाले हम सभी लोग एक समुदाय के सदस्य के रूप में, अर्थात् निर्भरता की सुनिश्चित प्रणाली के अन्तर्गत रहनेवाले लोगों के रूप में विकसित और परिपक्व होते हैं। मैं नहीं जानता कि आया मैंने अपने काम में अन्तिम रूप से इस बात की छानबीन की है अथवा नहीं, परन्तु शिक्षा के इस पहलू में मेरी सदा सर्वाधिक अभिरुचि रही है। अनुशासन का उल्लेख करते समय संक्षेप में मैं इसकी भी चर्चा कर चुका हूं।

इस समस्या पर अधिक स्पष्टता के साथ ग़ौर करने के लिए, आइए, हम एक क्रियाशील समुदाय, मेरे कहने का अभिप्राय है एक भीड़ नहीं, बल्कि समुदाय, अर्थात् सुनिश्चित सामान्य लक्ष्यवाले समुदाय पर दृष्टिपात करें। इस समुदाय में निर्भरताएं बहुत ही अन्तर्ग्रस्त हैं, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति को दूसरों की आकांक्षाओं से अपनी आकांक्षाओं का मेल बिठाना पड़ता है: सर्वप्रथम पूरे समुदाय की आकांक्षाओं से और दूसरे, अपने प्रारम्भिक समुदाय की आकांक्षाओं से अपनी आकांक्षाओं का ऐसा मेल बिठाना पड़ता है कि उसका निजी लक्ष्य समुदाय के सामान्य लक्ष्यों के प्रतिकूल नहीं होता। फलत: सामान्य लक्ष्यों के आधार पर ही किसी के निजी लक्ष्यों का निर्धारण होना चाहिए। सामूहिक और निजी लक्ष्यों का यह तालमेल सोवियत समाज के चरित्र को अभिव्यक्त करता है। मेरे लिए

सामान्य लक्ष्य न केवल मुख्य एवं प्रधान लक्ष्य है, बल्कि वस्तुतः वे मेरे निजी लक्ष्यों से विजड़ित हैं। मेरा ख्याल है कि बच्चों के समुदाय के गठन का यही एकमात्र तरीक़ा है। मैं यह बात जोर देकर कहना चाहता हूं कि अगर भिन्न ढांचे को अपनाया गया, तो वह सोवियत शिक्षा नहीं होगी।

समुदाय के व्यवहार में निजी और सामुदायिक लक्ष्यों में वैषम्य और उन में सामंजस्य क़ायम करने की आवश्यकता ऐसी समस्याएं हैं, जो पग-पग पर पैदा होती हैं। यदि कोई असंगति को अनुभव करता है, तो इसका अर्थ है कि यह सोवियत समुदाय नहीं है, इसका अर्थ है कि गलत ढंग से यह संगठित है। केवल उसी समुदाय को सोवियत समुदाय कहा जा सकता है, जिस में समष्टि और व्यष्टि के हितों में सामंजस्य क़ायम रहता है और उन में जरा भी असंगति नहीं होती।

परन्तु दैनिक जीवन की, रोज़मर्रा की छोटी-मोटी घटनाओं से सम्पर्क क़ायम रखे बिना यह समस्या हल नहीं की जा सकती। अलग-अलग प्रत्येक कम्यूनार्ड और प्रत्येक पृथक् समुदाय के व्यवहार में ही इसको हल किया जा सकता है। मैं व्यवहार को ही कार्य की शैली कहता हूं। मेरा ख़्याल है कि शैक्षिक काम में शैली का प्रश्न इतना महत्त्वपूर्ण है कि इस बारे में विशेष निबन्ध लिखे जाने चाहिए।

आइए, हम कम्यूनार्डों के एक-दूसरे के प्रति सम्बन्ध, एक लड़के के दूसरे लड़के के प्रति रुख़ के प्रश्न पर भी कुछ विस्तार से ग़ौर करें। ऐसा प्रतीत होता है कि यह सवाल कोई नया नहीं है, परन्तु फिर भी हमारे शिक्षाशास्त्रीय सिद्धान्त में इसका केवल अस्पष्ट जवाब दिया गया है। क्रान्तिपूर्व शिक्षाशास्त्र में यह सवाल शायद ही पैदा हो सकता था। क्रान्तिपूर्व समाज की भांति क्रान्तिपूर्व शिक्षाशास्त्र में लोगों के सम्बन्ध एक व्यक्ति के दूसरे व्यक्ति के प्रति सम्बन्ध के रूप में समझे गए, अर्थात् दो स्वतंत्र एवं पृथक् दुनिया के रिश्ते माने गए और एक अच्छे व्यक्ति, एक दयाशील व्यक्ति अथवा इस या उस प्रकार के व्यक्ति को विकसित करने की चर्चा की जा सकती थी।

हम अपने शिक्षाशास्त्र में एक साथी को शिक्षित करने, एक समुदाय के सदस्य के दूसरे समुदाय के सदस्य के प्रति रुख़ और ऐसे सदस्यों की चर्चा कर सकते हैं, जो शून्य अन्तरिक्ष में मनमाने ढंग से विचरण नहीं

करते, बल्कि समुदाय के प्रति अपने दायित्वों अथवा अपने सम्बन्धों, समुदाय के प्रति अपने कर्त्तव्य, समुदाय के सदस्य के नाते अपनी प्रतिष्ठा और समुदाय के सम्बन्ध में अपने कार्यों से बंधे हुए हैं। एक समुदाय के सदस्यों के दूसरे समुदाय के सदस्यों के प्रति इस संगठित रुझान को हमारे शैक्षिक ढांचे में निर्णायक भूमिका अदा करनी चाहिए।

एक समुदाय क्या है? यह केवल भीड़ अथवा परस्पर प्रभाव डालनेवाले व्यक्तियों का समूह नहीं है, जैसा कि पेडालोजी विशेषज्ञ बताया करते थे। यह एक स्पष्ट उद्देश्य का अनुसरण करनेवाले और अपने सामुदायिक संगठनों से नियमित व्यक्तियों का एक संगठित समूह है। यदि एक समुदाय समुचित रूप से संगठित हो, तो इसके पास सामुदायिक निकाय और समुदाय के प्रतिनिधियों द्वारा अधिकृत संगठन होगा और अपने साथी के प्रति एक व्यक्ति का रुझान दोस्ती, स्नेह अथवा अच्छी निकटता का प्रश्न नहीं, बल्कि दायित्वपूर्ण निर्भरता का सवाल है। अगर साथी समान हैसियत के हों, कन्धे से कन्धा मिलाये हुए चल रहे हों और प्रायः एक ही प्रकार का काम कर रहे हों, तो भी वे केवल दोस्ती से नहीं, बल्कि धन्धे के प्रति अपने सामूहिक दायित्व और समुदाय के काम में अपनी संयुक्त साझेदारी द्वारा एक-दूसरे से सम्बद्ध हैं।

उन साथियों के सम्बन्ध विशेष अभिरुचिपूर्ण हैं, जो एक ही कार्य क्षेत्र में नहीं, बल्कि विभिन्न कार्य क्षेत्रों में संलग्न हैं और उन साथियों के सम्बन्ध इससे अधिक अभिरुचिपूर्ण हैं, जो एक-दूसरे पर समान रूप से निर्भर नहीं हैं, क्योंकि एक-दूसरे के आधीन काम करता है। बच्चों के एक समुदाय में समानता के नहीं, बल्कि मातहती के सम्बन्धों को पैदा करना सबसे कठिन काम है। हमारे शिक्षक सबसे अधिक इसी से डरते हैं। एक विद्यार्थी को अपने साथी की आज्ञा मानने की क्षमता प्राप्त करनी चाहिए, उसे केवल आज्ञा ही नहीं माननी चाहिए, बल्कि आज्ञा मानने की क्षमता भी प्राप्त करनी चाहिये।

और इसी प्रकार उसे यह भी जानना चाहिए कि अपने साथी को कैसे आदेश दिया जाता है, अर्थात् कैसे उसे कुछ काम सौंपा जाता है और उसे पूरा करने की अपेक्षा की जाती है।

एक साथी की आज्ञा मानने की क्षमता—शक्ति, धन अथवा दयालुता के सम्मुख नतमस्तक होने की नहीं, बल्कि एक समुदाय के समानाधिकार-

प्राप्त सदस्यों के रूप में एक-दूसरे की आज्ञा स्वीकार करने की क्षमता—केवल बाल-समुदाय में नहीं, बल्कि प्रौढ़ों के समाज में भी पैदा करना बहुत ही कठिन चीज़ है। यदि पुराने दर्शन के कुछ चिन्ह शेष हैं, तो स्पष्टतः वे इसी प्रसंग में दृढ़ता से अभी क़ायम हैं। एक व्यक्ति केवल समुदाय के निर्देश के अनुसार अपने ही समान अन्य व्यक्ति को आदेश देना कठिन महसूस करता है। परन्तु वह अपने साथी को आदेश देने, उसे कोई काम सौंपने, उसे क्रियाशील होने के लिये उत्प्रेरित करने और उसके लिये जवाबदेह होने तभी समर्थ होगा, जब वह समुदाय के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी महसूस करेगा और जब वह समझ लेगा कि साथी को आदेश देते हुए वह समुदाय की इच्छा का पालन कर रहा है। इस में निर्भरताओं की जटिलता बहुत ही सन्निहित है। यदि वह इन में से कोई बात अनुभव नहीं करता, तो वह अपनी निजी अहंमन्यता, प्रभुत्व और अधिकार के प्रति अपनी चाह तथा हमारी दृष्टि से हेय रुझानों के अतिरिक्त और कुछ नहीं महसूस कर सकता।

मैंने इस बात के इस पहलू पर विशेष ध्यान दिया। और इसी कारण मैं समुदाय के भीतर निर्भरता और मातहती के बहुत ही जटिल ढांचे को लागू करने को तैयार था। ड्यूटी पर तैनात कमांडर को ही लीजिए: आज वह समुदाय को नियंत्रित करता है और कल उसे ऐसे लड़के अथवा लड़की की आज्ञा माननी पड़ती है, जिसे वह आज काम सौंपता है। मैं जिस शिक्षा प्रणाली की चर्चा कर रहा हूं, उसे स्पष्ट करने के लिए यह उत्कृष्ट उदाहरण है।

इस प्रसंग में मैं इससे भी आगे गया, इस उद्देश्य से कि मातहती और पद-मर्यादा में बहुशः सामंजस्य स्थापित होता जाये, मैंने यथासंभव विभिन्न प्रतिनिधियों की निर्भरताओं को अन्तर्गठित करने की कोशिशें कीं।

इसी कारण मैंने एक ही व्यक्ति द्वारा प्रबंध के अधिकार पर प्रारंभिक समुदायों की व्यवस्था की और यह अधिकार मैंने कमांडर को दे दिया। मैंने यथासंभव अधिकाधिक कमांडरों को रखने के लिये समुदाय को दस व्यक्तियों की टुकड़ियों में विभाजित करने की कोशिश की; मैंने यथासंभव अधिकाधिक आयोगों को गठित करने का भी प्रयास किया और बाद में मैंने एक अन्य ढंग—अलग-अलग व्यक्तियों को कार्य सौंपने का तरीक़ा अपनाया।

इस ढंग को प्रयोग में लाने का एक भी मौक़ा मैंने नहीं खोया। मैं इस सम्बन्ध में जिस पहले उदाहरण को सोच सकता हूं, उसे आपके सम्मुख प्रस्तुत करूंगा। फ़र्ज़ कीजिए नये लड़के-लड़कियों के आने के फलस्वरूप पुनःवर्गीकरण आवश्यक हो जाने पर विद्यार्थियों को एक शयनागार से दूसरे शयनागार में हटाना पड़ता। इसका उल्लेख कर देना चाहिए कि नवागन्तुकों को सदा पुरानी टुकड़ियों में बांट दिया जाता था। कमांडर परिषद् यह निर्णय करती थी कि अमुक समय पर एक शयनागार से दूसरे शयनागार में हटने का काम शुरू होगा। केवल बिस्तर अपने साथ हटाया जा सकता था; चारपाइयां, मेज़ें, तस्वीरें और सन्दूक़ें जहां की तहां छोड़ दी जाती थीं। एक लड़का, उसे कोज़िर के नाम से पुकार लीजिए, हटने की व्यवस्था करने के लिए ज़िम्मेदार बना दिया जाता था। शुरू में वह इसे बहुत कठिन काम महसूस करता था। लड़के उसकी आज्ञा मानने से इनकार कर देते थे, वे हाथ हिलाकर उसकी आज्ञा को टाल जाते थे और वह समझ नहीं पाता था कि कैसे इन चार सौ लड़के-लड़कियों को आज्ञा मानने को मजबूर किया जाये।

बाद के वर्षों में मैंने ऐसी समुचित व्यवस्था कर दी कि केवल कोज़िर ही नहीं, बल्कि दूसरों को भी ज्ञात हो गया था कि उन्हें क्या करना है। अपनी उंगली के इशारे से, एक दृष्टि से अथवा अपनी तनी हुई भृकुटी से हटने की व्यवस्था को नियंत्रित करते हुए कोज़िर गलियारे में खड़ा रहता था और सभी इसे महसूस करते थे कि सफलता की ज़िम्मेदारी कोज़िर पर थी, अगर कोई सर्वोत्कृष्ट चित्र को अपने नये शयनागार में उठा ले जाये, तो इसके लिए कोज़िर जवाबदेह होगा, उसे अपने कर्त्तव्य की उपेक्षा करने के लिए जवाब देना होगा।

फ़र्ज़ कीजिए कि शाम की किसी ट्रेन से मुझे पथ से भटके हुए बीस लड़कों को उतारकर लाना था। कमांडर परिषद् इस कार्य के लिए सदा पांच या छः व्यक्तियों की एक टोली का चयन करती थी। मान लीजिये कि ज़ेम्ल्यान्स्की इस टोली का कमांडर नियुक्त हुआ। वह अच्छी तरह इसे समझ जाता कि वही कमांडर है और पांच या छः व्यक्तियों की टोली बिना चूं किए फ़ौरन उसके आदेशों का पालन करती थी। इस व्यवस्था से उन्हें कुछ प्रसन्नता होती थी, उनके पथ-प्रदर्शन के लिए किसी मुख्य

व्यक्ति के होने और उनके लिए उसे दायित्व ग्रहण करने का विचार वे पसन्द करते थे।

और ज़ेम्ल्यान्स्की यह समझ जाता था कि सारा काम उसे सौंप दिया गया है और टोली भी इसे अच्छी तरह समझ जाती थी। रेलगाड़ी के डिब्बों तथा दूसरी जगहों में पथभ्रष्ट बच्चों से वे झूठमूठ रें-रें करनेवाले कमज़ोर बच्चों को नहीं, बल्कि भरोसा करने लायक़ लड़कों को चुन लेते थे। ज़ेम्ल्यान्स्की के ज़िम्मे यह काम था। मैं कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकता था। उसे यह काम पूरा करने के लिए सौंपा गया था और वह अपने कार्यों के लिए जवाबदेह था।

वास्तव में मुझे समय का अभाव था, परन्तु बावजूद इसके कि चाहे जितनी देर हो गई हो, चाहे मैं जितना थका हूं, मैं उसकी रिपोर्ट को सुनने और उसके काम को संतोषप्रद, अच्छा अथवा असंतोषप्रद निर्धारित करने का मौक़ा हाथ से कभी नहीं जाने देता था।

कम्यून में किसी न किसी कम्यूनार्ड को दायित्व के अभ्यास के लिए कुछ काम सौंपने के मौक़े के बिना एक दिन भी नहीं गुज़रा। सामान्यतया विभिन्न टुकड़ियों की ओर से उसे कई सहायक दिये जाते थे। मान लीजिए कुछ लड़के आपस में लड़ पड़े और उन्होंने झगड़े का निबटारा करने से इनकार कर दिया। एक साथी तत्काल झगड़े के कारणों का पता लगाने, लड़कों को झगड़ा निबटाने के लिए तैयार करने और इसके बाद इस मामले में अपने कार्यों की ज़िम्मेदारी निभाने के लिए नियुक्त किया जाता था।

गंभीर दायित्व अनेक समस्याओं के समाधान का साधन था। यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि टुकड़ी के सामान्य काम के अलावा यह सब कुछ अतिरिक्त कार्य था। वास्तव में एक टुकड़ी अपने कार्यों के लिए जवाबदेह थी।

मैंने इसे ध्यान से देखा कि कुछ बाल-सदनों में इसी ढंग से काम संगठित करने के लिए सावधानी बरती जाती थी, परन्तु किसी ने कार्य-कुशलता और सख़्त दायित्व की अपेक्षा रखने का कष्ट नहीं उठाया। किन्तु बिना ज़िम्मेदारी के कोई वास्तविक काम नहीं हो सकता। यह उद्योग में काम के प्रति, स्कूल में अध्ययन के प्रति और संयुक्त टीम के एक सदस्य के नाते अपने कर्त्तव्यों के प्रति, दायित्वपूर्ण रुख की अपेक्षा रखने के समान महत्त्वपूर्ण है। स्नानगृह में जाने के समान छोटी बात को ही लीजिए: वहां

भी किसी को इसका इनचार्ज बनाना चाहिए। पूरे समुदाय के दायित्व के साथ इस व्यक्तिगत ज़िम्मेदारी का सामंजस्य होना चाहिए। अगर यह समन्वय न क़ायम किया गया, यदि ज़िम्मेदार व्यक्तियों के बीच पूर्ण तालमेल स्थापित न हुआ, तो सारी बात खिलवाड़ के अतिरिक्त कुछ नहीं हो सकती।

इन्हीं सब तरीक़ों, इन्हीं सब नियत कार्यों के ज़रिए कार्य की शैली, समुदाय की शैली गठित की जाती है। जैसा कि मैं पहले ही कह चुका हूं इस विषय पर निबन्ध लिखे जाने चाहिए।

मेरा विचार है कि सोवियत बाल-समुदाय में कार्य-शैली की निम्नांकित विशेषताएं होनी चाहिए:

सर्वप्रथम उल्लासपूर्ण भावनाएं होनी चाहिए। मैं इस गुण को बुनियादी बात मानता हूं। सतत धैर्यशीलता, उदास व मनहूस चेहरे नहीं, विक्षुब्ध अभिव्यक्तियां नहीं, कार्य के लिए सतत तत्परता और अच्छी मनोवृत्ति, मेरे कहने का अर्थ है, दिखावे की चुहल नहीं, बल्कि प्रसन्न और प्रफुल्ल मनोभाव। बाल-समुदाय के सदस्यों को उपयोगी काम, उद्देश्यपूर्ण दिलचस्प और विवेकपूर्ण कार्य करना चाहिए तथा कभी भी आवारागर्दी, चीख-चिल्लाहट एवं पशु-तुल्य व्यवहार नहीं करना चाहिए।

मैं चीखने, शोर करने और दौड़-धूप जैसे व्यवहार को बहुत ही नापसन्द करता हूं। द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून में, जहां हमारे पास पांच सौ लड़के-लड़कियां थीं, कभी आपको कोई शोरगुल नहीं सुनाई पड़ सकता था। परन्तु इसके बावजूद आप उन्हें सदा प्रसन्न, उत्फुल्ल आशान्वित और विश्वासपूर्ण देख सकते थे।

इस में कोई सन्देह नहीं है कि यह प्रसन्नता किसी विशेष तरीक़े से नहीं पैदा की जा सकती: यह सर्वोपरि रूप में समुदाय के काम के फलस्वरूप प्राप्त होती है, जिसकी चर्चा मैं पहले कर चुका हूं।

शैली की दूसरी विशेषता आत्मसम्मान की भावना है। निस्सन्देह, यह तत्काल नहीं पैदा की जा सकती। समुदाय के महत्त्व की समझदारी, अपने निजी समुदाय में गर्व की भावना से अपने में यह भावना पैदा होती है।

अगर आप कम्यून में पधारें, तो बड़ी विनम्रता, बड़े सौजन्य के साथ आपका स्वागत किया जायेगा। यह अनोखी बात होगी कि कोई भी लड़का

बिना अभिवादन किये आपके पास से गुज़र जाये। आपकी भेंट जिस पहले व्यक्ति से होगी, वह निश्चित रूप से कहेगा :

"आप कैसे हैं? कृपया बताइये कि आप किससे मिलना चाहते हैं?"

और सभी सावधान होते हैं।

"आपका शुभनाम क्या है, और आप किस काम से पधारे हैं?"

कम्यून के बारे में आपसे कोई शिकायत नहीं करेगा। इस प्रसंग में मैंने कुछ आश्चर्यजनक बातों का अवलोकन किया है। एक ऐसे कम्यूनार्ड को ही लीजिए, जिसे किसी बात के लिए डांटा गया हो और जो अभी काफ़ी परेशान हो। अचानक उसकी भेंट एक अजनबी, एक आगन्तुक से हो जाये। तत्काल उस में परिवर्तन आ जायेगा, वह प्रसन्न और उल्लसित नजर आयेगा तथा आप जहां भी जाना चाहेंगे, वहां आपको ले जाने के लिए तैयार हो जायेगा। यदि अन्दर के लिए अनुमतिपत्र की ज़रूरत होगी, तो वह कहेगा :

"कृपया इजाज़तनामा लेने के लिए मेरे साथ आइए।"

अगर वह अपनी निजी परेशानियों, अथवा उधेड़-बुन में होगा, तो भी वह उन सभी बातों को उस समय गौण समझेगा और आपको कभी यह भांपने भी न देगा कि एक मिनट पहले वह दुःखी था। यदि आप उससे पूछेंगे :

"कहो, क्या हालचाल हैं?"

वह उत्तर देगा :

"बहुत ठीक है।"

वह ख़ुश करने के लिए नहीं, बल्कि समुदाय के प्रति अपने दायित्व की भावना महसूस करने के कारण ऐसा करता और दण्ड पाने के बावजूद भी अपने समुदाय पर उसे गर्व होता।

अथवा फिर यह फ़र्ज़ कीजिए कि एक लड़के को किसी ग़लती के लिए सजा दी गई है और तभी दर्शक-मंडली पहुंच गयी।

"कितना अच्छा लड़का है! क्या वह ठीक ढंग से काम कर रहा है?"

कोई इस बारे में एक शब्द भी नहीं कहता कि उसे सज़ा दी गई है। यह बुरी प्रवृत्ति समझी जाती थी, उनका दृष्टिकोण यह होता है कि यह अपना मामला है और आगन्तुकों को हम उसे नहीं बतायेंगे।

इस मर्यादापूर्ण वातावरण को पैदा करना बहुत कठिन है, वर्षों में

यह पैदा होता है। निस्सन्देह प्रत्येक आगन्तुक के प्रति, प्रत्येक साथी के प्रति पूर्ण विनम्रता का व्यवहार होना चाहिए। परन्तु इस विनम्रता के साथ ही समुदाय में अजनवियों, मटरगश्ती करनेवाले आवारों और सबसे अधिक शत्रुओं के चुपके से घुसने के प्रयासों का प्रतिरोध करने की तत्परता भी होनी चाहिए। और इसी कारण, गोकि कम्यूनार्ड बड़ी विनम्रता के साथ आगन्तुक का अभिवादन करते और जहां भी आप जाना चाहते, वहां आपको ले जाते, वे सबसे पहले आपसे यह पूछते :

"आप कौन हैं? आप किस काम से आये हैं?"

और यदि वे महसूस करते कि वहां आपके आने का कोई वास्तविक कारण नहीं है, तो वे उसी प्रकार विनम्रता के साथ आपसे कहते :

"हमें दुःख है, हम आपको अन्दर नहीं जाने देंगे। परन्तु यदि आप किसी कार्यवश अगली वार आयेंगे, तो बड़ी ख़ुशी के साथ आपको अन्दर आने देंगे।"

ऐसे आवारागर्दों की कभी कोई कमी नहीं थी, जो निष्प्रयोजन केवल मटरगश्ती के लिए वहां आना चाहते थे।

इस प्रकार की विनम्रता सर्वाधिक मूलभूत योग्यता से प्रादुर्भूत होती है, जिसे हमें अपने प्रत्येक नागरिक में विकसित करनी चाहिए। यह परिस्थिति को भांपने की योग्यता है। शायद किसी बाल-समुदाय या भीड़ में इसकी कमी की ओर आपका ध्यान गया हो। एक व्यक्ति उसी चीज़ को देखता है, जो उसकी आंखों के सामने हो और उस पर ध्यान नहीं जाता, जो उसके पीछे छिपा हुआ रहता है।

आपके इर्द-गिर्द क्या हो रहा है, आप किससे परिवृत हैं, दूसरे कमरों में क्या हो रहा है, जिन्हें आप नहीं देख सकते, उसे महसूस करने, जीवन के लहजे को, उस ख़ास दिन के व्यवहार को अनुभव करने की योग्यता प्राप्त करना बहुत कठिन है और इसके लिये बहुत प्रयास तथा सतत चिन्तन अपेक्षित है। हम बाल-समुदाय में अक्सर जो शोरगुल सुनते हैं, उससे परिस्थिति भांपने की भावना की पूर्ण कमी, स्वयंभाव और अपनी ही गति के अनुभव के अलावा और कुछ नहीं सिद्ध होती है। वातावरण का कोई अनुभव नहीं होता। परन्तु वास्तविक सोवियत नागरिक को पूरी दृढ़ता के साथ यह अनुभव करना चाहिए कि उसके इर्द-गिर्द क्या हो रहा है। पुराने दोस्तों के बीच होना एक भिन्न बात है। उस स्थिति में आप किसी

ख़ास ढंग से व्यवहार करने के लिए स्वतंत्र हैं। परन्तु नये विद्यार्थियों के बीच होना बिल्कुल दूसरी बात है, जिन में से कुछ केवल कल ही लाये गये हों। यदि कम्यूनार्ड को यह ज्ञात हो, तो नवागन्तुकों को जो बातें नहीं बतानी चाहिये, वह उनसे कुछ भी नहीं कहेगा। अथवा फिर यह फ़र्ज़ कीजिये कि एक महिला या एक युवती पास से गुज़र रही हो। वह उसके लिए नगण्य है, परन्तु फिर भी उसे परिस्थिति के अनुकूल व्यवहार करना चाहिए। यदि मैं वहां कहीं आस-पास हूं, तो कम्यूनार्ड को यह जानना तथा महसूस करना चाहिए कि समुदाय का प्रधान, मैं, वहां पास ही हूं। यदि कोई अन्य, एक शिक्षक, एक प्रशिक्षक, एक इंजीनियर अथवा एक अधिकारी हो, तो भी उसे परिस्थिति के अनुकूल व्यवहार करना चाहिए।

इसका अर्थ यह नहीं है कि उसे किसी के अनुकूल अपने को ढालना अथवा किसी का कृपापात्र बनना है। इसका मतलब यह है कि समुदाय के विभिन्न सदस्यों को यह अनुभव करना है कि आवेष्टित करनेवाली विभिन्न परिस्थितियों में उसका व्यवहार कैसा होना चाहिए।

मैंने इसे देखा है कि बाल-सदनों में रहनेवाले अधिकांश लड़के-लड़कियां आगन्तुकों से बातचीत करते समय अनुचित लहज़ा अपनाते हैं। जिस व्यक्ति को उन्होंने पहले कभी देखा भी नहीं है, उससे शिक्षकों, अधीक्षकों और एक-दूसरे के ख़िलाफ़ शिकायतें करते हुए अपनी तकलीफ़ों की कहानी सुनाने लगते हैं। मैंने अजनबियों को रामकहानी सुनाने की यह आदत दूर करने का काम शरू किया। स्वयं अपने दोष-गुण पर विचार करने की बात तो ठीक थी, परन्तु किसी भी अजनबी की उपस्थिति में कष्ट-कथा सुनाना, शिकायत करना और, जैसा कि कम्यूनार्ड कहा करते थे, चीखना-चिल्लाना बर्दाश्त नहीं करना चाहिये।

कम्यूनार्ड अक्सर किसी न किसी बात से नाख़ुश रहते थे। वे कमांडर परिषद् में अपनी शिकायतों की चर्चा करते थे, परन्तु वे अजनबियों से कभी भी कोई शिकायत नहीं करते थे, जिनके सम्मुख समुदाय को पूर्णतया अविभक्त रूप में अपने को प्रस्तुत करना था। शिकायत करने की प्रवृत्ति आत्म-आलोचना करने के समान नहीं है। यह किसी उस व्यक्ति की मनोदशा की द्योतक है, जो समुदाय में अपने को दुःखी महसूस करता है, इससे प्रकट होता है कि स्वयं समुदाय और इसके कुछ सदस्यों को

झूठमूठ रें-रें करने की आदत हो गई है। आत्मविश्वास की भावना को समुदाय में प्रमुख स्थान देना है और वह उसकी शैली सुन्दर बनाने में समर्थ है। अलग-अलग प्रत्येक व्यक्ति से अपेक्षाएं रखते हुए, डराने-धमकाने, परेशान करने तथा छोटे-मोटे अत्याचारों के विरुद्ध प्रत्येक व्यक्ति को सुरक्षा की भावना प्रदान कर समुदाय में गर्व के ज़रिये इसे विकसित करना है।

आत्मविश्वास की यह भावना अनुभव से प्राप्त होती है। मैंने इस भावना को पैदा करने में इतनी सफलता प्राप्त की कि दस अथवा बारह साल के सबसे अधिक कमज़ोर स्वभाव के लड़के-लड़कियां भी समुदाय के सयाने सदस्यों से अपने को हीन नहीं समझते थे। जहां तक काम का सम्बन्ध था, तो वे जरूर यह समझते थे कि वे छोटे हैं, परन्तु व्यक्तियों के रूप में वे अपने को हीन नहीं मानते थे। उन में आत्मविश्वास था, क्योंकि वे अपने को पूर्णतया सुरक्षित महसूस करते थे, वे यह अनुभव करते थे कि कोई भी उन्हें आघात नहीं पहुंचा सकता, क्योंकि यदि उसे किसी अनिष्ट का ख़तरा रहता, तो उससे उसको उसकी टुकड़ी, उसकी कार्य-टोली, ख़ुद मैं और इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि उसे दिखाई पड़ जानेवाला पहला साथी बचाता था।

स्पष्ट रूप से यह प्रकट होगा कि आत्मविश्वास की भावना अपने आप नहीं पैदा होती, इसे पैदा करना पड़ता है, इसके लिए प्रयास करना पड़ता है। तीव्र उत्साह, स्फूर्ति, क्रियाशीलता और गति को प्रोत्साहन प्रदान करने के साथ ही विद्यार्थियों को आवश्यकतानुसार गति धीमी करने, संयम की शिक्षा भी देनी चाहिए। साधारण कोटि का शिक्षक यथार्थतः इस गुण को बिरले ही अपना पाता है। अपने ऊपर और विशेष रूप से बचपन में नियंत्रण लगाना बहुत कठिन बात है। यह स्वतःस्फूर्त रूप से पैदा नहीं होता, इसलिए इसे सिखाना पड़ता है। और इसकी शिक्षा देने का दायित्व शिक्षक पर है, क्योंकि एक बच्चा अपने मन से इस गुण को कभी भी विकसित नहीं कर सकता। एक व्यक्ति को हर क़दम पर अपने को संयम में रखना चाहिए, और यह आदत बन जानी चाहिये। प्रत्येक शारीरिक एवं मानसिक क्रिया और विशेष रूप से बहस तथा झगड़ों में संयम अभिव्यक्त हो जाना चाहिए। हम अक्सर यह देखते हैं कि केवल इस गुण की कमी के कारण बच्चे आपस में लड़ा करते हैं। और हमारे कम्यूनार्डों ने यह

अच्छी तरह महसूस कर लिया था कि आत्मनियंत्रण के बिना एक व्यक्ति टूटे हुए इंजन के समान है।

एक बच्चे में अपने साथी की आज्ञा मानने का गुण विकसित करना बहुत कठिन काम है। समुदाय के कल्याण की गंभीर चिन्तना से इस लक्ष्य को प्राप्त करने में मुझे सहायता मिली। बच्चों के संयम से बाहर होने के पहले ही मैं नियंत्रण लगा देता – रोक देता – और इस प्रकार झगड़ा नहीं होने पाता। झगड़ों और इससे भी अधिक मारपीट, दोषारोपण और चुगलख़ोरी दूर करने में मुझे सफलता मिली। और मेरी सफलता का एकमात्र कारण यही था कि वे आवश्यकतानुसार गति पर नियंत्रण लगाना, संयम की भावना अपनाना जानते थे, मैं यह कहते हुए कि तुम ठीक हो और तुम ग़लत हो, उनके पीछे नहीं पड़ जाता था।

आप सभी लोग यह अच्छी तरह समझते हैं कि मैं किन बातों की ओर संकेत कर रहा हूं और इसके क्या नतीजे हो सकते हैं। इस में कोई सन्देह नहीं है कि बाह्य व्यवहार के नियम और क़ायदे को मिलाकर सामुदयिक जीवन का प्रत्येक पहलू इस शैली और उसकी विशेषताओं से परिपूर्ण होना चाहिये। मेरे काम का विश्लेषण करते समय कइयों ने बाह्य व्यवहार के नियमों का मज़ाक़ उड़ाया और उन्हें स्वीकार करने से इनकार किया।

मैं आज भी इसे बहुत ही महत्त्वपूर्ण नियम मानता हूं कि एक कम्यूनार्ड को सीढ़ियों की रेलिंग को पकड़े बिना चलना चाहिए, कि उसे दीवाल के सहारे नहीं खड़ा होना चाहिए अथवा मुझसे या अन्य किसी व्यक्ति से इस ढंग से खड़े होकर बात नहीं करनी चाहिए; मैं इसे भी बहुत महत्त्वपूर्ण मानता हूं कि उसके कमांडर की हैसियत से मैं उसे जो भी आदेश देता हूं, उसके उत्तर में उसे "जी!" कहना चाहिए और यह कि जब तक वह ऐसी प्रतिक्रिया नहीं प्रकट करता, तब तक आदेश के सम्बन्ध में उसकी समझदारी स्वीकार नहीं करनी चाहिए।

यह सब कुछ बहुत महत्त्वपूर्ण है। हमने इसे नियम बना दिया था। फ़र्ज़ कीजिए ज़ेम्ल्यान्स्की घर पर किये जानेवाले काम का इनचार्ज था। वह दूसरे लड़के से कहता:

"निकोलाई, जाकर ज़रा मेरे लिए पेंसिल और काग़ज़ तो ले आओ।"

ग्रगर निकोलाई यह सुनकर केवल दौड़ पड़ता, तो जेम्ल्यान्स्की उससे कहता :

"तुम्हारा उत्तर क्या है?"

इस पर वह कहता :

"जी!"

यह बाहरी चुस्ती, नियमानुकूल ग्राचरण की यह भावना व्यवहार के ग्रन्दरूनी ग्रन्तर्य को भी स्थिर करती है। जेम्ल्यान्स्की ग्रौर निकोलाई दोनों शायद दिन के शेष समय गेंद-बल्ले का खेल ग्रथवा फ़ुटबाल एक साथ खेलते, परन्तु ठीक उसके बाद ही उन में एक कमांडर तथा दूसरा उसका मातहत होता। ग्रौर उनके सम्बन्धों को सुनिश्चित बाह्य रूप ग्रहण करना पड़ता था।

ग्रगर मैं किसी को सजा देता था, तो जब तक वह लड़का "जी!" नहीं कहता था, तब तक मैं यह नहीं समझता था कि उसने इसको स्वीकार कर लिया है।

व्यावहारिक सम्बन्धों में विनम्रता का यह व्यवस्थित ढंग बहुत ही उपयोगी बात है, क्योंकि इससे इच्छा-शक्ति गतिशील होती है, कार्य-कुशलता ग्रौर चुस्ती की भावना पैदा होती है, ग्रावश्यक व्यावहारिक सम्बन्धों को बल मिलता है ग्रौर दोस्ती, ग्रच्छे घनिष्ठ सम्बन्धों, स्नेह, सौहार्द ग्रौर प्रयोजन में विभेद करने की शिक्षा प्राप्त होती है।

मेरा ख़्याल है कि इसके बिना भी काम निकाला जा सकता है, परन्तु व्यावहारिक प्रशिक्षण का यह सर्वाधिक हितकर रूप है, व्यावहारिक सम्बन्धों का बाह्य रूप है। ग्रौर बाहरी रूप बहुधा स्वयं ग्रन्तर्य का निर्धारण करता है।

ग्रन्ततः यह ऐसी सामान्य, सहज नियमित बात हो जाती है, जैसे इससे भिन्न कोई बात हो ही नहीं सकती। सबसे छोटे बच्चों में ग्रभिवादन का प्रभाव इतना प्रबल हो जाता था कि कोई भी इसे खेल या मज़ाक़ की बात नहीं समझता था ग्रौर ज्योंही वे व्यावहारिक सम्बन्धों के क्षेत्र में प्रविष्ट होते थे, त्योंही सहजतः ग्रौर शीघ्रता से उनके व्यावहारिक दृष्टिकोण का प्रभाव भी पड़ता था।

एक लड़का मैदान में कोई बहुत ही दिलचस्प खेल खेलता होता। ड्यूटी पर तैनात कमांडर के पास से तेज़ी से गुज़रते हुए वह उसे कोई छोटा-मोटा ग्रादेश देते हुए सुनता। लड़का तत्काल सावधान होकर खड़ा हो जाता।

अगर कोई आम निश्चित शैली न हो, तो बाह्य व्यवहार के ये सभी नियम व्यर्थ हैं। यदि विद्यार्थियों को परिस्थिति भांपने की क्षमता, संयम, दायित्व, कार्यक्षमता, प्रबन्ध तथा आत्मविश्वास की शिक्षा नहीं दी जायेगी, तो सिर्फ़ अच्छा बाह्य व्यवहार लागू करने की बात खोखली बात होगी। यह औपचारिक विनम्रता, जो शायद कुछ-कुछ सैन्यीकरण से मिलती-जुलती है, परन्तु वस्तुतः जो युवा पायनियर आन्दोलन के सिद्धान्तों से आगे नहीं जाती, तभी अनिवार्य, उपयोगी और समुदाय के लिए शोभा है, जबकि इस समुदाय में कार्य की निश्चित शैली और निश्चित लहजा हो।

मैं इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता कि बाह्यतः एक अनाकर्षक समुदाय में कैसे कोई बच्चा रहना चाहेगा। मनोहरता जीवन का एक पहलू है, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। और इसके बावजूद भी हम शिक्षकगण बहुधा सौन्दर्यशास्त्र के प्रति शून्यवादी दृष्टिकोण अपनाते हैं।

सुरुचिपूर्ण व्यवहार की भांति एक पोशाक, एक कमरे, सीढ़ी और एक मशीनी औज़ार का सौंदर्य भी महत्त्वपूर्ण है। सौंदर्यशास्त्र के दृष्टिकोण से कौन-सा व्यवहार सुरुचिपूर्ण होता है? वही व्यवहार सुरुचिपूर्ण माना जाता है, जो आचारानुकूल हो, क्योंकि रीति अपने आप में उच्चतर संस्कृति की द्योतक है।

और इस प्रकार हमारे लिए एक अन्य परेशानी पैदा होती है: सौन्दर्यशास्त्र को विशिष्टताओं की परिणति, संकेत मानकर हम इसे स्वाभाविक रूप से शिक्षा का कारक मानने लगते हैं।

रुचिकर जीवन के लिए क्या बातें आवश्यक हैं, मैं उनकी सूची आपको नहीं दे सकता, परन्तु निश्चित रूप से जीवन आकर्षक होना चाहिए। एक बच्चे का आकर्षक जीवन और एक प्रौढ़ का रुचिकर जीवन – ये दोनों सर्वथा भिन्न बातें हैं। बच्चों की भावुकता का अपना ही ढंग है, उनकी भावनाओं की अभिव्यक्ति का अपना ही अन्दाज़ है। और एक बाल-समुदाय की वही विशेषता नहीं हो सकती, जो एक प्रौढ़ समुदाय की होती है।

उदाहरणार्थ, मनोरंजन को ही लीजिए। एक बाल-समुदाय में मनोरंजन की व्यवस्था होनी ही चाहिए। यदि खेल-तमाशा न हो, तो वह एक वास्तविक बाल-समुदाय नहीं है। और खेल से मेरा अभिप्राय केवल यह नहीं है कि एक लड़का फ़ुटबाल अथवा कोई अन्य खेल खेलता है, मेरे कहने

का अर्थ यह है कि वह अपने जीवन के प्रति क्षण कुछ खेलता ही रहता है, वह अपनी कल्पनाओं में कुछ ऊंची उड़ानें भरता है, मनोरंजक कल्पनाएं करता है, वह कुछ क्रियाशील होता है और जैसा है अपने को खेल में उससे बड़ा महसूस करता है। सिर्फ़ मनोरंजन करनेवाले समुदाय में बच्चे अपनी कल्पनाशक्ति को विकसित कर सकते हैं। और शिक्षक होने के नाते मुझे उनके साथ कुछ खेलना ही होगा। अगर मैं पढ़ाने, अपेक्षाएं रखने और अड़े रहने के अलावा और कुछ नहीं करता, तो मैं एक बाहरी तत्त्व हो जाऊंगा, हो सकता है कि यह आवश्यक हो, परन्तु फिर भी मैं उनके लिए अजनबी हो जाऊंगा। मेरे लिए एक शिक्षक के नाते कुछ खेलना अनिवार्य है और मैंने अपने सभी सहयोगियों से भी यही अपेक्षा की।

इस में कोई सन्देह नहीं है कि जब मैं आप लोगों के सम्मुख व्याख्यान दे रहा हूं, तो मैं एक भिन्न व्यक्ति हूं, परन्तु बच्चों के साथ रहने पर मैं अधिक प्रसन्न रहता हूं, अधिक हंसने-हंसानेवाली बातें करता हूं एवं ख़ूब ख़ुश रहता हूं और अनुग्रह अथवा इसी प्रकार की किसी अन्य भावना से प्रेरित होकर नहीं हंसता, बल्कि यह केवल सुखद और पर्याप्त रूप से भावनापूर्ण मुस्कान है। मुझे सिर्फ़ समुदाय पर हावी नहीं होना चाहिए, ख़ुशी के साथ शिक्षा प्रदान करने के लिए इसका सदस्य भी होना चाहिए। सुरुचिपूर्ण ढंग से मुझे उन्हें प्रभावित करना चाहिए और इस कारण मैं कभी एक बार भी अपने विद्यार्थियों के सम्मुख बिना पेटी से बंधी जर्सी अथवा बिना पालिश किया हुआ जूता पहनकर नहीं गया। मुझे भी निस्सन्देह अपनी प्रतिभा के अनुकूल चमकना था। मुझे भी समुदाय की भांति ख़ुश रहना चाहिए। मैंने कभी भी अपने चेहरे से चिन्ता की भावना नहीं प्रकट होने दी। मैंने अपने को इस प्रकार अभ्यस्त कर लिया था कि लड़के कभी यह भांप न पावें कि मैं किसी बात से चिन्तित या अस्वस्थ था।

दूसरी ओर मुझे फटकारने में भी सक्षम होना था। जिस लहजे में विद्यार्थियों से बातचीत करनी चाहिए, उस बारे में पिछले साल आपकी शिक्षाशास्त्रीय पत्रिका में मैंने एक लेख पढ़ा था। उस लेख में कहा गया था: एक शिक्षक को विद्यार्थी से शान्ति के साथ बातचीत करनी चाहिए। उसे इस प्रकार क्यों बातचीत करनी चाहिए? शान्ति के साथ क्यों? मुझे यक़ीन है कि वह इतना उबाऊ हो जायेगा कि विद्यार्थी शीघ्र ही उससे

नफ़रत करने लगेंगे। यह ठीक नहीं है, मेरा कहना है कि एक शिक्षक को प्रफुल्लित, सजग होना चाहिए, और यदि कुछ अनुचित बात हो, तो निश्चय ही उसे नाराज़ होना चाहिए, बहुत जोर से डांटना चाहिए, ताकि विद्यार्थी महसूस करें कि शिक्षक सचमुच बहुत क्रुद्ध है न कि वह उन्हें केवल शिक्षाशास्त्रीय उपदेश दे रहा है।

मैंने अपने स्टाफ़ के सभी सदस्यों से यही अपेक्षा की। मैंने उत्कृष्ट शिक्षकों को बिना किसी पश्चाताप के नौकरी से हटा दिया, गोकि उनका केवल यही दोष था कि वे सदैव उदासीन आवाज़ में शिक्षाशास्त्रीय उपदेश दिया करते थे। एक बाल-समुदाय में काम करनेवाले वयस्क व्यक्ति को अपनी भावनाओं को नियंत्रित करने और अपनी परेशानियों को अपने ही तक सीमित रखने की युक्ति मालूम होनी चाहिए।

एक समुदाय को बाहरी शोभा की भी आवश्यकता होती है। इसी कारण जबकि अभी हमारा समुदाय बहुत ग़रीब था, तो भी मैंने शुरु में ही छोटा नहीं, बल्कि अनुमानतः एक हेक्टर में फैली फूलों की क्यारियों सहित बड़ा पौधाघर निर्मित करवाया और व्यय की कोई परवाह नहीं की। और मैंने गुलाब तथा गुलदाउदी को लगाने पर ज़ोर दिया तथा कभी भी साधारण क़िस्म के फूल नहीं लगाने दिये। बच्चे और मैं फूलों को महत्त्व प्रदान करना पसन्द करते थे। और वस्तुतः हमने एक हेक्टर के क्षेत्र में फूल उगाये, असली सबसे अच्छे फूल उगाये। सोने के कमरों, खाने के कमरों, कक्षाओं, अध्ययन-कक्षों में और यहां तक कि सीढ़ियों पर भी गुलदस्तों से हंसते हुए फूल दिखाई पड़ते थे। हमने टिन काटकर बास्केट तैयार किए और उन्हें सीढ़ियों पर रख दिया। यह बहुत ही अच्छी सूझ थी। एक टुकड़ी को अधिक फूल लेने के लिए लिखित अनुमति प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं होती थी: जब फूल कुम्हला जाते थे, तो कोई पौधाघर में चला जाता था और एक या दो गमले उठा लाता था।

एक बाल-समुदाय में ये सभी फूल, स्वच्छ कमरे, साफ़ कपड़े और जूते बहुत आवश्यक हैं। जूते चमकदार होने चाहिए, अन्यथा सोचा जायेगा कि यह शिक्षा किस प्रकार की है? बच्चों को नियमित रूप से अपने दांत साफ़ करने चाहिए और जूतों पर पालिश करानी चाहिए। उनके कपड़ों पर धूल का एक कण भी नहीं होना चाहिए। सर के बाल संवारना नितान्त आवश्यक है। लड़के अपने बाल को किसी भी तरीक़े से संवारने के लिए स्वतंत्र

थे। इस नियम को लागू करने के लिए सफ़ाई आयोग का एक सदस्य कैंची लिये महीने में एक बार शयनागारों का चक्कर लगा आता था। अगर कोई अपना बाल नहीं संवारे होता, तो वह तत्काल कैंची से उसके बाल काट देता : यह व्यक्ति नाई की दुकान में जाकर ठीक से अपने बाल कटवाने के लिए विवश हो जाता था। इस ढंग को अपनाने से सहायता मिली और सभी लड़के बाल संवारने की बात पर समुचित ध्यान रखते थे।

सफ़ाई-सम्बन्धी इन सभी नियमों को बड़ी सख़्ती से लागू करना पड़ता था। द्ज़ेर्जीन्स्की कम्यून छोड़ने के छः महीने बाद मैं कीयेव से निरीक्षण के लिए वहां गया। सभी लोग दौड़ते हुए आये, उन्होंने मुझसे हाथ मिलाया और सामान्यतया मेरा अच्छा स्वागत किया। मैं शयनागारों को देखने गया। वहां कुछ चीज़ बिल्कुल ठीक नहीं थी : कमरे में धूल थी, एक गन्दा रूमाल मेरे सर्वोत्कृष्ट कमांडर यानोव्स्की की चारपाई के पास वाली मेज़ पर पड़ा हुआ था और जब मैंने उसका सन्दूक़ खोला, तो उस में गन्दी चीज़ों का पूरा ढेर दिखाई पड़ा। उस समय मैंने शान्त स्वर का इस्तेमाल नहीं किया, मैंने अपने कड़े स्वर में कहा : "यानोव्स्की को दस घण्टे की गिरफ़्तारी की सज़ा ; मैं आज किसी अन्य शयनागार का निरीक्षण नहीं करने जा रहा हूं, मैं कल सुबह देखने आऊंगा।" उन्होंने दूसरे दिन भोर में ही मुझे लाने के लिये कार ख़ार्कोव भेज दी और जब मैंने कमरों का निरीक्षण किया, तो मैंने धूल का एक कण भी नहीं पाया। मैंने उनसे पूछा : "इतना जल्दी तुम लोगों ने सफ़ाई कैसे कर ली?" उन्होंने उत्तर दिया : "हम सोये नहीं।"

बेशक मैं इस बात के बारे में वाक़िफ़ हूं कि मेरी अपेक्षाएं एक हैं और किसी दूसरे की और। यदि मैं इस प्रसंग में कम सख़्त होता, तो वातावरण और कार्य-शैली समाप्त हो गई होती। इन बातों को ध्यान में रखना पड़ता है। उदाहरणार्थ, जब पाठ शुरू होता है, तो सफ़ाई आयोग का ड्यूटी पर तैनात सदस्य शिक्षक से पूछता : "क्या आप हमारी कक्षा की सफ़ाई से ख़ुश हैं?" अध्यापक अपने को दुविधा में पाता : यदि वह यह कहता कि वह प्रसन्न है, तो सफ़ाई आयोग अनेक दोष ढूंढ़ निकालता : उस कोने में धूल जमी हुई है, नाख़ून गन्दे हैं, किसी की डेस्क पर हाल ही में छुरी से काटने का चिन्ह बना हुआ है। और इस प्रकार शिक्षक को मजबूरन कक्षा में अनिवार्य रूप से सफ़ाई की अपेक्षाएं करनी पड़ती थीं।

यदि कोई शिक्षक मैला-कुचैला कपड़ा पहने रहता, तो मैं उसे सबक़ शुरू करने नहीं देता। और इस कारण स्कूल जाते समय हम अपने सबसे अच्छे कपड़े पहनने के अभ्यस्त हो गये थे। मेरे पास भी जो सबसे अच्छा सूट था, उसे मैं पहनता था। हम सभी साफ़-सुथरे दिखाई पड़ते थे।

यह एक महत्त्वपूर्ण बात है। खाने की मेज़ को ही लीजिए। मोमजामा अच्छा और आसानी से साफ़ हो जाने के कारण उचित है; आप इस पर कुछ भी रख सकते हैं, इसे धो सकते हैं और फिर यह बढ़िया तथा साफ़ हो जाता है। परन्तु सफ़ेद मेज़पोश से ही किशोरों को क़ायदे से खाना खाने की शिक्षा प्राप्त हो सकती है, जबकि मोमजामा से उनकी आदत ख़राब हो जाती है। शुरू में मेज़पोश सदा गन्दा और धब्बेदार हो जाता है, परन्तु छः महीने में वह खाना खाने के बाद भी साफ़ बना रहेगा। आप जब तक बच्चों को सफ़ेद मेज़पोश नहीं देते, तब तक उन्हें खाने का ढंग नहीं सिखा सकते।

प्रत्येक छोटी-मोटी चीज़ में भी गंभीरता से हाथ डालना चाहिए, हर क़दम पर अनिवार्य रूप से स्वच्छता की अपेक्षा रखनी चाहिए। कोई भी लड़का पेंसिल को चाबकर नुकीली क्यों बनावे? एक पेंसिल को सदा चाकू से नुकीली बनाना चाहिए। निब पर जंग क्यों लगी है, दावात में मक्खी क्यों पड़ी हुई है? आपके दिमाग़ में जो अनेकानेक शैक्षणिक अपेक्षाएं पहले ही से हों, उन में इन छोटी-मोटी बातों को भी शामिल कर लीजिए। एक ही व्यक्ति के लिए यह सब कुछ करना बहुत मुश्किल है, परन्तु अगर पूरा समुदाय मदद करे और इन छोटी-मोटी बातों का महत्त्व भी समझे, तो यह काम आसानी से किया जा सकता है।

हम मुख्य दरवाज़े पर राइफ़ल लिये हुए एक लड़के को पहरे पर खड़ा रखते थे। वह अपना सबसे अच्छा सूट पहने रहता था। उसे इस पर ध्यान रखना पड़ता था कि प्रत्येक पांवदान पर अपने पांव साफ़ कर ले। पानी बरस रहा हो या धूप निकली हो, कोई भी व्यक्ति अपने पांव साफ़ किये बिना अन्दर नहीं जा सकता था। पहरा देनेवाला कम्यूनार्ड यह अच्छी तरह समझता था कि उसे क्यों यह नियम लागू करना पड़ता था: उसे स्वयं रोज़ कमरे को साफ़ करना होता था और वहां आनेवाले सभी व्यक्ति अगर ठीक से अपने पांव पोंछ लिया करते, तो वहां कम गर्द होती। कम्यूनार्डों को इस बात की याद दिलाने की ज़रूरत नहीं पड़ती। कभी-कभी आगन्तुक पूछ बैठते:

"मैं तो साफ़ पक्की सड़क से होकर ग्रा रहा हूं, पांव पोंछने की क्या जरूरत है?"

ग्रौर लड़के को उन्हें समझाना पड़ता :

"यह तो ठीक है, परन्तु फिर भी कुछ धूल तो लगी ही होगी।"

एक दूसरी छोटी बात – रूमाल को ही लीजिए। मेरा ख़्याल है कि यह बिल्कुल स्पष्ट है कि प्रत्येक दिन हरेक को साफ़ रूमाल देना चाहिए। परन्तु इसके बावजूद मैंने ऐसे बाल-सदनों को देखा है, जहां एक महीने में एक बार रूमाल बदला जाता है, दूसरे शब्दों में वे जान-बूझकर लड़कों को गन्दे चिथड़े से नाक साफ़ करने की बात सिखाते थे। परन्तु निश्चित रूप से इस पर बहुत कम व्यय होता है।

थूकदानी का ही प्रश्न है। निरोग रहने का एक साधन – हर कोने में थूकदानी होनी चाहिए। परन्तु किसी को थूकना ही क्यों चाहिए? लड़के भी यही कहा करते थे :

"क्या तुम थूकना चाहते हो? तब तुम ग्रस्पताल जाग्रो, तुम बीमार हो, स्वस्थ व्यक्ति कभी नहीं थूका करते।"

"परन्तु मैं धूम्रपान करता हूं।"

"यदि तुम धूम्रपान के ऐसे व्यसनी हो, तो शीघ्र ही सिगरेट पीना छोड़ दो, जो सच्चे सिगरेट पीनेवाले हैं, वे थूका नहीं करते।"

यदि लड़का थूकने की ग्रादत नहीं छोड़ता, तो उसे जबंदस्ती डाक्टर के पास ले जाकर उसकी स्वास्थ्य-परीक्षा करवाई जाती थी। डाक्टर लड़के को यह समझाते हुए कि यह प्रतिवर्ती क्रिया के ग्रतिरिक्त ग्रौर कुछ नहीं है। सामान्यतया यह ग्रादत छुड़ाने में सहायता प्रदान करता।

एक कोने में रखी थूकदानी यह संकेत करती है कि कहां थूकने की इजाजत है। ग्रौर सामान्यतया थूकदानी के पीछे की दीवाल गन्दी हो जाती है।

समुदाय के जीवन में छोटी-मोटी ये बातें ग्रनेक हैं ग्रौर उन्हीं से सुरुचिपूर्ण ग्रादतें बनती हैं। जो लड़का थूकता नहीं ग्रौर नाक को उंगली से साफ़ नहीं करता, वह एक ग्रच्छी ग्रादतवाला लड़का माना जाता है। इन छोटी बुनियादी ग्रावश्यकताग्रों की पूर्णतया पूर्ति होनी चाहिए ग्रौर इसके ग्रतिरिक्त इन पर सम्यक् रूप से ध्यान देना चाहिए तथा कुछ सामान्य सिद्धांतों से इनका तालमेल बिठाना चाहिए। इस प्रकार की ग्रनेक छोटी-मोटी बातें हैं, जिनकी संख्या नहीं गिनाई जा सकती, परन्तु वे सुखद,

समुचित ढंग से पूरी की जा सकती हैं और सामान्यतया समुदाय की प्रगति से जोड़ी जा सकती हैं।

मैं इस विषय के साथ ही अपना व्याख्यान समाप्त करूंगा। मुझे पक्का विश्वास है कि मेरे सहयोगियों और मैंने जो कुछ किया, उसे सोवियत संघ में अनेक व्यक्ति करते हैं। अन्तर केवल यह है कि सब से यही अपेक्षा रखने की मेरी आकांक्षा है, मैं इन सामान्य नियमों को, अपने निजी नियमों को नहीं, बल्कि उन नियमों को, जिन्हें सोवियत संघ में अनेकानेक शिक्षकों ने स्वयं अपने लिए निर्धारित किया है, समझाने की उत्कण्ठा महसूस करता हूं।

इन नियमों को क्रमबद्ध करने की भी उत्सुकता मैं महसूस करता हूं। मैंने ख़ुद अपने कई स्कूलों को बहुत अच्छा काम करते हुए देखा है, हमारे देश में अपने ही केन्द्र, अपनी शैली और अपनी ही चारुता के साथ भव्य रूप में संगठित उत्कृष्ट समुदाय हैं। मेरा ख़्याल है कि इस अनुभव को क्रमबद्ध करने की आवश्यकता है। यदि इन बीस वर्षों का यह प्रचुर सोवियत शैक्षिक अनुभव व्यर्थ चला जाये, तो यह खेदजनक बात होगी। इसी कारण मैं यथासंभव अपने अनुभवों को लिपिबद्ध करना अपना कर्त्तव्य मानता हूं। शायद यह बहुत कुछ अभी अस्पष्ट है और इसमें बहुत-सी भूलें हैं। परन्तु सोवियत शैक्षणिक अनुभव को लोकगम्य बनाना एक उद्देश्य है, जिसे पूरा करना चाहिए।

मेरा विचार है कि इस अनुभव का निष्कर्ष निकालना और सर्वोत्कृष्ट सोवियत शैक्षिक संस्थाओं के तरीक़ों को प्रचलित करना आपका, मेरा मतलब है सार्वजनिक शिक्षा के क्षेत्र में काम करनेवाले व्यक्तियों का विशेष कर्त्तव्य है।

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन इस पुस्तक के अनुवाद और इसकी डिज़ाइन के बारे में आपके विचार जानकर आपका अनुग्रहीत होगा। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। कृपया हमें इस पते पर लिखिए :

प्रगति प्रकाशन
२१, ज़ूबोव्स्की बुलवार
मास्को, सोवियत संघ